

# बारह कहानियां

सत्यजित राय



ebookspdf.in

# बारह कहानियां

सत्यजित राय



राजपाल एण्ड सन्ज़

**Collect more e-books**



A lot collection of Hindi e-books

Please click the link below-



**[www.ebookspdf.in](http://www.ebookspdf.in)**

---

## क्रम

सेन्टोपस की भूल	7
बंकू बाबू का मित्र	26
विपिन चौधरी का स्मृतिग्रम	38
दो जादूगर	48
अनाथ बाबू का मय	62
शिवू और राधास की कहानी	74
टेरोडैकटिल का अंडा	89
घमगादड़ की विभीषिका	103
पटल बाबू फिल्मस्टार बने	114
नील कोठी का आतंक	128
फेलूदादा की जासूसी	142
रूसास चौधरी का पत्थर	169

## सेंटोपस की भूख

कुंडी हिलाते ही मुंह से अपने आप एक ऊब भरा शब्द निकल आया। तीसरे पहर से अब तक चार बार हो चुका; आदमी काम करे तो कैसे करे? कार्तिक भी जो बाजार गया है, अब तक लौटने का नाम नहीं ले रहा है।

लिखना बन्द करके मुझे खुद ही उठना पड़ा।

दरवाजा खोलते ही मैं अवाक् रह गया। अरे, यह तो कांति बाबू हैं!

मैंने कहा, “कितने आश्चर्य की बात है! आइए, आइए....”

“पहचान लिया?”

“पहचान में जैसे नहीं आ रहे हैं, ऐसा ही लगता है।”

उन्हें मैंने अन्दर के कमरे में लाकर बिठाया। सचमुच, दस बरसों में ही कांति बाबू के चेहरे में ऐसा परिवर्तन हुआ है जिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। मैंने 1950 ईस्वी में इन्हीं को एक आतिशी शीशों के साथ आसाम के जंगलों में चक्कर काटते देखा है। उन दिनों ही उनकी उम्र बीस वर्ष थी। लेकिन एक भी बाल नहीं पका था। उस उम्र में भी उनमें मैंने जिस उत्साह और ऊर्जा की बानगी देखी थी, वह उत्साह या ऊर्जा युवकों में भी नहीं दीखती है।

“देख रहा हूँ कि तुममें अब भी ऑर्किड का शौक है।”

मेरे कमरे की खिड़की पर गमले में एक आर्किड था जिसे कांतिबाबू ने ही दिया था। अब भी मुझे शौक है, यह कहना गलत ही होगा। कांतिबाबू ने ही मेरे अन्दर पेड़-पौधों के प्रति एक तरह का कुतूहल जगा दिया था। उसके बाद जब वे देश से बाहर चले गए, वह शौक अपने आप खत्म हो गया—ठीक वैसे ही जैसे दूसरी-दूसरी दिलचस्पिया भी समाप्त हो गईं। अब लिखने-पढ़ने का काम ही लेकर ध्यस्त रहता हूँ। आजकल समय बदल गया है। किताबें लिखने से आजकल पैसा मिलता है। तीन ही पुस्तकों की बिज्जी से मेरी गृहस्थी का खर्च एक तरह से चल जाता है। इतना झरूर है कि मेरे परिवार से सिर्फ तीन ही व्यक्ति हैं—मैं, मेरी विधवा माँ और नौकर। यों नौकरी भी करता हूँ मगर तय किया है कि

पुस्तको से जब अच्छी आय होने लगेगी, नौकरी छोड़ दूंगा और बेवक लिखने-पढ़ने का ही काम करूंगा। इसके अलावा लिखने-पढ़ने के मिन-सिले में देश-घ्रमण।

कातिबाबू बंठे-बंठे ही अचानक सिहर उठे।

मैंने पूछा, "ठड लग रही है? खिडकी बन्द कर दूं? अब कलकत्ते में सरदी..."

"नही-नही; आजकल बीच-बीच में ऐमा ही होता है। अब उग्र हो हो चुकी है न? इन्द्रिया अब ठीक से..."

मेरे दिमाग में बहुत सारे प्रश्न जग रहे थे। कातिक लौटकर आ चुका था। उसे चाय लाने को कहा।

कातिबाबू बोले, "ब्यादा देर तक नहीं बंठूंगा। तुम्हारा एक उपन्यास कहीं से मिल गया था। तुम्हारे प्रकाशक से ही पता पूछकर यहाँ आया हूँ और वह भी एक सास ज़रूरत से।"

"कहिए। तब हाँ,..." उसके पहले, यानी बहने का मतलब है कि आप कब देश लौट कर आए, कहा थे, अभी कहा रइ रहे हैं, यह सब जानने की इच्छा हो रही है।"

"लौटे दो वरस हो चुके। अमेरिका में था। अभी बारासात में हूँ।"

"बारासात में?"

"एक मकान खरीद लिया है।"

"बगीचा है?"

"है।"

"और ग्रीन हाउस?"

कातिबाबू के पहले वाले मकान के बगीचे में एक बड़ा ही खूबसूरत ग्रीन हाउस या काच का घर था, जिसमें वे अपने दुप्राप्य पेड़-पौधों को बड़े यत्न के साथ रखते थे। वहाँ मैंने इतने अद्भुत पेड़-पौधे देखे थे, जिसकी कोई सीमा नहीं। एक ही आर्किड में साठ-पैंसठ क्रिस्म के पौधे थे। उसके फूलों की ही विचित्रताओं का उपभोग करते-करते पूरा दिन गुज़ार दिया जा सकता था।

कातिबाबू कुछ देर सोचने के बाद फिर बोले, "हा है। ग्रीन हाउस भी है।"

"फिर दस वरसों के दरमियान आपके पेड़-पौधों के शौक में कोई बमी नहीं आई है?"

"नहीं।"

काति बाबू मेरे कमरे की उत्तरी दीवार की ओर ताक रहे थे। यह

देखकर मेरी भी आँखें उस ओर गईं। वहाँ रॉयल बेंगल टाइगर की एक खाल सिर के साथ झूल रही थी।

मैंने पूछा, “पहचान रहे हैं ?”

“यह तो वही शेर है न ?”

“हा। वह देखिए, कान के पास बुलेट का दाग तक है।”

“तुम्हारा निशाना कमाल का था। अब भी उसी तरह अचूक निशाना साध लेते हो ?

मालूम नहीं। बहुत दिनों से परीक्षा नहीं की है। पांच-सात बरसों से शिकार करना बन्द कर दिया है।”

“क्यों ?”

“बहुत ही शिकार कर चुका हूँ। अब उम्र काफी हो चुकी है, इमीलिए जीव-हत्या...”

“मांम-मछली खाना छोड़ दिया है ? अब निरामिष खाना खाते हो ?”

“नहीं।”

“फिर ? यह तो केवल हत्या ही है। चाहे शेर का शिकार करो या मगरमच्छ का या भैंसे का। खाल निकलवा कर उनका सिर स्टाफ कराके या सींगों को भाउंट कराकर दीवारों में टांग कर रख दो। इससे कमरे की शोभा बढ़ेगी। लोग आएंगे तो चिह्नक उठेंगे, कुछ लोग शावाशी देंगे। तुम्हें भी अपनी जवानी के साहसिक कार्यों की याद आएगी। और तुम हो कि मुर्गी, बकरे, रोहू, सिंघी मछलिया चबा-चबाकर हजम कर रहे हो। तुम न केवल जीव की हत्या करते हो, बल्कि उन्हें हजम कर बैठे हो।

“कहो ठीक कह रहा हूँ या नहीं ?”

अब क्या कहूँ ! इनकार नहीं कर सका।

कार्तिक चाय ले आया।

कांति वाबू कुछ देर तक गंभीर होकर बैठे रहे, फिर अचानक सिहर-कर चाय के प्याले को हाथ में उठाया।

एक घूंट लेकर बोले, “एक प्राणी से दूसरे प्राणी का भोज्य और भक्षक का सम्बन्ध सृष्टि के प्रारम्भ से ही चला आ रहा है। उस छिपकली को देखो जो दुबककर बैठती है।”

देखो, किंग कम्पनी के कैलेंडर के ठीक ऊपर ही एक छिपकली अपने से एक इंच की दूरी पर बैठे फतिगे की ओर टकटकी लगाकर देख रही है। उसके बाद आहिस्ता-आहिस्ता कीड़े की ओर बढ़े और अचानक तीर की तरह एक ही झपट्टे में उसे अपने मुँह के अन्दर डाल लिया।

कान्ति बाबू बोले, “बस ! अब ठिनर शुरू हो गया । सिर्फ खाना और खाना । खाना ही सब कुछ है । दोर आदमी खाता है, आदमी बकरा खाता है और बकरा क्या नहीं खाकर हजम कर जाता है । सोचने पर इसे तुम जंगलीपन कहोगे या आदिम रुचि या हिता का भाव ? लेकिन नियम यही है । इसके अलावा कोई गति नहीं । अगर ऐसा न ही तो मृष्टि रक जाए ।”

“निरामिय खाना इसकी तुलना में बहुत ही...बो है ?”

“तुममें किसने कहा ? साग-सब्जी में प्राण नहीं है ?”

“सो तो है ही ! जगदीश बोस और आपकी बघोलत यह बात हमेशा याद रहती है । तब हां, मेरे कहने का मतलब है कि ठीक उस प्रकार के प्राण नहीं है । पेड़-पौधे और जीव-जन्तु क्या एक ही हैं ?”

“तुम्हारी राय में दोनों में बहुत बड़ा फर्क है ?”

“फर्क नहीं है ? उदाहरण के तौर पर यही बात ले सकते हैं—कि पेड़ पैदल नहीं चल सकता है, बोल नहीं सकता है, मन का भाव प्रकट नहीं कर सकता है—यहा तक कि उनमें 'मन' नामक कोई वस्तु है, इसे भी समझने का कोई उपाय नहीं है । है न यही बात ?”

कान्ति बाबू कुछ कहना चाहते थे पर उन्होंने बताया नहीं ।

प्राय वगैरह समाप्त कर वे कुछ देर तक सिर झुकाए बैठे रहे । अन्त में उन्होंने मेरी ओर देखा । उनकी दृष्टि में करुणा और संशय की छाप देखकर मेरा मन एक प्रकार की आशका से पूर्ण हो उठा । सचमुच, भले आदमी के चेहरे पर कितना परिवर्तन आ गया है ।

कान्ति बाबू दृढ़ता के साथ बोले, “परिमल, मेरा मकान यहा से इक्कीस मील दूर है । अठावन वर्ष की उम्र में मैंने जब छुट चक्कर काट-काटकर तुम्हारा पता लगाया है, तो निश्चय ही इसका कोई न कोई कारण है । यह बात समझ रहे हो ? या चटपटी कहानियाँ लिखते-लिखते अपनी बुद्धि खो बैठे हो ? सोचते होगे, यह आदमी एक खास तरह का है । कोई न कोई गप छेड़ देता है ।”

शर्म से मेरा माथा झुक गया । कान्ति बाबू ने गलत नहीं कहा था । उनको अपनी एक कहानी का पात्र बनाने की कल्पना मेरे मन में उमड़-धुमड़ रही थी ।

उन्होंने कहा, “तुम्हारे लेखन में अगर जीवन का संस्पर्श न रहेगा तो सब कुछ खोखला ही रह जाएगा । और, यह भी याद रखो कि तुम कल्पना का चाहे जितना ही ताना-बाना क्यों न बनी, यथायथ से वह कभी अधिक विस्मयकारी नहीं हो सकता ।...खैर, मैं तुम्हें उपदेश देना नहीं चाहता । सच बताऊँ, मैं तुमसे मदद मागने आया हूँ ।”



कांति बाबू ने फिर से घोर की ओर ताका। भले आदमी मुझ से किस तरह की मदद चाह रहे हैं ?

तुम्हारे पास बन्दूक है या उसे तुमने बिदा कर दिया है ?

मैंने चौककर उनकी ओर देखा। वे बन्दूक के धारे में पूछताछ क्यों कर रहे हैं ?

मैंने कहा, "है। तब हो सकता है कि मोर्चा लग गया हो। लेकिन आप यह बात क्यों पूछ रहे हैं ?"

"कल बन्दूक लेकर मेरे घर पर आ सकते हो ?"

मैंने दुबारा उनकी ओर ताका। नहीं; उनकी आंखों में विनोद का कोई चिह्न नहीं है।

"सिर्फ बन्दूक ही नहीं, गोली की भी जरूरत पड़ेगी।"

कांति बाबू के अनुरोध के प्रत्युत्तर में क्या कहूं, तत्काल मेरी समझ में नहीं आया। एक बार मुझे लगा कि हो सकता है, उनकी बातों में नहीं समझ पा रहा हूं या हो सकता है कि इनका दिमाग खराब हो गया हो। मनमौजी आदमी हैं। बात ऐसी न होती तो कोई आदमी अपना जीवन बरबाद कर इस तरह विचित्र पेड़-पौधों के लिए यीरान जंगलों की खाक छान सकता है ? मैंने कहा, "बन्दूक लेकर जाने में मुझे आपत्ति नहीं है। तब हा, कारण जानने के लिए मन में बड़ा ही कौतूहल पैदा हो रहा है। आपके इलाके में जीव-जन्तुओं या चोर-डाकुओं ने उपद्रव करना शुरू कर दिया है ?"

कांति बाबू ने कहा, "जब तुम आओगे, यह सब बात बताऊंगा। हो सकता है बन्दूक की जरूरत न भी पड़े। और, अगर कहीं कोई जरूरत आ भी गई तो तुम किसी ऐसे अपराध में नहीं फसोगे जिसके कारण तुम्हें दंड भुगतना पड़े।"

कांति बाबू उठकर खड़े हो गए। उसके बाद मेरे पास आकर उन्होंने मेरे कंधे पर हाथ रखा और कहा, "तुम्हारे पास इसीलिए आया हूं कि आखिरी बार मैंने तुम में जो कुछ देखा था, उससे मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि तुम में भी एक नए प्रकार के अनुभव के प्रति व्याकरण है। इसके अलावा, पहले भी मैं बहुत कम आदमियों से सम्पर्क रखता था और अब एक तरह से कहा जा सकता है कि सम्पर्क है ही नहीं। मेरे जाने-पहचाने इने-गिने लोगों में से तुम एक ऐसे व्यक्ति हो, जिसमें कुछ ऐसे गुण हैं, जो औरों में नहीं हैं।"

अतीत के साहसिक कार्यों की गन्ध से मेरी शिराओं में जो एक खास किस्म की उत्तेजना प्रवाहित होने लगती थी, आज इस क्षण-विशेष में मैंने उस उत्तेजना का छोड़ा-सा अंश अपने अन्दर महसूस किया।

मैंने कहा, "कहां जाना है, कैसे जाना है अगर इसे बताने का कष्ट करें..."

"बता रहा हूँ। जमीर रोड से तुम्हें सीधे बारासात स्टेशन पहुंचना है। वहां किसी भी आदमी ने मधु मुरली के तालाब के बारे में पूछ लेना। वह स्थान स्टेशन से चार मील की दूरी पर है। उमी तालाब के पास एक पुरानी टूटी-फूटी नील कोठी है। उसके पान ही मेरा मकान है। तुम्हारे पास गाड़ी है न?"

"नहीं। लेकिन मेरे एक मित्र के पास है।"

"वह कौन है?"

"अभिजित। कॉलेज में हम दोनों सहपाठी रह चुके हैं।"

"किस तरह का आदमी है? मैं उसे पहचानता हूँ?"

"शायद आप उसे नहीं पहचानते हैं। लेकिन वह भला आदमी है। यानी अगर आपके कहने का मतलब विश्वसनीयता है तो हि इज ऑल राइट।"

"ठीक है। उसे भी अपने साथ ले लेना। मगर आना ही है। यही कहना काफी है कि बहुत ही जरूरी काम है। तीसरे पहर तक आ जाने की कोशिश करो।"

मेरे घर में टेलीफोन नहीं है। सड़क के मोड़ पर 'रिपब्लिक केमिस्ट' है, वही से अभिजित को फोन किया। "अभी तुरन्त चले आओ।" मैंने कहा, "बहुत ही जरूरी बात है।"

"तुम्हें अपनी नयी कहानी सुनानी है न? मगर सुनते ही मैं फिर नौद में खो जाऊंगा।"

"अरे, नहीं-नहीं। दूसरा ही काम है।"

"बात क्या है? इतने धीरे-धीरे क्यों बोल रहे हो?"

"एक बहुत ही अच्छे मास्टिक<sup>1</sup> के बच्चे का पता चला है। आदमी मेरे घर पर बैठा हुआ है।"

बिना कृते का लोभ दिखाए अभिजित को आजकल घर से बाहर निकालना मुश्किल है। पाचों महादेशों के ग्यारह जाति के कुत्ते अभिजित के केनल में हैं। उनमें से तीन उन्हें बतौर पुरस्कार मिले हैं। पाच वर्ष पहले यह बात नहीं थी। आजकल कुत्ता ही उसके लिए, ध्यान, योग, तप

1. एक प्रकार का बलिष्ठ कुत्ता

सब कुछ हो गया है।

कृतो के प्रति प्रेम रहने के अलावा अभिजित में एक और दूसरा गुण यह है कि मेरी बुद्धि और विवेचन के प्रति उसमें पूर्ण आस्था है। मेरे प्रथम उपन्यास की पांडुलिपि जब प्रकाशको को पसन्द नहीं आई तो अन्त में अभिजित ने उसे प्रकाशित करने के लिए आर्थिक सहायता दी थी। उसने कहा था : 'मेरी समझ में यह सब आता नहीं है। लेकिन तुमने जब लिखा है, बिल्कुल कूडा-कचरा हो ही नहीं सकता। प्रकाशक ही बेवकूफ हैं।' बहरहाल उस पुस्तक की खपत अच्छी तादाद में हुई थी और मेरा नाम भी फँला था। इसका नतीजा यह हुआ कि अभिजित की आस्था मेरे प्रति और भी अधिक दृढ़ हो गई।

मास्टिफ के बच्चे के बारे में बिलकुल झूठी बात होने के कारण मुझे डांट-फटकार सुननी थी। उसने मुझे डाटा-फटकारा भी लेकिन असली प्रस्ताव मान लिए जाने के कारण डांट-फटकार का असर खत्म हो गया।

अभिजित ने उत्साह के साथ कहा, "बहुत दिनों में आउटिंग में जाना न हो पाया है। सोनारपुर झील में स्नाइप-सूटिंग<sup>1</sup> के लिए जाना हमारी अंतिम यात्रा थी। मगर वह आदमी है कौन? बात क्या है? जरा विस्तार से बताओ न प्यारे।"

"उन्होंने ही जब विस्तार के साथ नहीं बताया था तो मैं कैसे बता सकता हूँ? क्या हर्ज है अगर थोड़ा रहस्य रहे ही। मजा आ जाएगा। कल्पना की लंबी-लंबी उड़ानें भरने का यही तो मौका है।"

"अरे, वे सज्जन कौन हैं, यही बताओ न!"

"कांति चरण चटर्जी। समझ में कुछ आया? किसी ज़माने में स्कॉटिश चर्च कॉलेज में कुछ दिनों तक वनस्पति शास्त्र के प्रोफेसर के पद पर थे। प्रोफेसरी छोड़कर दुष्प्राप्य पेड़-पौधों की खोज में दौड़-धूप करते थे, उनके सम्बन्ध में रिपोर्ट भेजते थे, लेख लिखते थे। उन्होंने पेड़-पौधों का खासा अच्छा संग्रह किया था—खासतौर से आर्किडो का।"

"तुममें कैसे जान-पहचान हुई?"

"आसाम के केजी रंगा जंगल के डाक बंगले में। मैं शेर के शिकार की टोह में था और वे नेपेनयिस की खोज कर रहे थे?"

"किसी चीज की खोज कर रहे थे?"

"नेपेनयिस की। वॉटोनिकल नाम है। सीधी भाषा में इसे पिचर प्लांट या कलशबूक्ष कह सकते हैं। यह आसाम के जंगलों में मिलता है।

कीड़ों को पकड़कर खा जाता है। मैंने खुद इस बूढ़े को नहीं देखा है। इस बारे में कांति बाबू से ही सुना था।”

“कीड़े-मकोड़े खाने वाला ? पेड़ कीड़े-मकोड़े खाता है ?”

“लगता है, तुमने वनस्पतिशास्त्र नहीं पढ़ा है।”

“नहीं।”

“किताबों में मैंने उसकी तसवीर देखी है। अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है।”

“फिर ?”

“फिर क्या ?” उन्हें वह पेठ मिला था या नहीं, मुझे इस बात की जानकारी नहीं है, क्योंकि मैं शिकार करके लौट आया था और वे वहीं रह गए थे। मैं तो इसीलिए डर रहा था कि कहीं भले मानस को जीव-जन्तु या कीड़े-मकोड़ों से जान न गवाना पड़े। पेड़-पौधों के नशे में जगह-जगह की खाक छानते रहते थे। मैं जब लौटकर कलकत्ता आया, उनसे दो-चार बार से अधिक भेंट मुलाकात नहीं हुई। लेकिन वे मुझे अक्सर याद आते रहते थे क्योंकि उन दिनों मुझ पर भी आर्किड का नशा सवार था। मुझ से उन्होंने कहा था कि वे अमेरिका से कुछ उम्दा किस्म के आर्किड लाकर मुझे देंगे।

“अमेरिका ? वे अमेरिका से हो आए हैं ?”

“विलायत के किसी वनस्पतिशास्त्रीय जनरल में उद्भिद के सम्बन्ध में उनका एक लेख छपा था और उस लेख के कारण उस देश में उनका नाम चारों तरफ फैल गया। उद्भिद वैज्ञानिकों के एक सम्मेलन में योगदान करने के लिए उन्हें अमेरिका से आमंत्रित किया गया। यह बात उन्नीस सौ इक्यावन या बावन की है। उसके बाद यह पहली बार उनसे मुलाकात हुई है।”

“इतने दिनों तक वे वहाँ क्या करते रहे ?”

“मालूम नहीं। तब हाँ, उम्मीद है कि कल मालूम हो जाएगा।”

“उनके दिमाग का कहीं कोई कल-पुर्जा गड़बड़ा तो नहीं गया है ?”

“तुम्हारे दिमाग के कल-पुर्जे से ज्यादा नहीं। तुम्हें कुत्ते पालने का शौक है और उन्हें पेड़-पौधे लगाने का”...

अभिजित की स्टैंडर्ड गाड़ी से हम जसौर रोड पकड़कर बारासात की ओर जा रहे हैं।

हम कहने का मतलब है—अभिजित और मेरे अतिरिक्त और प्राणी

हमारे साथ है और वह है अभिजित का कुत्ता 'बादशाह'। यह मेरी ही गलती थी। मुझे समझ लेना चाहिए था कि मेरे न कहने पर अभिजित अपने ग्यारह कुत्तों में से किसी-न-किसी को अपने साथ लाएगा ही।

'बादशाह' रामपुरी हाउंड की नस्ल का है। बादाभी रंग का, बड़ा ही रोबीला। गाड़ी के पिछले हिस्से को अकेले ही दखलकर पसर कर बैठा है और खिड़की से मुंह बाहर निकालकर दिगंतव्यापी धान के खेतों के दृश्यों का उपभोग कर रहा है। बीच-बीच में गांव के लावारिस कुत्ते जब दीख जाते हैं, बादशाह अपने मुंह से अवज्ञामूचक शब्द निकालने लगता है।

बादशाह को अभिजित के साथ देखकर जब मैंने आपत्ति की तो उसने मुझ से कहा, "तुम्हारी बहादुरी पर भरोसा न रहने के कारण ही उसे अपने साथ ले आया हूँ। इतने दिनों से तुमने बन्दूक छुई तक नहीं। अगर किसी मुसीबत में फंस गए तो अन्ततः बादशाह ही बहादुरी दिखाएगा। उसमें असाधारण ध्यान-शक्ति है और उसके साहस के बारे में कुछ कहना ही नहीं।"

कान्ति बाबू के घर की तलाशने में किसी प्रकार की असुविधा नहीं हुई। हम लोग जब पहुँचे, तब दिन के ढाई बज रहे थे। फाटक के अन्दर घुसने के बाद, थोड़ा-सा फासला तय करते ही बंगलानुमा एकमजिला मकान है। मकान के पिछवाड़े में, थोड़ी-सी खाली जगह है और उसके बाद एक विशाल प्राचीन शिरीषवृक्ष है। उस शिरीषवृक्ष के पास ही एक काफी बड़ा कारखानानुमा टीन के छाजन का घर है। मकान के सामने, सड़क की विपरीत दिशा में बगीचा है और बगीचे के बाद एक लम्बी टीन की छाजनदार जगह में काँच के बक्कों की एक कतार है।

कान्ति बाबू ने हमारा स्वागत-सत्कार किया लेकिन ज्यो ही उनकी नज़र बादशाह पर पड़ी उनकी पेशानी पर बल पड़ गए।

"यह प्रशिक्षित कुत्ता है?" उन्होंने पूछा।

अभिजित ने कहा, "मेरी हर बात का पालन करता है। मगर पास में ऐसे कुत्ते मिल जाएँ जो प्रशिक्षित न हों तो यह क्या कर बैठेगा, कहना मुश्किल है। आपके यहाँ कोई कुत्ता...?"

"नहीं। कुत्ता नहीं है। मगर अभी उसे बैठक की उस खिड़की की सलाख में बांध दें।"

अभिजित ने मेरी ओर एक कटाक्ष डाला और आंख मटकते हुए एक आज्ञाकारी बालक की तरह कुत्ते को खिड़की से बांध दिया। बादशाह ने दो-चार बार आनाकानी की और फिर चुप हो गया।

हम जब सामने की बेंच की कुरसियों पर बैठ चुके तो कान्ति बाबू ने

प्रकृति के इस प्रकार का आश्चर्य, इस प्रकार का बीभत्स फंदा मैं इसके पहले कभी नहीं देगा था।

अभिजित ने रुधे स्वर में पूछा, "कीड़ा पत्ते पर ही चंठेगा, इसकी कोई गारंटी है?"

कांति बाबू ने कहा, "जरूर है। पीछे से इस तरह की मछ निकलती है जो कीड़े को अपनी ओर आकृष्ट करती है। इसे वेनस फ्लाई ट्रैप (Venus Fly Trap) कहते हैं। मध्य अमेरिका से मंगाया है। बनस्पति-शास्त्र की पुस्तक में इसका उल्लेख है।"

मैं अचम्भे में आकर फतिमे की हातत गोर से देर रहा था। शुरू में कुछ देर तक वह उटपटाता रहा। उसके बाद वह बिलकुल निर्जीव हो गया। पत्ते का दयाव श्रमण: बढ़ता हुआ मालूम पड़ रहा था। छिपकली की तुलना में यह पौधा कम हिंसक नहीं था।

अभिजित ने फीकी हसी हसकर कहा, "मुनो जी, ऐसा एक पौधा मेरे घर में रहता तो कीड़े-मकोड़ों से बहुत-कुछ राहत मिलती। तिलचट्टे की बजह से डी० टी० टी० पाउडर छिड़कने की जरूरत नहीं पड़ती।"

कांति बाबू ने कहा, "यह पौधा तिलचट्टा हजम नहीं कर पाएगा। इसके अलावा इसके पत्तों का आमतन भी छोटा है। तिलचट्टे के लिए दूसरा ही पौधा है। यह उस तरफ रहा।"

निकट के बक्के के सामने जाकर देखा, लिलि की तरह लम्बे-लम्बे पत्तों वाला एक पौधा है। हरेक पत्ते के अग्रभाग में एक-एक डबकनदार यँलीनुमा वस्तु लटकी हुई है। इसकी तसबोर याद थी, इसलिए पहचानने में देर नहीं हुई।

कांति बाबू ने कहा, "इसे नेपेनथिम या पिचर प्लांट कहते हैं। इसके खाद्य की मात्रा बहुत अधिक होती है। शुरू-शुरू में जब यह पौधा मिला, तब उम थैली में एक बिडिया चिपटी हालत में पड़ी थी।"

"बाप रे बाप!" अभिजित की यथास्थिति में धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा, "अभी यह क्या राना राना है?"

"तिलचट्टा, तिलली, फतिमे यगैरह। बीच में मेरी चूहादानी में एक चूहा फंस गया था। उसे भी खिलाकर देखा था, आपत्ति नहीं की। तब हाँ, गुरुणाक के फलस्वरूप ये पौधे कभी-कभी मर जाते हैं। बहुत लालची होते हैं न! किस समय भोजन बरदाशत होगा, इसका अन्दाज नहीं रहता है।"

मेरा आश्चर्य धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था, इसलिए एक बक्के से दूसरे बक्के के पास जाकर पौधों का निरीक्षण करने लगा। बटरवार्ट, मनड्यू, ब्लडरवार्ट, ऐरजिया—इन तमाम पौधों की तसबीरें पहले ही देख चुका

हैं। यही वजह है कि उन्हें कमोवेश पहचान सका। लेकिन बाकी सब बिलकुल नये थे, आश्चर्य में डालने वाले, अविश्वसनीय। कांति बाबू ने लगभग बीस प्रकार के मासाहारी पौधों का संग्रह किया है। उनमें से कुछ ऐसे हैं जो दुनिया के किसी संग्रहालय में नहीं मिलते हैं।

इनमें जो सबसे सुन्दर पौधा—सनड्यू—है, उसके छोटे-छोटे पत्तों के चारों ओर पतले और लम्बे रोओं के अग्रभाग में पानी की बूँदें झलमला रही हैं।

एक घागे के छोर में इलायची के आकार के जैसा मांस का एक टुकड़ा लटकाकर कांतिबाबू उस घागे को धीरे-धीरे पत्ते के निकट ले गए। कि देखा, तमाम रोए एक साथ लुब्ध मुद्रा में मांस के टुकड़े की तरफ खड़े हो गए।

अपना हाथ हटाकर कांति बाबू ने कहा, “मांस का टुकड़ा मिल जाता तो प्लाइटिंग की तरह उसको भी जोरों से दबोच लेता। उसके बाद जो कुछ पुष्टिकारक पदार्थ मिलता उसे चूसकर, बेमतलब के हिस्से को छोड़ देता। इसके खाने के तौर-तरीके और हमारे खाने के तौर-तरीके में कोई अन्तर नहीं है।”

हम लोग छाजन से निकलकर बगीचे में आए।

शिरीष वृक्ष की छाया लम्बी होकर बगीचे में लेटी थी। घड़ी की तरफ देखा, चार बज रहे थे।

कांतिबाबू ने कहा, “इसमें से ज्यादातर पौधों के सम्बन्ध में तुम्हें वनस्पतिशास्त्र की पुस्तकों में उल्लेख मिलेगा। तब हां, मेरा जो सबसे आश्चर्यजनक संग्रह है, उसके विषय में अगर मैं न लिखूँ तो किसी भी पुस्तक में इसका उल्लेख नहीं मिल सकता है। उसी के लिए आज तुम लोगों को यहाँ बुलाया है। चलो, परिमल ! चलिए अभिजित बाबू !”

अब हम लोग कांति बाबू के पीछे-पीछे कारखाने के उस बड़े कमरे की ओर जाने लगे।

दीन के दरवाजे पर ताला लटका हुआ था। दोनों ओर की दोनों खिड़किया बन्द थीं। हाथ से ठेलकर कांति बाबू ने एक खिड़की खोली और स्वयं भाककर हम लोगों से कहा, “लो, देखो।”

अभिजित और मैं खिड़की से मटककर खड़े हो गए।

कमरे के पश्चिम की दीवार के ऊपरी हिस्से में कांच की दो खिड़किया यानी ‘स्काइलाइट’ हैं जिनसे धूप नीचे उतर आयी है और अन्दर हलका प्रकाश फैला है।

कमरे के अन्दर जो चीज है, अगर एकाएक देखा जाए तो उसे वृक्ष

नहीं कहा जा सकता। बल्कि अनेक सूइघारी कोई आश्चर्यजनक जानस ही उगे माना जा सकता है। गौर से देखने पर एक तना दीम पड़ता है। वह तना पाँच-छह हाथ ऊँचा उठकर एक मस्तक में जाकर समाप्त हो गया है। मस्तक से करीब एक हाथ नीचे, मस्तक की गोलाकार रु में घेरकर कई सूइ हैं। गिनकर देखने पर सात सूइ मासूम होते हैं।

पेड़ का तना धूसर वर्ण और पिकना है तथा पूरे तने में भूरे धिले उगे हैं।

सूइ अभी मिट्टी की ओर झुककर पड़े हैं। देखने में निर्जीव जंने लगते हैं। लेकिन फिर भी मेरा शरीर सिहर उठा।

आँखें जब अंधेरे की अभ्यस्त हो गयी तब एक और वस्तु पर नजर पड़ी। कमरे के फर्श पर पेड़ के धारों तरफ चिट्ठिया की पाँचें बिखरी हुई हैं।

न जाने, मैं कब तक धुपचाप हाडा रहा। कांति वायू की आवाज सुनकर मेरी चेतना वापस लौटी।

“अभी पेड़ सो रहा है। लगता है, जगने का समय हो गया है।”

अभिजित ने अविश्वास के स्वर में कहा, “क्या वह वास्तव में कोई पेड़ है?”

कांति ने कहा, “जड़ मिट्टी से लगी हुई है तो पेड़ के अलावा इसे क्या कहिएगा? इतना जरूर है कि उसका हाव-भाव पेड़-पौधों की तरह नहीं है। शब्दकोश में उसका कोई उपयुक्त नाम नहीं है।”

“आप इसे क्या कहते हैं?”

“सैंटोपस। या हिन्दी में इसे सप्तपाश कह सकते हैं। ‘पाश’ यानी बंधन। जिस तरह नागपाश।”

हम लोग मकान की ओर चल दिये। मैंने पूछा, “यह पेड़ आपको कहा मिला?”

“मध्य अमेरिका की निकारागुआ झील के पास ही घना जंगल है। उसी में यह पेड़ मिला है।”

“आपको काफी खोज-पड़ताल करनी पड़ी होगी।”

“उसी अंचल में मिलता है, यह बात मुझे मालूम थी। तुम लोगों ने प्रोफेसर डॉयस्टन का नाम सुना है? वे उद्भिद वैज्ञानिक थे, साध-ही-माय यायावर भी। मध्य अमेरिका में पेड़-पौधों की तलाश में जाकर जान गवा बैठे थे। उनकी मृत्यु किस तरह हुई यह बात किसी को मालूम नहीं। उनका शव लापता ही गया था। उनकी तत्कालीन डायरी के अन्तिम भाग में इस पेड़ का उल्लेख है।”

“यही वजह है कि मौका मिलते ही मैं पहले निकारागुआ की ओर



चल पड़ा। गुआटेमाला में ही स्थानीय व्यक्तियों से इस पेड़ का विवरण प्राप्त हुआ। वे लोग इसे शीतान वृक्ष कहा करते हैं। अन्त में इस तरह के कई पेड़ देखने को मिले। इस पेड़ को बन्दर, आरमाडिलो इत्यादि खाते हुए देखा। बहुत-बहुत खोज-पड़ताल के बाद एक कच्ची उम्र का छोटा-सा पौधा मिला जिसे मैं उखाड़कर ले आया। दो वरसों के दरमियान पेड़ का क्या आकार हो गया है, देख ही रहे हो।”

“अब यह पेड़ क्या खाता है?”

“जो कुछ भी देता हूँ, खा लेता है। चूहे दानी से चूहा पकड़कर दिया है। उसके बाद प्रयाग से कहा कि विल्ली-कुत्ते अगर दब जाएं तो ले आओ। यह सब भी खाने को दिया। उसके बाद हमारा तुम्हारा जो आहार है—यानी मुर्गी, बकरा बगैरह भी—दिया है। आजकल हमकी भूख बड़ी तेज हो गयी है। इसके आहार का इन्तजाम नहीं हो पाता है। तीसरे पहर जब इसकी नींद टूटती है तो बड़ा ही छटपटाता है। कल तो एक कांड ही हो गया। प्रयाग एक मुर्गी देने गया था। जिस तरह हाथी को खिलाया जाता है, उसी तरह इसे भी खिलाना पड़ता है। शुरू में पेड़ के मस्तक में एक ढक्कन खनता है। उसके बाद अपने सूँड़ से हाथ में रखे आहार को उठाकर मस्तक के गहड़े में डाले देता है। जो कुछ भी खाने को मिल जाए। उसे पेट के अन्दर डालकर कुछ क्षणों के लिए निश्चिन्त हो जाता है। उसके बाद अगर सूँड़ को फिर हिलाये तो समझ में आता है कि इसे और कुछ खाने के लिए चाहिए।”

“इतने दिनों तक दो मुर्गियाँ या एक छोटा बकरा एक ही दिन में खाकर समाप्त कर देता था। कल से इस नियम में व्यतिक्रम हो रहा है। कल दूसरी मुर्गी देने के बाद प्रयाग दरवाजा बन्द कर चला आया। जब पेड़ बेचनी की हालत में सूँड़ पटकता है तो एक तरह की आवाज होती है। दूसरी मुर्गी देने के बावजूद अचानक उमी तरह की आवाज सुनकर प्रयाग इसके कारण का पता लगाने गया।

“मैं उस समय कमरे में बैठा डायरी लिख रहा था। एकाएक खोरों की एक घीस सुनायी पड़ी। मैं दौड़ता हुआ वहाँ पहुँचा। देखा, सेन्टोपस एक गूँड़ प्रयाग के दाहिने हाथ को कसकर दबाये हुए है। प्रयाग जी-जाग से हाथ छुड़ाने की कोशिश कर रहा है, लेकिन उसके हाथ ही सेन्टोपस का दूसरा मूँट सपत्तपाता हुआ प्रयाग की ओर बढ़ रहा है।

“मैं दौड़ना हुआ गया और लाठी से सूँड़ पर जोरों से मार नि।।। फिर अपने हाथों से प्रयाग को किसी तरह खींचकर बाहर निकाला मैं उसको जान बचायी। लेकिन चिन्ता की बात यही है कि सेन्टोपस ने .

के हाथ का थोड़ा-सा मांस नीचे लिया था और उसे अपने पेट में डाल लिया था। यह चीज मैंने अपनी आंखों से देखी है।”

हम लोग घहलकदमी करते हुए बरामदे पर पहुंच चुके थे। कांति बाबू कुर्सी पर बैठ गए। उसके बाद जेब से रुमाल निकालकर सिर के पसीने की बूंदों को पोछते हुए बोले, “सेन्टोपस को मनुष्य के प्रति लोभ या आक्रोश हो सकता है, इसका इंगित इसके पहले नहीं मिला था। कल जब इसका पता चला तो इसे मार डालने के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय मुझे सूझ नहीं रहा है। कल एक बार भोजन में जहर मिलाकर इसे मार डालने की कोशिश की थी लेकिन पेड़ में आश्चर्यजनक बुद्धि दीख पड़ी। उसने खाने के पदार्थ को सूंड से उठाकर नीचे पटक दिया। अब एकमात्र उपाय यही है कि इसे गोली से मार दिया जाए। परिमल, तुम्हें क्या बुलाकर ले आया हूँ, यह बात समझ रहे हो न ?”

कुछ देर तक चुप रहने के बाद मैं बोला, “गोली लगने से यह मरेगा या नहीं, यह बात आप जानते हैं ?”

कांति बाबू ने कहा, “मरेगा या नहीं, कह नहीं सकता। तब हा, मुझे इस बात पर विश्वास है कि उसमें मस्तिष्क नामक चीज है। उसमें सोचने की शक्ति है, इसका प्रमाण मिल ही चुका है, क्योंकि मैं बहुत बार उसके निकट जा चुका हूँ, लेकिन उसने कभी मुझ पर आक्रमण नहीं किया है। वह मुझे पहचानता है—जिस तरह कि कुत्ते अपने मालिक को पहचानते हैं। प्रयाग पर उसके आक्रोश का यही कारण है कि उसने पेड़ से कई बार हसी-दिल्लगी करने की कोशिशें की हैं। भोजन का लोभ देखकर भी भोजन न दिया था या सूंड के पास खाना ले जाकर वापस ले आया था। मस्तिष्क उसमें है ही और मुझे विश्वास है, मस्तिष्क जिस स्थान में हुआ करता है, वही है—यानी उसके सिर में। जिस स्थान विशेष को उसके सूंड घेरे हुए हैं, तुम्हें वही—उसके सिर पर—निशाना लगाकर गोली चलानी है।”

अभिजित ने एकाएक कहा, “यह कौन-सी बड़ी बात है। इसकी परीक्षा एक मिनट के अन्दर ही की जा सकती है। परिमल, तुम्हारी बटूक...”

कांति बाबू ने हाथ के इशारे से उसे बोलने से रोका और कहा, “शिकार अगर सोई हुई हालत में हो तो उसे मारना क्या उचित है ? परिमल का हन्टिंग कोड (शिकार का नियम) क्या बताता है ?”

मैंने कहा, “शिकार अगर सोयी हुई हालत में हो तो उस पर गोली चलाना नीति के विरुद्ध है खास तौर से शिकार जब चल-फिर नहीं पाता हो तो वहाँ यह सवाल पैदा होता ही नहीं।”

कान्ति बाबू ने प्लास्क से चाय निकालकर हमें दी। चाय पीना खत्म

होते न होते पन्द्रह मिनट के बीत ही सेन्टोपस को नाद खल मूँड में  
 बादशाह बगल के कमरे में कुछ देर से छिपकर बैठा रहा। अचानक  
 खटखट और जोरों से भौंकने की आवाज सुनाई। अभिजित और मैं वहीं  
 गए। देखा, बादशाह अपने दातों से बंकलस-तोड़ने की कोशिश कर रहा  
 है। अभिजित बादशाह को धमकाकर शांत करते गये, तभी कारखाने के  
 कमरे से एक प्रकार की सप-सप आवाज आयी, उसके साथ ही एक तरह  
 की तीव्र गंध। गंध उस तरह की थी जिसकी तुलना करना मुश्किल है।  
 बचपन में मेरे टॉनिसल का जब ऑपरेशन हुआ था तो मुझे बलोरोफाम  
 सुंघाया गया था। वह गंध भी कुछ इसी प्रकार की थी।

कांति बाबू ने व्यस्तता के साथ कमरे में प्रवेश करते हुए कहा, "चलो,  
 समय हो चुका है।"

मैंने पूछा, "यह गंध किस चीज की आ रही है?"

"सेन्टोपस की। यही गंध निकालकर ये सब शिकार..."

कांति बाबू की बात समाप्त नहीं हो सकी। बादशाह ने बंकलस को  
 एक बार जोरो से खींचा और उसे तोड़कर अभिजित को एक ही धक्के में  
 जमीन पर पटक दिया, उसके बाद तीर की तरह उस ओर दौड़ पड़ा जहाँ  
 से गंध आ रही थी।

अभिजित किसी तरह उठकर खड़ा हुआ। उसके मुँह से 'सर्वनाश'  
 शब्द निकला और वह बादशाह के पीछे-पीछे दौड़ने लगा।

मैं गोली भरी बन्दूक लेकर कारखाने के कमरे की ओर दौड़ा। वहाँ  
 जाने पर देखा, बादशाह ने एक लम्बी छलांग लगायी और खुली हुई  
 लिफ्टकी पर चढ़ गया। अभिजित की रोकने की चेष्टा को विफल बनाता  
 हुआ वह कमरे के अन्दर कूद पड़ा।

कांति बाबू ने ज्योंही दरवाजा खोला, हमें रामपुरी हाउस का हृद्य  
 विदारक आर्तनाद सुनाई पड़ा।

हमने अन्दर जाने पर देखा, बादशाह एक मूँड में अंट नहीं रहा है,  
 अतः सेन्टोपस एक के बाद दूसरे एवं दूसरे के बाद तीसरे मूँड से उसे मरण-  
 पाश में जकड़ रहा है।

कांति बाबू ने चिल्लाकर कहा, "अब तुम लोग आगे मत बढ़ना। परि-  
 मल, गोली बनाओ।"

मैंने ज्योंही बन्दूक उठाई, मेरे कानों में जोरों की आवाज आई,  
 "ठहरो।"

अभिजित की दृष्टि में उसके कूत्ते की कीमत कितनी अधिक है,  
 बात उसी समय मेरी समझ में आई। कांति बाबू की वर्जना को पूरे तीर

नकार कर वह दौड़ता हुआ वहाँ गया और मॅटोपस के तीन सूडों में से एक को फसकर पकड़ लिया।

उस समय एक अद्भुत दृश्य पर नज़र पड़ते ही मेरे होश उड़ गए।

बादशाह को छोटकर सॅटोपस ने अपने तीनों सूडों में अभिजित पर आक्रमण किया और चाकी चारों सूड जैसे आदमी के गून के लोभ में सजग होकर लोलुप जिह्वा की तरह सपलपाने लगे।

कांति बाबू ने दुबारा कहा, “घसाओ गोली” गोली चलाओ। वह उसका मिर है।”

मैंने सॅटोपस के गिर में एक टक्कन स्रतते देखा। टक्कन के नीचे एक गड्ढा है। अभिजित को शून्य में उठाए सभी सूड उमी गड्डे की ओर बढ़ रहे हैं।

अभिजित का चेहरा रक्तहीन और पीला पड़ गया, उसकी आंखें जैसे बाहर निकल रही हो।

भीषण सकट की घड़ी में—मैंने इसके पहने भी देखा है—मेरे तमाम स्नायु अचानक जैसे जाड़ू की तरह सयत और त्रियाशील हो जाते हैं।

मैंने निष्कप हाथ में बढ़क घामकर, सॅटोपस के सिर पर, दोनों चत्रों के दरमियान निशाना साधकर गोली चला दी।

गोली दागने के एक पल बाद ही पेट के सिर से रक्त का फव्वारा छूटने लगा। तमाम सूड अभिजित से अलग हटकर जमीन की तरफ झुक गए, और तत्काल वही गंध और देखते न देखते उस गंध ने तीव्र होकर मेरी चेतना को हर लिया \*।



इस घटना को हुए चार महीने का अरसा गुज़र चुका है। मैंने अब अपने असमाप्त उपन्यास को फिर से लिखना शुरू कर दिया है।

बादशाह को हम जिन्दा नहीं रख सके। लेकिन इस बीच अभिजित ने एक मैस्टिफ और एक त्रिब्वती कुत्ते के बच्चे का इत्तजाम कर लिया है। इसके अलावा उसे एक रामपुरी हाउड का भी पता चला है। अभिजित के पजर की दो हड्डिया टूट गई थी। दो महीने तक पलस्तर लगाए रखने के बाद हड्डिया जुड़ी है।

कांति बाबू कल आए थे। उन्होंने मुझे बताया कि वे तमाम कीटखोर पेड़-पौधों को हटा देने के बारे में सोच रहे हैं।

“बल्कि साधारण साग-सब्जी लेकर अनुसंधान करना कहीं बेहतर है। श्रीगा, नेनुआ, परवल वगैरह के बारे में। अगर तुम चाहो तो तुम्हें कुछ

पेड़-पौधे दे सकता हूँ। तुमने मेरा बड़ा ही उपकार किया है। मान लो एक नेवेनयिस ही दूँ तो तुम्हारे घर के कीड़े-मकोड़े....”

मैने उन्हें टोका, “नहीं-नहीं। आप उन सब चीजों को फेंकना चाहते हैं तो फेंक दें। कीड़े-मकोड़े पकड़ने के लिए मुझे पेड़-पौधों की जरूरत नहीं है।”

किंग कंपनी के कॅलेण्डर की ओर से आवाज़ आई, “ठीक, ठीक, ठीक।”

## बंकु बाबू का मित्र

बंकु बाबू को कभी किसी ने क्रोध में आते नहीं देता है। सबमुच अगर वे क्रोध में आ जाएं तब उनका रूप क्या होगा, वे क्या कहेंगे—इसका अनुमान लगाना मुश्किल है।

हालांकि बात ऐसी नहीं है कि क्रोध आने के मौके नहीं आते हैं। पिछले बाईस बरसों से वे कांकुडगाछी प्राइमरी स्कूल में भूगोल और बंगला पढ़ाते आ रहे हैं। इस अरसे के दरमियान कितने ही छात्र आए और गए मगर बंकुबाबू के पीछे पढ़ने का सिलसिला—ब्लैकबोर्ड में उनका चित्र बनाना, उनके बैठने की कुरसी में गोद लगा देना, दीवाली की रात में उनके पीछे पटाखाबाजी करना—बाईस बरसों से छात्र-परम्परा के रूप में चला आ रहा है।

लेकिन बंकु बाबू कभी गुस्से में नहीं आए। बस, गला खंखारकर इतना ही कहा है, “छिः !”

इसका अवश्य ही कोई कारण है और वह यह कि अगर वे गुस्से में आकर मास्टरी छोड़ देते हैं तो उनके जैसे गरीब आदमी के लिए इस उम्र में कोई मास्टरी या नौकरी ढूँढना बड़ा ही मुश्किल है। और दूसरा कारण यह है, कि पूरे क्लास के शैतान छात्रों के बीच दो-चार भले छात्र अवश्य रहते हैं; उन लोगों से मेल-जोलकर तथा उन्हें पढ़ाकर बंकु बाबू को इतना आनन्द प्राप्त होता है कि इसी से उनकी मास्टरी सार्थक हो जाती है। ऐसे छात्रों को वे यदा-कदा अपने घर पर ले आते हैं। उसके बाद कटोरा भर भुरभुरी खिलाकर कहानी के बहाने देश-विदेश की आश्चर्यजनक घटनाएँ उन्हें सुनाते हैं। अफ्रीका की कहानी, मेरु की खोज की कहानी, ब्राजिल की आदमखोर मछलियों की कहानी, समुद्र-गर्भ में समाए हुए एटलेन्टिस महादेश की कहानी—बंकुबाबू इन सबों का वर्णन बड़े ही चमत्कारिक तरीके से करते हैं।

शनि और रविवार की शाम के वक्त बंकु बाबू गाव के वकील श्रीरति मजुमदार के अड्डे में शामिल होते हैं। बहुत बार उन्होंने सोचा है, अब नहीं जाऊंगा, अबकी आखिरी बार जा रहा हूँ। छात्रों की टिटकारी

बरदाश्त करने लायक हो जाने के बावजूद वृद्धों का उनके पीछे पड़ना उन्हें बरदाश्त नहीं होता। इस बैठक में उन्हें केन्द्र बनाकर जो हसी-दिल्लीगी चलती है, वह सचमुच कभी-कभी बरदाश्त के बाहर हो जाती है।

यही तो उस दिन की बात है, दो महीने भी न गुजरे होंगे, भूत-प्रेत की बातें चल रही थी। बंकु बाबू यों सबके सामने अपनी राय जाहिर करने के अभ्यस्त नहीं हैं। न जाने उस दिन क्या हुआ कि वे कह बैठे कि वे भूत-प्रेत से नहीं डरते हैं। अब जाएं तो कहां जाएं! ऐसे मौके को लोग भला हाथ से जाने दें! रात में घर लौटते समय बंकु बाबू की रास्ते में बड़ी ही दुर्गति हुई। मिस्त्रि खानदान के इमली के पेड़ के तले कोई लिंकलिक लम्बा आदमी अपनी देह में भूसा वगैरह लगाकर अंधेरे में उनके बदन पर कूद पड़ा। यह काम इसी अड्डे के पट्यंत्र के अलावा और हो ही क्या सकता है!

बंकु बाबू को डर नहीं लगा। तब हां, चोट अवश्य ही लगी थी। तीन दिनों तक उनकी गरदन में दर्द रहा था। और, सबसे जो बड़ी बात हुई वह यह कि उनके नये कुरते में स्याही वगैरह लग गई थी तथा वह कई जगह फट भी गया था। भला, यह कोई मज्जाक में मज्जाक है!

इसके अलावा उनके पीछे पड़ने का घंघा लगा ही हुआ है। जैसे छाता या जूता छिपा देना, पान में असली मसाले की जगह मिट्टी मिला देना, जोर-जबरन गीत गाने को बाध्य करना इत्यादि।

फिर भी उन्हें अड्डे पर आना पड़ता है। न आने पर श्रीपति बाबू पता नहीं, क्या सोचें। एक तो वे गांव के गण्यमान्य व्यक्ति हैं, दिन को रात और रात को दिन बनाने की उनमें सामर्थ्य है, उस पर बंकुबाबू न हों तो उनका काम चल नहीं सकता। उनका कहना है: एक ऐसे व्यक्ति का रहना जरूरी है जिसको लेकर खासे मजेदार ढंग से उससे रगड़ किया जाए, वरना अड्डेबाजी का अर्थ ही क्या है? बंकुबिहारी को बुला लाओ।



आज की अड्डेबाजी में जोर-शोर से बहस-मुवाहसा चल रहा था यानी सिंटेलाइट (उपग्रह) के सम्बन्ध में चर्चा चल रही थी। आज ही, सूर्यास्त के कुछ क्षण पहले उत्तर दिशा के आकाश में एक गतिमान प्रकाश दीप्त पड़ा है। तीनों महीने पहले भी एक बार उमी तरह का प्रकाश दीप्त पड़ा था और उसके सम्बन्ध में जोर-पड़ताल सिलसिला चला था। बाद में मालूम था। 'सटका' या 'फोसका'—इसी

रही  
था।

## बंकु बाबू का मित्र

बंकु बाबू को कभी किसी ने त्रोध में आते नहीं देगा है। गनमुन अगर ये त्रोध में आ जाएं तब उनका रूप क्या होगा, ये क्या कहेंगे—इसका अनुमान लगाना मुश्किल है।

हालांकि बात ऐसी नहीं है कि त्रोध आने के मोर्चे नहीं आते हैं। पिछले बाईस बरसों से वे कांकड़गाछी प्राइमरी स्कूल में प्रिन्स और बंगला पढ़ाते आ रहे हैं। इन बरसों के दरमियान बिनने ही छात्र आए और गए मगर बंकुबाबू के पीछे पढ़ने का मिलमिला—स्नैरचोर्ट में उनका विष बनाना, उनके बँठने की कुर्मी में गोद लगा देना, दीवानी की रात में उनके पीछे पटासाबाजी करना—बाईस बरसों से छात्र-परम्परा के रूप में चला आ रहा है।

लेकिन बंकुबाबू कभी गुस्से में नहीं आए। बस, गला सांगारकर इतना ही कहा है, "छिः!"

इसका अवश्य ही कोई कारण है और यह यह कि अगर वे गुस्से में आकर मास्टरी छोड़ देते हैं तो उनके जैसे गरीब आदमी के लिए इस उम्र में कोई मास्टरी या नौकरी ढूँढना बड़ा ही मुश्किल है। और दूसरा कारण यह है, कि पूरे क्लारा के शैतान छात्रों के बीच दो-चार भले छात्र अवश्य रहते हैं; उन लोगों से मिल-जोलकर तथा उन्हें पढ़ाकर बंकु बाबू को इतना आनन्द प्राप्त होता है कि इसी से उनकी मास्टरी मायंक हों जाती है। ऐसे छात्रों को वे यदा-कदा अपने घर पर ले आते हैं। उसके बाद कटोरा भर भुरभुरी खिलाकर कहानी के बहाने देश-विदेश की आश्चर्यजनक घटनाएँ उन्हें सुनाते हैं। अफ्रीका की कहानी, मेरु की राज की कहानी, ब्राजिल की आदमखोर मछलियों की कहानी, समुद्र-गर्भ में समाए हुए एटलेन्टिस महादेश की कहानी—बंकुबाबू इन सबों का वर्णन बड़े ही चमत्कारिक तरीके से करते हैं।

शानि और रविवार की शाम के वक़्त बंकु बाबू गांव के वकील श्रीरति मजूमदार के अड्डे में शामिल होते हैं। बहुत बार उन्होंने सोचा है, अब नहीं जाऊंगा, अबकी आखिरी बार जा रहा हूँ। छात्रों की टिटकारी



बरदाश्त करने लायक हो जाने के बावजूद बूड़ों का उनके पीछे पड़ना उन्हें बरदाश्त नहीं होता। इस बैठक में उन्हें केन्द्र बनाकर जो हंसी-दिल्लीगी चलती है, वह सबमुच कभी-कभी बरदाश्त के बाहर हो जाती है।

यही तो उस दिन की बात है, दो महीने भी न गुजरे होंगे, भूत-प्रेत की बातें चल रही थीं। बंकु बाबू यों सबके सामने अपनी राय जाहिर करने के अभ्यस्त नहीं हैं। न जाने उस दिन क्या हुआ कि वे कह बैठे कि वे भूत-प्रेत से नहीं डरते हैं। अब जाएं तो कहां जाएं! ऐसे मीके को लोग भला हाथ से जाने दें! रात में घर लौटते समय बंकु बाबू की रास्ते में बड़ी ही दुर्गति हुई। मिस्त्रि खानदान के इमली के पेड़ के तले कोई लिंकलिक लम्बा आदमी अपनी देह में भूसा बगैरह लगाकर अंधेरे में उनके बदन पर कूद पड़ा। यह काम इसी अड्डे के पड़्यंत्र के अलावा और हो ही क्या सकता है!

बंकु बाबू को डर नहीं लगा। तब हां, चोट अवश्य ही लगी थी। तीन दिनों तक उनकी गरदन में दर्द रहा था। और, सबसे जो बड़ी बात हुई वह यह कि उनके नये कुरते में स्याही बगैरह लग गई थी तथा वह कई जगह फट भी गया था। भला, यह कोई मज्जाक में मज्जाक है!

इसके अलावा उनके पीछे पड़ने का घंघा लगा ही हुआ है। जैसे छाता या जूता छिपा देना, पान में असली मसाले की जगह मिट्टी मिला देना, जोर-जवरन गीत गाने को बाध्य करना इत्यादि।

फिर भी उन्हें अड्डे पर आना पड़ता है। न आने पर श्रीपति बाबू पता नहीं, क्या सोचें। एक तो वे गांव के गण्यमान्य व्यक्ति हैं, दिन को रात और रात को दिन बनाने की उनमें सामर्थ्य है, उस पर बंकुबाबू न हो तो उनका काम चल नहीं सकता। उनका कहना है: एक ऐसे व्यक्ति का रहना जरूरी है जिसको लेकर खासे मजेदार ढंग से उससे रगड़ किया जाए, घरना अड्डेबाजी का अर्थ ही क्या है? बंकुबिहारी को बुला लाओ।



आज की अड्डेबाजी में जोर-शोर से बहस-मुवाहसा चल रहा था यानी सैंटेलाइट (उपग्रह) के सम्बन्ध में चर्चा चल रही थी। आज ही, सूर्यास्त के कुछ क्षण पहले उत्तर दिशा के आकाश में एक गतिमान प्रकाश दीख पड़ा है। तीनों महीने पहले भी एक बार उसी तरह का प्रकाश दीख पड़ा था और उसके सम्बन्ध में अड्डे में काफी गोज-पड़ताल का तिलतिला चला था। बाद में मालूम हुआ था कि वह एक वही उपग्रह था। 'खटका' या 'फोसका'—इसी किस्म का कुछ उसका नाम था। सुनने

में आया है कि वह बार तो मौन ऊपर पक्षियों के चारों तरफ घूम रहा है और यंत्रानियों को उमंगें नये नये तथ्यों की जानकारी प्राप्त हो रही है।

आज के प्रकाश को बसु बाबू ने गवमं पहने देगा था। उमके बाद उन्होंने ही निधु मुक्तार को बुलाकर दिगाया था।

किन्तु अदृष्ट पर पहुँचने के बाद बसु बाबू ने पाया कि निधु बाबू ने सबसे पहले प्रकाश पर दृष्टि पटने का थेंप बेकिमक अपने आपको दे खाना है और दग यत्रह म अपनी बटून ही तारीफ कर रहे है। बसु बाबू ने कुछ भी न कहा।

उपग्रह के सम्बन्ध में यहा बिगो को कोई विशेष जानकारी नहीं है, लेकिन पृथ्वी वान करने के लिए टिकट नहीं गरीदनी पडती है या बोलने में पुलिम नहीं पाडनी है इसलिये गभी बातों की रफूगरी कर रहे है।

चंडी बाबू ने कहा, "चाहे जो बहो भैया, यह सब उपग्रह यगैरह के सम्बन्ध में माथा-पच्छी करना हमें शोभा नहीं देता। हम लोगो के लिए जैसा वह है, माप के मापे पर मणि होना वैसा ही है। जहां आकाश के किस कोने में प्रकाश का एक बिन्दु देग लिया है और उमी के सम्बन्ध में अलवारो में निख रहा है और उमी को पडकर तुम द्र। बंटक में पान बवाते-बवाते वाहवाही सुट रहे हो। मानो, यह तुम्हारी ही कीर्ति हो, तुम्हारा ही गौरव हो। तालियों की तड़तड़ाहट जैमे तुम्हें ही मिलनी चाहिए। हु!"

रामकन्हारी की उम्र कम है। वह बोला, "चाहे मेरा कारनामा न हो, मगर है तो आदमी का ही। सबसे श्रेष्ठ मनुज है जग में।"

चंडी बाबू ने कहा, "अरे, रहने दो। येवजह की... आदमी ने नहीं तो क्या बन्दर ने उपग्रह बनाया है? मनुष्य के अतिरिक्त है ही क्या?"

निधु मुक्तार ने कहा, "ठीक है। उपग्रह की बात रहे। उमके अन्दर कोई आदमी नहीं है, सिर्फ एक यत्र ही चक्कर काट रहा है। सो तो सट्टू भी चक्कर काटती है। स्विच दवा देने से पंघा भी घूमने लगता है। चंर। मगर रॉकेट? रॉकेट की बात यो ही अनदेखी नही की जा सकती है।"

चंडी बाबू ने मुंह त्रिदकाकर कहा, "रॉकेट! अरे, रॉकेट घोर तो तुम्हें पीना नहीं है। रॉकेट! मैं दाद देता अगर यह हमारे मुक्त में तैयार होता, किले के मैदान में छोडने से अगर चंद्रमा तक पहुँच जाता, हम टिकट गरीदकर देख आते तो इसका कोई मानी होता।"

रामकन्हारी ने कहा, "आपने ठीक कहा है। हम लोगो के लिए रॉकेट जैसा, घोडे का अंडा भी वैसा ही।"

भैरव चक्रवर्ती ने कहा, "मान लो, दूसरे-दूसरे ग्रहो से कोई चीज इस

पृथिवी पर आती है....”

“आने से क्या होगा ? हम-तुम तो उसे देख न पाएगे ।”

“सो तो ठीक है ।”

अड्डे के सभी सदस्यों ने चाय की प्याली को होंठों से लगाया । इसके बाद अब बातचीत का सिलसिला चल नहीं सकता ।

तभी बंकू ने एक कास का टुकड़ा उठाकर धीरे से कहा, “अगर यही आ जाए ?”

निधु बाबू ने अवाक् होने का बहाना करते कहा, “बंका अब क्या कह रहा है जी ? अयं ! कौन यहां आयेगा ? कहां से आयेगा ?”

बंकू बाबू ने फिर आहिस्ता से कहा, “दूसरे ग्रह से कोई आदमी बगैरह....”

भैरव चक्रवर्ती ने अपनी आदत के अनुसार बंकू बाबू की पीठ पर एक घोल जमाते हुए दांत निपोरकर कहा, “वाह, बकू बिहारी, वाह ! दूसरे ग्रह से आदमी यहां आएगा ? इस घनघोर दिहात में ? लदन में नहीं, मास्को में नहीं, न्यूयार्क में भी नहीं यहां तक कि कलकत्ते में भी नहीं—बल्कि कांकुड़ गाछी में ? तुम्हारा शौक तो कम मालूम नहीं होता ।”

बंकू बाबू चुप हो गए । लेकिन उनका मन कहने लगा, यह असंभव ही कैसे हो सकता है ? बाहर से जो आते हैं, उनका उद्देश्य रहता है पृथिवी पर आना । उतना हिसाब करके अगर न ही आये ? कांकुड़ गाछी में न आना जैसे सम्भव है उसी तरह आना भी तो संभव है ।

श्रीपतिबाबू ने अब तक अपना कोई विचार प्रकट नहीं किया था । अब वे सम्मल कर बैठ गए और सभी का ध्यान उनकी तरफ खिंच गया । वे चाय का गिलास रखकर अभिज्ञ की तरह गम्भीर आवाज में बोले, “देखो, दूसरे ग्रह से अगर आदमी आयेगा भी तो इस गण-गुजरे देश में नहीं आयेगा । मेरी यह बात गांठ बांधकर रख लो । खा-पीकर मगन रहना ही उनका काम नहीं है । और वे इतने बेवकूफ भी नहीं हैं । मुझे विश्वास है कि वे लीय साहब बलास के हैं और आकर उतरेंगे भी तो साहबों के मुल्क में ही—पश्चिम में । समझ रहे हो न ?”

बंकू बाबू के अतिरिक्त सभी ने हामी भरी ।

चंडी बाबू ने निधु भक्तारं की कमर पर एक घाप जमाकर बंकू बाबू की ओर इशारा किया और नकियाते हुए कहा, “मुझे तो भैया, लग रहा कि बकू ठीक ही कह रहा है । जहां बंकूबिहारी के जैसा आदमी है वहां लोगों के लिए आना स्वाभाविक है । कहो, निधु, ठीक कह रहा हूँ न मान लो, अगर कोई स्पेशिमेन (नमूना) ले जाना होगा तो बकू के अ

दूसरा कौन आदमी मिलेगा ?”

निधु मुक्तार ने हा में हा मिलाते हुए कहा, “ठीक कह रहे हो। चाहे अवन को बात हो, चाहे चेहरे की या चाहे ताकत की, बाका बिलकुल आदर्श है।”

रामकन्हाई ने कहा, “एकदम जादूघर में रखने लायक है। या चिड़ियाघर में।”

बकु बाबू ने मन-ही-मन कहा, ‘अगर नमूने की बात ही ली जाए तो ये लोग ही क्या उन्नीस हैं ? यह जो श्रीपति बाबू हैं, उनका घुघना ऊटे की तरह है। और वह भंरव धक्कती—कछुए की तरह हमकी आंखें हैं, निधु मुक्तार छछुदर है, रामकन्हाई बकरी, चड़ी बाबू, चमगादड़। अगर चिड़ियाघर में ही रखना होगा तो...’

बकु बाबू की आंखों में आंसू उमड़ आए। वे छठकर सड़े हो गए। सोचा था, आज अड्डेबाजी जमेगी। उनका मन उदास हो गया। अब रहना बेकार है।

“यह क्या, जा क्यों रहे हो जी ?” श्रीपति बाबू ने चिन्ता के स्वर में कहा।

“हा, रात हो चुकी है।”

“रात कहा हुई है ? कल तो छुट्टी का दिन है। बंठो, चाय पीकर जाना।”

“नहीं। अब जा रहा हूं। परीक्षा को कुछ कॉपियां हैं। नमस्कार !”

रामकन्हाई ने कहा, “देखिएगा, बंकुदा, आज अभावस्या है। मंगलवार को आदमी के साथ-साथ भूतो की संख्या में भी वृद्धि होती है।”



बकु बाबू को पंचाघोष की बंसवारी के बीच प्रकाश दिखाई पड़ा। उनके हाथ में कोई रोशनी नहीं थी। सरदी का मौसम रहने के कारण सांप का डर नहीं था। इसके अलावा रास्ता भी जाना-पहचाना था। यो उस रास्ते से लोग-वाग कम ही गुजरते हैं। बकु बाबू के लिए यह रास्ता शार्ट-कट है, इसलिए वे इस रास्ते से आते-जाते हैं।

कुछ देर पहले से ही उनके मन में एक तरह का खटका पैदा हो रहा था। और-और दिनों के बजाय एक दूसरी ही तरह का भाव। लेकिन वह नया ही भाव नहीं था। आज बंसवारी  
कुल नहीं आ  
वे बंसवारी

के जितना अन्दर घुसते थे, भींगुरों की आवाज उतनी ही बढ़ती जाती थी। आज उलटी ही बात है। यही वजह है कि इतना सन्नाटा रेंग रहा है।

बात क्या है? भींगुरों का दल नींद में खो गया है क्या?

सोच ही रहे थे कि बीसेक हाथ दूर, पूरब दिशा में प्रकाश देखा।

घुरु में उन्हें लगा, आग लगी है। बंसवारी के बीच खाली स्थान में, जहाँ डबरा है, उसके चारों ओर काफी दायरे के दरमियान डाल और पत्तों पर एक गुलाबी आभा छाई हुई है। नीचे, डबरे की तमाम जगह को घेरकर गुलाबी आभा फैली है। लेकिन आग नहीं है, क्योंकि वह प्रकाश स्थिर है।

बंकु बाबू आगे बढ़ने लगे।

कानों में एक तरह की आवाज आ रही है। मगर वह समझ के बाहर है। एकाएक कान बन्द करने से जिस तरह री-री-री-री-री-री आवाज होती है वह आवाज भी ठीक उसी तरह की है।

बंकु बाबू की देह यद्यपि सिहर रही है, फिर भी एक अदम्य कुतूहल के वशीभूत होकर वे आगे बढ़ते जा रहे हैं।

डबरे से तीस हाथ की दूरी पर, बड़ी बंसवारी पार करने के बाद उनकी निगाह उस वस्तु पर गई। एक विशालकाय, उलटकर रखे हुए शीशे के कटोरे की सी वस्तु, पूरे डबरे को घेरकर पड़ी हुई है और उसके स्वच्छ-प्राय छाजन में से एक तीव्र, लेकिन स्निग्ध गुलाबी आभा छिटक रही है, जो समूचे वन को प्रकाशमान कर रही है।

बंकु बाबू ने ऐसा आश्चर्यजनक दृश्य स्वप्न में भी न देखा था।

बंकु बाबू कुछ देर तक धनधोर आश्चर्य में डूबते-उतरते रहे, उसके बाद उन्होंने देखा, वह वस्तु स्थिर होने पर भी निर्जीव नहीं है। धीमे स्पन्दन की झलक मिल रही है। श्वास-प्रश्वास लेने पर जिस तरह आदमी की छाती धड़कती है, उसी तरह वह वस्तु हिल-डुल रही है।

अच्छी तरह से देखने के लिए बंकु बाबू ज्यों ही चार हाथ आगे बढ़े होंगे कि उनके शरीर में विद्युत प्रवाह दौड़ने लगा। दूसरे ही क्षण उन्हें महसूस हुआ कि उनके हाथ और पैर किसी अदृश्य बंधन से बंध गए हैं। अब उनके शरीर में शक्ति नामक चीज नहीं है। वह न तो आगे बढ़ पा रहे हैं और न पीछे ही हट पा रहे हैं।

कुछ देर तक इसी प्रकार जडबत् खड़े रहने के बाद बंकु बाबू ने देखा, उस वस्तु का स्पन्दन धीरे-धीरे थम गया और वह शब्द जो कानों को प्रिय लग रहा था, एकाएक रुक गया। उसके बाद एकाएक रात की निस्तब्धता मंग कर बहुत-कुछ आदमी की तरह, पर अत्यन्त ही महीन गले की चिल्ला-

दूसरा कौन आदमी मिलेगा ?”

निधु मुक्तार ने हा में हा मिलाते हुए कहा, “ठीक कह रहे हो। चाहे अचल को बात हो, चाहे चेहरे की या चाहे ताकत की, बाका बिलकुल आदर्श है।”

रामकन्हाई ने कहा, “एकदम जादूघर में रखने लायक है। या चिड़ियाघर में।”

बकु बाबू ने मन-ही-मन कहा, ‘अगर नमूने की बात ही ली जाए तो ये लोग ही क्या उन्नीस हैं ? यह जो श्रीपति बाबू हैं, उनका युधना ऊटे की तरह है। और वह भैरव चक्रवर्ती—कणू की तरह इसकी आँखें हैं, निधु मुक्तार छछुंदर है, रामकन्हाई धकरी, चडो बाबू, घमगादड़। अगर चिड़ियाघर में ही रखना होगा तो...’

बकु बाबू की आँखों में आसू उमड़ आए। वे उठकर खड़े हो गए। सोचा था, आज अड्डेबाजी जमेगी। उनका मन उदास हो गया। अब रहना बेकार है।

“यह क्या, जा क्यों रहे हो जो ?” श्रीपति बाबू ने चिन्ता के स्वर में कहा।

“हा, रात हो चुकी है।”

“रात कहाँ हुई है ? कल तो छुट्टी का दिन है। बँठो, चाय पीकर जाना।”

“नहीं। अब जा रहा हूँ। परीक्षा की कुछ कॉपियाँ हैं। नमस्कार !”

रामकन्हाई ने कहा, “देखिएगा, बंकुदा, आज अमावस्या है। मंगलवार को आदमी के साथ-साथ भूतों की संख्या में भी वृद्धि होती है।”



बकु बाबू को पचाघोष की बंसवारी के बीच प्रकाश दिखाई पड़ा। उनके हाथ में कोई रोजनी नहीं थी। सरदी का मौसम रहने के कारण साप का डर नहीं था। इसके अलावा रास्ता भी जाना-पहचाना था। यों उस रास्ते से लोग-वाग कम ही गुजरते हैं। बंकु बाबू के लिए यह रास्ता शार्ट-कट है, इसलिए वे इस रास्ते से आते-जाते हैं।

कुछ देर पहले से ही उनके मन में एक तरह का खटका पैदा हो रहा था। और-और दिनों के बजाय एक दूसरी ही तरह का भाव। लेकिन वह क्या है, समझ नहीं पा रहे थे। अचानक उन्हें याद आया, आज बसवारी में भीगुरो की आवाज नहीं गूज रही है। नहीं, आवाज बिलकुल नहीं आ रही है। यही तो और-और दिनों से अन्तर है। और-और दिन वे बंसवारी

के जितना अन्दर घुसते थे, भीगुरों की आवाज उतनी ही बढ़ती जाती थी। आज उलटी ही बात है। यही वजह है कि इतना सन्नाटा रेंग रहा है।

बात क्या है? भीगुरों का दल नींद में खो गया है क्या?

सोच ही रहे थे कि बीसेक हाथ दूर, पूरव दिशा में प्रकाश देखा।

धुरु में उन्हें लगा, आग लगी है। बंसवारी के बीच खाली स्थान में, जहां डबरा है, उसके चारों ओर काफी दायरे के दरमियान डाल और पर्तों पर एक गुलाबी आभा छाई हुई है। नीचे, डबरे की तमाम जगह को घेरकर गुलाबी आभा फैली है। लेकिन आग नहीं है, क्योंकि वह प्रकाश स्थिर है।

बंकु बाबू आगे बढ़ने लगे।

कानों में एक तरह की आवाज आ रही है। मगर वह समझ के बाहर है। एकाएक कान बन्द करने से जिस तरह री-री-री-री-री-री आवाज होती है वह आवाज भी ठीक उसी तरह की है।

बंकु बाबू की देह यद्यपि सिंहर रही है, फिर भी एक अदम्य कुतूहल के वशीभूत होकर वे आगे बढ़ते जा रहे हैं।

डबरे से तीस हाथ की दूरी पर, बड़ी बंसवारी पार करने के बाद उनकी निगाह उस वस्तु पर गई। एक विशालकाय, उलटकर रखे हुए शीशे के कटोरे की सी वस्तु, पूरे डबरे को घेरकर पड़ी हुई है और उसके स्वच्छ-प्राय छाजन में से एक तीव्र, लेकिन स्निग्ध गुलाबी आभा छिटक रही है, जो समूचे वन को प्रकाशमान कर रही है।

बंकु बाबू ने ऐसा आश्चर्यजनक दृश्य स्वप्न में भी न देखा था।

बंकु बाबू कुछ देर तक घनघोर आश्चर्य में डूबते-उतरते रहे, उसके बाद उन्होंने देखा, वह वस्तु स्थिर होने पर भी निर्जीव नहीं है। धीमे स्पन्दन की झलक मिल रही है। श्वास-प्रश्वास लेने पर जिस तरह आदमी की छाती धडकती है, उसी तरह वह वस्तु हिल-डुल रही है।

अच्छी तरह से देखने के लिए बंकु बाबू ज्यो ही चार हाथ आगे बढ़े होंगे कि उनके शरीर में विद्युत प्रवाह दौड़ने लगा। दूसरे ही क्षण उन्हें महसूस हुआ कि उनके हाथ और पैर किसी अदृश्य बंधन से बंध गए हैं। अब उनके शरीर में शक्ति नामक चीज नहीं है। वह न तो आगे बढ़ पा रहे हैं और न पीछे ही हट पा रहे हैं।

कुछ देर तक इमी प्रकार जडवत खड़े रहने के बाद बंकु बाबू ने देखा, उस वस्तु का स्पन्दन धीरे-धीरे थम गया और वह शब्द जो कानों को प्रिय लग रहा था, एकाएक रुक गया। उसके बाद एकाएक रात की निस्तब्धता भंग कर बहुत-कुछ आदमी की तरह, पर अत्यन्त ही महीन गले की चिल्ला-

हट मुनाई पडी, "मिलिपिपिंग ब्यूक, मिलिपिपिंग ब्यूक।"

बंकु बाबू चिहुककर जडवत् हो गए। बाप रे, यह कौन-सी भाषा है और जो बोल रहा है, वह है कहां ?

दूसरी चिल्लाहट सुनते ही बंकु बाबू की छाती घोंकनी की तरह चलने लगी।

"हू आर यू ? हू आर यू ?" <sup>1</sup>

यह तो अंग्रेजी है। हो सकता है उन्ही से सवाल किया जा रहा है।

बंकु बाबू ने धूक निगलकर कहा, "आइ एम बंकु बिहारी सर—बंकु बिहारी दत्त।" <sup>2</sup>

सवाल पूछा गया, "आर यू इंगलिश ? आर यू इंगलिश ?" <sup>3</sup>

बंकु बाबू ने चिल्लाकर कहा, "नो सर। बेंगाली कायस्थ सर।" <sup>4</sup>

थोड़ी देर तक चुप्पी छाई रही, उसके बाद स्पष्ट उच्चारण में धब्दा बाहर आया, "नमस्कार !"

बंकु बाबू ने राहुन की सांस लेकर कहा, "नमस्कार !" इतना कहते ही उन्हें महसूस हुआ, उनके हाथ और पैरों का अदृश्य बंधन अपने आप खल गया है। वे चाहते तो भाग सकते थे, पर भागे नहीं। क्योंकि उन्होंने देखा, उस विशातकाय शीशे के स्तूप का एक हिस्सा आहिस्ता-आहिस्ता दरवाजे की तरह खल गया।

उस दरवाजे से शुरू में चिकने बॉल की तरह का एक सिर बाहर निकला, उसके बाद एक अद्भुत प्राणी का शरीर।

सिर के अलावा लम्बे-छरहरे शरीर का तमाम हिस्सा एक झलमलाती गुलाबी आभा से ढका था। चेहरे पर कान और नाक के स्थान पर दो-दो और होठ के स्थान पर एक छेद थे। रोआ या बाल का कहीं नामोनिशान नहीं था। हल्दी के रंग की दोनो गोल-गोल आंखें इस तरह चमक रही थीं जैसे कोई रोगनी जल रही हो।

वह आदमी धीरे-धीरे बंकु बाबू की ओर आया और तीन हाथ के फामले पर हककर उनकी ओर अपलक ताकने लगा। बंकु बाबू के हाथ अपने आप जुड़ गए।

लगभग एक मिनट तक देखने के बाद वह प्राणी वांसुरी की तरह महीन आवाज में बोला, "तुम मनुष्य हो ?"

बंकु बाबू ने कहा, "हां।"

1. तुम कौन हो ?

3. क्या तुम अंग्रेज हो ?

2. मैं बंकु बिहारी हूं, सर।

4. नहीं सर, मैं बंगाली कायस्थ हूं।



प्राणी बोला, "यह पृथिवीलोक है ?"

बंकु बाबू बोले, "हां।"

"ठीक ही समझा हूं। यन्त्रों ने गड़बड़ी पैदा की है। प्लुटो में जाने की बात थी। मन में एक प्रकार का सन्देह था, यही वजह है कि पुरू में तुमसे प्लुटो भाषा में सवाल किया था। जब देखा, तुम कोई जवाब न दे रहे हो तो समझ गया, पृथिवी पर आ पहुंचा हूं। मेहनत बेकार साबित हुई। छिः छिः इतनी दूर आने पर ! और एक बार ऐसा ही हुआ था। जाना था बुध पर और चला गया बृहस्पति पर। एक दिन का अन्तर हुआ, और क्या, हैं हैं हैं।"

बंकु बाबू क्या कहें, उनकी समझ में नहीं आया। इसके अलावा उन्हें यों ही बेचैनी जैसी लग रही थी, क्योंकि वह प्राणी अपनी पतली-पतली उंगलियों से उनके हाथ-पैर दबा-दबाकर देखने लगा था।

दबाना बन्द करके वह प्राणी बोला, "मैं केनियस ग्रह का मांग हूं। आदमी से बहुत ही ऊंचे स्तर का प्राणी।"

यह लिकलिक-सा चार फुट का प्राणी मनुष्य से ऊंचे स्तर का है ? कहने से ही हो गया ? बंकु बाबू को हंसने की इच्छा हुई।

लेकिन आश्चर्य की बात, उस प्राणी ने बंकु बाबू के मन का भाव समझ लिया। वह बोला, "इसमें अविश्वास करने की कोई बात नहीं। इसका सबूत है।... तुम कितनी भाषाएं जानते हो ?"

बंकु बाबू ने सर खुजलाते हुए कहा, "बंगला, अंग्रेजी और थो हिन्दी यानी..."

"यानी ढाई भाषाएं।"

"हां वह..."

"मैं चौदह हजार भाषाएं जानता हूं। तुम्हारे सौर जगत् में ऐसी कोई भाषा नहीं, जिसे मैं न जानता होऊं। इसके अलावा दूसरे-दूसरे एकतीस ग्रहों की भाषाओं की मुझे जानकारी है। इनमें से पचीस ग्रहों में मैं खुद जा चुका हू। तुम्हारी उम्र कितनी है ?"

"पचास।"

"मेरी उम्र है आठ सौ तैंतीस वर्ष। तुम जानवर खाते हो ?"

बंकु बाबू ने अभी-अभी कुछ दिन पहले काली पूजा में बकरे का मांस खाया था। इनकार करें तो कैसे ?

याग ने कहा, "हम नहीं खाते। कुछ सौ साल पहले ही हमने ख छोड़ दिया है। पहले खाते थे। हो सकता है मैं तुम्हें भी खा जाता।"

बंकु बाबू भय से सिहर उठे।

“यह वस्तु देख रहे हो न ?”

याग ने ककड़ की तरह एक वस्तु बकु बाबू के हाथ में रस दी। उस हाथ में लेते ही बकु बाबू के सर्वांग में ऐसी सिहरन दौड़ गई कि उन्होंने तत्काल उस पर्यटन को वापस कर दिया।

याग ने हंमकर कहा, “चूँकि यह वस्तु मेरे हाथ में थी, इसलिए तुम उस वक़्त आगे नहीं बढ़ पाए। कोई आगे नहीं बढ़ सकता है। दुश्मन को बिना घायल किए शक्तिहीन बना देने वाली ऐसी कोई दूसरी वस्तु नहीं है।”

बकु बाबू जब सचमुच हैरान हो गए—हैं !

याग ने कहा, “ऐसी कोई जगह या दृश्य बताओ जिसे तुम देखना चाहते हो पर देशना संभव नहीं हो पाता हो।”

बकु बाबू ने सोचा, सारी दुनिया ही देखने को बाकी रह गई है। भूगोल पढ़ाता हूँ मगर बंगाल के कुछ गाव और शहर के अन्धावा मैंने देखा ही क्या है ? बंगाल को ही पूरा कहां देख पाया हूँ ? हिमालय की बर्फ नहीं देखी है, दीघा का समुद्र नहीं देखा है, सुन्दरवन का जंगल नहीं देखा है—यहां तक कि शिवपुर के बगीचे के बरगद के उस दरखत तक को मैंने नहीं देखा है।

बकु बाबू ने कहा, “मैंने बहुत कुछ देखा ही नहीं है। जैसे गरम मुल्क के आदमी। इसलिए उत्तरी ध्रुव को देखने की बड़ी ही इच्छा होती है।”

याग ने शीशा लगी हुई एक नली निकालकर बकु बाबू के चेहरे के सामने रखा और कहा, “इसे आंखों पर लगाओ।”

आंखों पर लगाते ही बकु बाबू के रोंगटे खड़े हो गए। यह क्या सम्भव है ? उनकी आंखों के सामने बर्फ की मरुभूमि फैली है। उस मरुभूमि के बीच-बीच में मस्तक ऊंचा किए पर्वत के समान तुपारखंड खड़े हैं। ऊपर, चटख नीले आकाश में इंद्रधनुष के रंगों में बने चित्र धाज-क्षण रूप बदल रहे हैं... अरोरा दोगियालिम। वह क्या है ? वह क्या है ? इगलू वह रहा ध्रुवीय भालू का भुण्ड। और वह पेंगुइन की जमात। वह कौन-सा बीभत्स जानवर है ? गौर से देखने के बाद बकु बाबू ने पहचाना—यह दरियाई घोड़ा है। एक नहीं, दो हैं। भयंकर लड़ाई चल रही है। मूली की तरह जुड़े दांतों को एक ने दूसरे के शरीर पर गड़ा दिया। शुभ्र हिम-शय्या पर साल रक्त की धारा बहने लगी।...

पूत की ठंड में बर्फ का दृश्य देखकर बकु बाबू के शरीर से पसीना छूटने लगा।

याग ने कहा, “आजिल जाने की तुम्हें इच्छा नहीं होती है ?”

बंकु बाबू को मांसखोर पिरान्हा मछली की याद आ गई। आश्चर्य है ! इस प्राणी को उनके मन की बातों का कैसे पता चल जाता है ?

बंकु बाबू ने नली को फिर आंखों से लगाया।

घना जंगल। दुर्भेद अंधकार में लता-गुल्मों की फांक से पिघलकर आती हुई घघ की घिगलियां। एक ओर एक विशाल वृक्ष है। उस पर कौन सी चीज लटकी हुई है ? बाप रे, इतने बड़े सांप की बंकु बाबू ने कभी कल्पना तक न की थी। अचानक उन्हें याद आया कि कहीं उन्होंने ग्राजील के ऐनाकडा के बारे में पढ़ा है। यह तो अजगर का बाप है। लेकिन मछली कहां है ? वह रही नहर। दोनों किनारे परती जमीन पर घड़ियाल बदन में घुप लगा रहे हैं। घड़ियालों की जमात पर जमात है। उनमें से एक की देह में हलचल होती है। वह पानी में उतरने जा रहा है। वह झपाक से कूद पड़ा। बंकु बाबू को आवाज तक सुनाई पड़ी। लेकिन यह क्या हुआ ? घड़ियाल पानी से बिजली की गति से क्यों बाहर निकल आया ? बंकु बाबू ने फटी-फटी आंखों से देखा, घड़ियाल के निचले हिस्से में मांस नामक चीज नहीं के बराबर है, सिर्फ हड्डिया बची हुई हैं। देह के बाकी हिस्से को पांच दांतवाली मछलियां दनादन निगलती जा रही हैं।

बंकु बाबू से अब देखा नहीं गया। उनके हाथ-पैर धरधराने लगे, माया धकराने लगा।

यांग ने कहा, “अब विश्वास हो रहा है न, कि हम श्रेष्ठ हैं।”

बंकु बाबू ने जीभ से होठ चाटते हुए कहा, “बात तो सही है। बिलकुल सही। आप लोग असाधारण हैं। हमसे सौ गुना आगे।”

यांग ने कहा, “ठीक है। तुमको देखकर और तुम्हारे हाथ-पांव दबाने के बाद लगता है, निकृष्ट कोटि के प्राणी होने के बावजूद तुम आदमी के लिहाज से बुरे नहीं हो। तब हां, तुम में दोष इतना ही है कि तुम बहुत ज्यादा निरीह हो और यही वजह है कि तुम जीवन में उन्नति नहीं कर सके। अन्याय का विरोध नहीं करना या चुपचाप अपमान बरदाश्त कर लेना आदमी क्या, किसी भी प्राणी को शोभा नहीं देता। खैर, तुममें जान-पहचान होने की कोई बात न थी, लेकिन हो गई तो अच्छा ही महसूस हुआ। तब हां, पृथ्वी पर ज्यादा बक्त बरबाद करने से कोई फायदा नहीं। मैं जा रहा हूँ।”

बंकु बाबू ने कहा, “अच्छा, जाइए, यांग बाबू। आपसे जान-पहचान होने के कारण मैं भी बहुत....”

बंकु बाबू का वाक्य पूरा न हो पाया। पलक गिरते न गिरते यांग कब रॉकेट के अन्दर चला गया और कब रॉकेट पंचा घोष की बंसवारी से ऊपर

जाकर आंखों से ओझल हो गया। इसका बंकु बाबू को पता तक न चला। सहसा उन्हें प्रतीत हुआ कि भीगुरो ने फिर मे बोलना शुरू कर दिया है। रात काफी ढल चुकी है।

घर लौटते वक़्त बंकु बाबू को एक आश्चर्यजनक भाव का बोध हुआ। कितनी बड़ी घटना उनके जीवन में घटित हो गई! कुछ क्षण पहले वे उसे ठीक-ठीक समझ नहीं सके थे। कहा सौर जगत् का कौन-सा ग्रह, जिसका नाम तक किसी ने सुना नहीं, उसी ग्रह का एक आदमी—आदमी नहीं बल्कि याग—आकर उससे बातचीत कर गया। कितने अचरज की बात है! कितना अद्भुत। तमाम दुनिया में और किसी दूसरे से नहीं, सिर्फ उसी से बातचीत की। उनसे यानी बंकु विहारी दत्त, कांकुड गाछी प्राइमरी स्कूल के भूगोल और बगला के शिक्षक से। आज, अभी से अन्ततः एक अनुभव के सन्दर्भ में, वे सारी दुनिया में अकेले हैं।

बंकु बाबू ने देखा, अब वे चल नहीं रहे हैं बल्कि नाच रहे हैं।



दूसरे दिन रविवार था। श्रीपति बाबू के मकान पर जोर-शोर से अड्डेब जी जमी थी। कल के प्रकाश की खबर आज अखबार में छपी है लेकिन जो कुछ छपा है, नगण्य ही है। बगल के मात्र दो-चार स्थानों में वह प्रकाश देखा गया था। इसीलिए उसे पलाइंग साँसर या उड़नतश्तरी समझा जा रहा था।

आज अड्डे पर पचा घोप भी पहुंचे हैं। उनकी चालीस बीघे की ज़मवारी में जो डबरा है उसके चारों तरफ के बांसों में से दस बास रातों रात नगे हो गये हैं। सरदियों में बास के पत्ते भरते ज़रूर हैं मगर एकाएक इस तरह ठूठ हो जाना बड़ा ही अस्वाभाविक है। इसी विषय पर बातचीत का दौर चल रहा था कि तभी भैरव चक्रवर्ती ने एकाएक कहा, "आज बंकु को आने में देर क्यों हो रही है?"

वाल तो सही है, अब तक किसी ने इस पर ध्यान नहीं दिया था।

निधु मुक्तार ने कहा, "बाका क्या आज आसानी से इधर आएगा? कल जवान खोलने के कारण उसकी इतनी दुर्गति हुई थी कि कुछ मत पूछो!"

श्रीपति बाबू ने चिन्ता के स्वर में कहा, "यह कहने से कैसे चलेगा? बंकु का होना ज़रूरी है। राम कन्हैया, तुम जाओ और उसे पकड़कर यहाँ ले आओ।"

"चाय पी लूँ फिर जाऊंगा", इतना कहकर रामकन्हैया चाय की प्याली

को होंठों से लगाने ही जा रहा था कि बंकु बाबू ने कमरे में प्रवेश किया।

‘प्रवेश किया’ कहना पर्याप्त नहीं लगता है। मानो, तूफान के एक हल्के भोंके ने कमरे में अन्दर आकर सबको हैरत में डाल दिया।

उसके बाद तूफान का खेल शुरू हुआ। शुरू में बंकु बाबू ने एक मिनट तक कहकहा लगाया—ऐसा कहकहा इसके पहले किसी ने कभी सुना न था। खुद बंकु बाबू ने भी न सुना था।

उसके बाद हसना रोककर, जोरों से खलार कर, गम्भीर स्वर में कहना शुरू किया : दोस्तो ! मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ आपको यह सूचना दे रहा हूँ कि इस अड़्डे पर मेरा आज का आना आखिरी आना है। आप लोगों के दिल को त्यागने के पूर्व आप लोगों के सामने कुछ शब्द प्रकट करना चाहता हूँ और मैं इसी उद्देश्य से यहाँ आया हूँ। नम्बर एक—जो सब पर लागू होता है—आप लोग सभी बेकार का बकवास करते हैं। जिस विषय की जानकारी न हो और उस पर बहुत ज्यादा बोला जाए तो लोग बोलने वाले को बेवकूफ कहते हैं। नम्बर दो—यह बात मैं चंडीबाबू से कह रहा हूँ—आप लोगों की जितनी उम्र हो चुकी है, उस उम्र में दूसरे का छाता-जूता छिपा देना न केवल अन्याय है, बल्कि बचपना भी है। कृपया मेरा छाता और क्लथई कैनवैस के जूते कल तक मेरे घर पहुँचा दें। निधु बाबू, आप अगर मुझे बाँका कहकर पुकारिएगा तो मैं आपको जोका कहकर पुकारूँगा। आपको यह बात समझ लेनी चाहिए। और श्योपति बाबू, आप गण्यमान्य व्यक्ति हैं, आपको मुसाहिबों की जरूरत है। मगर आप समझ लें कि मैं उस दल में नहीं हूँ। अगर आप कहें तो मैं अपनी पालतू बिल्ली आपके पास भेज दे सकता हूँ। वह बहुत ही अच्छे तरीके से पाँव चाट सकती है। ...अरे, पंचा बाबू भी आए हैं। आपको भी ममाचार दे दूँ—कल रात फ्रेनियस ग्रह से यांग नाम का व्यक्ति आकर बसवारी के डबरे में उतरा था। वह आदमी—बुड़ी, यांग बड़ा ही भला है।”

यह कहकर बंकु बाबू ने अपने बाएँ हाथ से भँवर चक्रवर्ती की पीठ पर एक चपत जमाई और दर्प के साथ कमरे से बाहर निकल आए।

ठीक उसी क्षण रामकन्हैयाई के हाथ से चाय से भरी प्याली नीचे गिर पड़ी और सभी के कपड़े-लत्ते गरम चाय से तर हो गए।

## विपिन चौधरी का स्मृतिभ्रम

विपिन चौधरी हर सोमवार को दफ्तर से लौटने के बख्त न्यू मार्केट के कालीचरण की दुकान से किताबें खरीद कर लेते हैं। जासूसी किताबें, रहस्य रोमांच की पुस्तकें, भूत-प्रेत की कहानियाँ। एक साय कम से कम पांच पुस्तकें बिना खरीदें उनके हफ्ते भर का खुराक पूरा नहीं होता है। पर पर वे अकेले हैं। लोगो से मिलना-जुलना उन्हें अच्छा नहीं लगता, अट्टेबाजी करने का नशा नहीं है, दोस्त-मित्रों की संख्या भी बहुत कम है। शाम के समय जो आदमी काम से उनके घर आते हैं, काम सम्म होते ही वे वापस चले जाते हैं। जो लोग उठते नहीं या उठना नहीं चाहते, सवा आठ बजते ही विपिन बाबू उनसे कहते हैं, “डॉक्टरों ने मुझे आदेश दिया है कि साढ़े आठ तक मैं भोजन कर लिया करूँ। अन्यथा मत लें...” खाना खाने के बाद वे आधे घंटे तक विश्राम करते हैं, उसके बाद हाथ में कहानी की किताब लेकर सीधे बिस्तर पर चले जाते हैं। यह नियम कितने दिनों से चल रहा है। खुद विपिन बाबू को इसके बारे में पता नहीं है।

आज कालीचरण की दुकान में किताबों को उलटते-पुलटते समय विपिन बाबू को लगा, कोई आदमी कुछ देर से उनकी बगल में सड़ा है। विपिन बाबू ने सिर उठाकर देखा। एक मोटा थुलथुले बदन का आदमी चेहरे पर सरलता का भाव लिए उनकी ओर देखकर मुमकरा रहा है।

“शायद आप मुझे पहचान नहीं रहे हैं ?”

विपिन बाबू को थोड़ी-बहुत धबराहट महसूस हुई। उन्हें यह बात कहा याद आ रही है कि उम्र व्यक्ति को वे जानते-पहचानते हैं। ऐसा कोई चेहरा भी उन्हें याद नहीं आ रहा है।

“यह जरूर है कि आप व्यस्त आदमी हैं। बहुत तरह के आदमियों से हर रोज आपकी मुलाकात होती है, इसीलिए शायद...”

“आपसे इसके पहले मेरी जान-पहचान हुई थी ?” विपिन बाबू ने पूछा।

उस आदमी ने तनिक हैरत में आकर कहा, “सात दिनों तक दोनों बख्त आपसे भेंट होती रही है। मैंने गाड़ी का इन्तजाम कर दिया, उसी

गाड़ी से आप हुंझू का जलप्रपात देख आए। यह बात उन्नीस सौ अट्ठावन की है—रांची की। मेरा नाम है परिमल घोष।”

“रांची?” अब विपिन बाबू की समझ में आया, गलती उनकी नहीं, उसी व्यक्ति की है। क्योंकि विपिन बाबू आज तक रांची नहीं गए हैं। जाने के बारे में बहुत बार सोचा था, लेकिन जाना ही नहीं पाया। विपिन बाबू ने मुमकराकर कहा, “मैं कौन हूँ—यह आप जानते हैं?”

उस आदमी ने आश्चर्य में आकर कहा, “आप कौन है, यह बात भला मैं नहीं जानूंगा? आप क्या कह रहे हैं? विपिन चौधरी को कौन नहीं जानता?”

विपिन बाबू ने बाहर की ओर ताकते हुए मीठे स्वर में कहा, “फिर भी आप गलती में हैं। बीच-बीच में ऐसा होता है। मैं कभी रांची नहीं गया हूँ।”

अब उस आदमी ने जोरों का एक ठहका लगाया।

“आप क्या कह रहे हैं मिस्टर चौधरी? जलप्रपात देखने के लिए जाने पर आपको पत्यर से चोट लगी और आपका घुटना छिल गया था। मैंने ही आइडिन लाकर दिया था। दूसरे दिन नेतरहाट जाने के लिए मैं गाड़ी लेकर आया था। पाव में दर्द रहने के कारण आप जा नहीं सके थे। कुछ भी आपको याद नहीं आ रहा है? आपकी जान-पहचान के एक व्यक्ति भी उस बार गए थे—दीनेश मुखर्जी। आपने एक बंगला किराये पर लिया था। आपने बताया था, होटल में भोजन करना आपको अच्छा नहीं लगता है। अच्छा यही रहेगा कि बावर्ची रखकर रसोई बनवा लिया करेंगे। दीनेश मुखोपाध्याय अपनी बहन के घर पर ठहरे थे। चांद पर जाने के बारे में आप दोनों में एक दिन वहस छिड़ गई थी। आपको याद नहीं आ रहा? सब भुला बैठे? और बताऊं, आपके कंधे पर एक झोला लटक रहा था और उसमें कहानी की किताबें थीं। आप बाहर जाते थे तो उसे साथ ले लेते थे। कहिए, ठीक कह रहा हूँ न?”

विपिन बाबू ने गम्भीर और समत स्वर में कहा, “आप अट्ठावन के किस महीने की बात कह रहे हैं?”

उस आदमी ने कहा, “महालय के ठीक बाद की बात है। या तो आसिन या कार्तिक महीना होगा।”

विपिन बाबू ने कहा, “जी नहीं। उस वर्ष पूजा के अवसर पर मैं कानपुर में अपने एक मित्र के मकान पर था। आप गलती कर रहे हैं। नमस्कार!”

लेकिन वह आदमी गया नहीं। अवाक्-अपलक दृष्टि से विपिन बाबू,

की ओर ताकता हुआ बड़बुडाने लगा, "कितने आश्चर्य की बात है ! एक दिन शाम के वक्त आपके बगले के ओसारे पर बैठकर मैंने चाय पी थी। आपने अपने परिवार के बारे में बताया था, कि आपके कोई सतान नहीं है, कि आपकी पत्नी का देहान्त बारह-तेरह वर्ष पूर्व हो चुका है, कि आपका एकमात्र भाई पागल है और यही वजह है कि आप पागलखाना देखने नहीं गए। आपने कहा . "भाई की बातें याद आ जाती हैं..."

विपिन बाबू जब पुस्तक की कीमत चकाकर लौटने लगे, उस समय भी वह आदमी उनकी ओर फटी-फटी आंखों से ताक रहा था।

बारट्राम स्ट्रीट के 'लाइट हाउस' सिनेमा के पास विपिन चौधरी की ब्यूक गाड़ी खड़ी थी। गाड़ी के अन्दर आकर उन्होंने ड्राइवर से कहा, "जरा गंगा के किनारे से होते हुए चलो, सीताराम।"

चलती गाड़ी में दिमाग जब थोड़ा ठंडा हुआ तो विपिन बाबू की अफ-सोस होने लगा। बेकार और घुस आदमी को उन्होंने इतना वक्त व्यर्थ ही दिया। रांची वे नहीं गए थे, कभी नहीं। मात्र छह-सात बरसों की स्मृति आदमी इतनी सरलता से भूल नहीं सकता, अगर...

विपिन बाबू का दिमाग एकाएक चक्कर काटने लगा।

अगर उनका दिमाग गढ़बड़ा न गया हो।

किन्तु वैसा क्यों होने लगा। वे मजे से दफतर में काम कर रहे हैं। इतना बड़ा दफतर है—इतनी बड़ी जिम्मेदारी का काम है। कहीं किसी प्रकार की त्रुटि हो रही हो, उन्हें मालूम नहीं। आज भी उन्होंने एक बैठक में आधे घंटे तक भाषण दिया है।

परन्तु...

परन्तु उस आदमी को इनके बारे में इतनी जानकारी कैसे हासिल हुई ?—किताबों की भोजी, पत्नी की मृत्यु, भाई के पागलपन की बातें ! गलती हुई है सिर्फ रांची के मामले में ही। गलती क्यों कहा जाए, बल्कि जान-सुनकर वह झूठ बोला है। अट्ठावन के आसिन महीने में वे रांची नहीं गए थे; गए थे तो कानपुर और वह भी अपने मित्र हरिदास बागची के घर पर। हरिदास को लिखने से ही...न, हरिदास को पत्र लिखना न हो पाएगा।

विपिन बाबू को सहसा याद आया, हरिदास बागची आज से एक मास पूर्व अपने कारोबार के सदभ्रं में सपत्नीक जापान गए हुए हैं। जापान का पता विपिन बाबू को मालूम नहीं है। अतः पत्र लिखकर सबूत मंगाने का रास्ता बन्द हो गया है।

मगर सबूत की आवश्यकता ही क्या है ? अगर ऐसा हुआ होता कि



उन्नीस सौ अट्ठावन के आसिन महीने में रांची को किसी हत्या के सम्बन्ध में पुलिस उन्हें अपराधी साबित करने की कोशिश करती तो उन्हें हरिदास बागची से चिट्ठी प्राप्त करने की जरूरत पड़ती। उन्हें खुद पता है कि वे रांची नहीं गए थे। वस, भ्रमभ्रम समाप्त।

गंगा की हवा लगने से यद्यपि विपिन चौधरी का दिमाग बहुत कुछ ठंडा हो गया, लेकिन मन में एक खटका, एक अशांति-बोध बना रहा।

हेस्टिंग्स के पास जाने पर विपिन बाबू ने अपने पैट के कपड़े को मोड़-कर ऊपर उठाते हुए देखा कि दाहिने घुटने पर एक इंच लम्बा दाग है या नहीं। वह दाग कब का है, समझ में नहीं आया। बचपन में कभी झटका खाकर गिरने से विपिन बाबू का घुटना छिल गया था? बहुत-बहुत कोशिश करने के बावजूद वैसे कोई बात उन्हें याद नहीं आई।

चक्रकहागा के पाग आने पर उन्हें दीनेश मुखर्जी की याद आई। उस आदमी ने बताया है कि दीनेश मुखर्जी भी उन दिनों रांची में ही था। फिर दीनेश को पूछने से ही काम बन जाएगा। वह निकट ही रहता है—बेणी-नंदन स्ट्रीट में। क्या अभी तुरन्त उनके पास चलूं? किन्तु रांची जाने की बात अगर असत्य हो तो दीनेश से उसके संदर्भ में कुछ पूछने पर वह विपिन बाबू को पागल करार कर देगा। नहीं-नहीं; यह बचकना उनके लिए किसी भी हासल में संभव नहीं है। अपने-आपको यो कसौटी पर कसकर बेवकूफ बनाना कोई मानी नहीं रखता। और, दीनेश का व्यंग्य कितना निर्भय हो सकता है, विपिन बाबू इसके अनुभववी रह चुके हैं।...

पर वापस आने पर, ठंडे कमरे में बैठकर, ठंडा शबंत पीने के बाद विपिन बाबू की उद्विग्नता बहुत-कुछ कम हो गई। वह आदमी बेकार लोगों की जमात का मालूम होता है। कोई काम नहीं है, इसीलिए काम के आदमियों को पकड़-पकड़कर परेशान करता है।

रात में खाना खाने के बाद विपिन बाबू जब नयी किताब लेकर विद्या-वन पर लेटे तो न्यू मार्केट में उस आदमी से जो बातें हुई थीं, उनके ध्यान से उतर गईं।

दूसरे दिन दफ्तर में काम करते-करते विपिन बाबू को लगा, ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा है। कल की घटना उनकी स्मृति में उतनी ही स्पष्ट होती जा रही है। वही गोल-गोल-सा बेहरा, आंखों की सरल दृष्टि और मुसकराहट उन्हें याद आने लगी। उस आदमी को जब उनकी अन्धरूनी बातों की इतनी जानकारी है तो रांची के बारे में उसने इतनी

यपों की ?

सच के ठीक पहले—यानी जब एक बजने में पांच मिनट बाकी थे— विपिन बाबू अपने-आपको रायत नहीं रग सके और टेलीफोन की डाय-रेक्टरी छोलकर बैठ गए। दीनेश मुखर्जी को फोन करना होगा। फोन करना ही अच्छा रहेगा। इसमें घबराने की कम गुंजाइश रहती है।

ट-प्पी-फाइव-सिक्स-वन-सिक्स।

विपिन बाबू ने टामल किया।

“हेलो !”

“कौन—दीनेश ? मैं विपिन बोल रहा हूँ।”

“क्या खबर है ?”

“दो अट्ठावन की एक घटना तुम्हें याद है या नहीं—यही जानने-के लिए फोन कर रहा हूँ।”

“अट्ठावन ? कौन-सा घटना के बारे में पढ़ना है ?”

“उस वयं क्या तुम कलकत्ते में ही थे ? पहले मैं यही जानना चाहता हूँ।”

“ठहरो। अट्ठावन—फिगट्री एट... ठहरो, अपनी डायरी देख लूँ। जरा धामे रहो।”

कुछ देर तक चुप्पी रेंगती रही। विपिन बाबू को अपने सीने के अन्दर एक तरह की कपकपी का अनुभव होने लगा। लगभग एक मिनट के बाद दीनेश मुखर्जी का स्वर सुनाई पडा।

“हा मिल गया। मैं दो बार बाहर गया था।”

“एक बार फरवरी में गया था—पास ही—केस्टो नगर। मेरे एक भाजे की शादी थी। और दूसरी बार... वह तो तुम्हें ही मालूम ही होगा। वही राची। उस बार तुम भी गए थे। मगर पूछ क्यों रहे हो ?”

“एक जरूरत थी। ठीक है। थैंक यू...”

विपिन बाबू ने टेलीफोन रख दिया और सिर पर हाथ रतकर बैठ गए। उनके कानों में भाय-भाय शब्द गूजने लगा, हाय-पांव जैसे बिलकुल ठडे हो गए। साथ में जो टिफिन-बॉक्स लाए थे, उसमें सबविच था। उन्होंने उसे खाय़ा तक नहीं। खाने की इच्छा नहीं हुई। उनकी भूख भाग गई।

सच का वक़्त जब गुज़र गया तो विपिन बाबू ने सोचा, ऐसी स्थिति में उनके लिए दपतर में बैठकर काम करना असम्भव है। पचीस बरसों से वे काम करते आ रहे हैं मगर कभी ऐसा नहीं हुआ। निरलस और कर्मठ के रूप में उनकी ख्याति थी। कर्मचारीगण उनसे बैसे ही डरते थे जैसे लोग शेर को देखकर डरते हैं। चाहे जितनी ही विपत्तियाँ क्यों न आए, चाहे

कितनी ही बड़ी समस्या का सामना क्यों न करना पड़े, कभी वे मतिघ्रम के शिकार नहीं होते थे। ठंडे दिमाग से काम करते हुए वे हमेशा विपत्तियों पर जय प्राप्त करते आए हैं।

लेकिन आज सब गड़बड़ा गया है।

ढाई बजे विपिन बाबू घर लौट आए और तमाम खिडकियां और दरवाजे बन्द कर बिछावन पर लेट गए, फिर अपने मन को स्वाभाविक स्थिति में लाकर सोचने लगे कि क्या करना चाहिए। सिर में चोट लगने या किसी प्रकार की दुर्घटना होने से आदमी अपनी पूर्व स्मृति बीच-बीच में खो बैठता है। लेकिन एक के अलावा तमाम बातें याद हों—ऐसा कोई उदाहरण उन्हें कभी नहीं मिला है। उन्हें बहुत दिनों से राची जाने की इच्छा थी। वे राची गए हों और इस बात को भुला बैठे हों, यह विलकुल असंभव है।

विपिन बाबू जब-जब बाहर जाते हैं तो बेयरा को अपने साथ ले जाते हैं। लेकिन उनके साथ आजकल जो बेयरा है, वह नया आदमी है। सात वर्ष पूर्व राम स्वरूप उनका बेयरा था। अगर वे रांची गए होंगे तो वह भी निश्चितरूपेण उनके साथ होगा। परन्तु अब वह नहीं है, उसे गए तीन वर्ष बीत चुके हैं।

विपिन बाबू शाम तक अकेले ही अपने घर में रहे। मन ही मन तय किया कि अगर कोई उनके घर पर आएगा तो वे उससे नहीं मिलेंगे।

सात बजे नौकर ने आकर सूचना दी कि घनी व्यापारी सेठ गिरिधारी प्रसाद उनसे मिलने आए हैं। गिरिधारी प्रसाद नामी व्यक्ति है। परन्तु उस समय विपिन बाबू की मानसिक अवस्था ऐसी थी कि लाचार होकर उन्हें नौकर से कहना पड़ा कि वे नीचे उतरने में असमर्थ है। गिरिधारी प्रसाद भाड़ में जाएं।

साढ़े सात बजे नौकर फिर उनके पास आया। विपिन बाबू तद्रा की हालत में थे। एक बुरे सपने की धुँधलात हो गई थी। तभी नौकर की पुकार से उनकी नींद खुव गई। अबकी कौन आया? नौकर ने कहा, “चुन्नी बाबू। कह रहे हैं कि बहुत जरूरी काम है।”

जरूरत क्या हो सकती है, यह विपिन बाबू को मालूम है। चुन्नी स्कूल में उनका सहपाठी रह चुका है। आजकल दुरवस्था में फस गया है। कई दिनों से उनके पास नौकरी की उम्मीद में आ रहा है। विपिन बाबू उसके लिए कुछ कर नहीं सकते। यही वजह है कि हर बार उन्होंने कह दिया है: ‘नहीं होगा’। चुन्नी जोक की तरह पकड़ लेता है!

विपिन बाबू ने बेहद ऊब के साथ खबर भेज दी कि न केवल आज,

बल्कि एक लम्बे अरसे तक वे चुन्नी से नहीं मिल पाएंगे।

नौकर के कमरे से जाते ही विपिन बाबू को सयाल आया, हो सकता है, चुन्नी को अट्ठावन की घटना थोड़ी-बहुत माद हो। उससे एक बार पूछ लेने में हर्ज ही क्या है ?

विपिन बाबू जल्दी-जल्दी सीढ़िया तय कर नीचे बैठक गाने में आए। चुन्नी जाने को तैयार हो चुका था, विपिन बाबू को उतरते देखकर उसमें थोड़ी आशा बधी और वह मुडकर खड़ा हो गया।

विपिन बाबू ने बगैर किसी तरह की भूमिका बांधे कहा, "मृतो चुन्नी, तुमसे एक... यानी बेइतबार सयाल करना है। मुझे पता है, तुम्हारी स्मरण-शक्ति बड़ी तीव्र है। तुम मेरे घर पर लगातार कई बरसों में बीच-बीच में आते रहते हो। सोचकर देखो, तुम्हें याद आता है या नहीं—कि मैं सन् अट्ठावन में राची गया था या नहीं ?"

चुन्नी बोला, "अट्ठावन ? अट्ठावन ही होगा। या सन् उनसठ की बात है ?"

"राची जाने के विषय में तुम्हें कोई सदेह है ?"

चुन्नी को बड़ा ही अचंभा जैसा लगा।

"तुम्हें जाने के बारे में ही सदेह हो रहा है ?"

"मैं गया था ? तुम्हें ठीक-ठीक याद आ रहा है ?"

चुन्नी सोफे से उठ चुका था मगर फिर बैठ गया। उसके बाद वह कुछ देर तक विपिन चौधरी की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखता रहा और फिर बोला, "विपिन, आजकल तुम नशों का सेवन कर रहे हो क्या ? इसके बारे में तुम बदनाम नहीं थे। तुम रूढ़ स्वभाव के आदमी हो, मित्रों के प्रति तुममें कोई सवेदना नहीं है—इतना ही जानता था। लेकिन तुम्हारा दिमाग तो बिलकुल साफ था। कम से कम कुछ दिन पहले तक था।"

"मेरे जाने की बात तुम्हें याद है ?" विपिन बाबू की आवाज में धरधराहट थी।

इस बात का जवाब न देकर चुन्नी ने उनसे पूछा, "तुम्हें याद है कि इसके पहले मैं किस तरह की नौकरी कर रहा था ?"

"वाह क्या कहने। तुम डाब्लू स्टेशन में बुकिंग क्लर्क का काम करते थे !"

"तुमको यह बात याद है मगर मैंने ही तुम्हारे लिए राची की बुकिंग कराई थी—यह बात तुम्हें याद नहीं ? तुम जिस दिन जा रहे थे, तुम्हारे डिब्बे में जाकर मैं तुमसे मिला, डाईनिंग कार में खबर पहुंचाकर, तुम्हारे खाने का इन्तजाम करा दिया, तुम्हारे डिब्बे में पंखा चल नहीं रहा था,

आदमी बलाकर उसे चालू कराया। यह सब तुम भुला बंटे ? तुम्हें क्या हो गया है ?”

विपिन बाबू ने एक लम्बी सांस ली और वे घम से सोफे पर बैठ गए।

चुन्नी ने कहा, “तुम बीमार हो ? तुम्हारा चेहरा स्वस्थ जैसा नहीं दीख रहा है।”

विपिन बाबू ने कहा, “कुछ वैसा ही लग रहा है। कुछ दिनों तक कामों का दबाव बढ़ गया था। किसी स्पेशलिस्ट से मिलूंगा...”

शायद विपिन बाबू की हालत का ही खयाल कर चुन्नी ने नौकरी के सम्बन्ध में चर्चा नहीं की। वह आहिस्ता-आहिस्ता बैठक से बाहर निकल आया।



परेशचंद को नौजवान डॉक्टर कहा जा सकता है, बालीस से कम उम्र का है। चेहरे पर बृद्धि की दीप्ति छाई रहती है। विपिन बाबू के बारे में पता चलने पर वे चिंतित हो उठे। विपिन बाबू ने उनसे बुझे हुए स्वर में कहा, “देखिए डॉक्टर चन्द, आपको मेरी यह बीमारी दूर करनी ही है। दफ्तर न जाने के कारण मेरे कारोबार की कितनी हानि हो रही है, यह मैं आपको समझा नहीं सकता। आजकल तरह-तरह की दवाइयां निकल चुकी हैं। मेरी इस बीमारी के लिए कोई दवा नहीं है ? जितना भी रुपया-पैसा लगे, मैं दूंगा। अगर विदेश से मगाने की जरूरत पड़ेगी तो उसका भी इन्तजाम करूंगा। लेकिन यह बीमारी आपको ठीक करनी ही होगी।”

डॉक्टर ने कुछ देर तक सोचा-विचारा, फिर सिर हिलाते हुए कहा, “जानते हैं मिस्टर चौधरी, बात क्या है ? मेरे लिए यह बीमारी बिलकुल नई है, मेरे अनुभवों के दायरे के बाहर की है। तब हां, मैं एक उपाय बता सकता हूँ। कामयाबी हासिल होगी या नहीं—कह नहीं सकता, मगर आप अजमाइश करके देख सकते हैं। हानि होने की कोई आशका नहीं है।”

विपिन बाबू उत्कण्ठित होकर कुहनी के बल बैठ गए।

डॉक्टर ने कहा, “मुझे जहां तक याद है—और मुझे विश्वास है, आपकी भी अभी यही धारणा है—कि आप सचमुच रांची गए थे। लेकिन, कारण चाहे जो भी हो, जाने की बात आप बिलकुल भुला बंटे हैं। मेरी सलाह है कि आप एक बार फिर रांची जाएं। तब हो सकता है, जगह देखने पर आपको पहले की ट्रिप की बातें याद हो जाएं। यह असम्भव नहीं है। आज इस वक़्त और कुछ नहीं किया जा सकता है। मैं एक टिकिया का नाम लिख देता हूँ। उसे खाने से हो सकता है नींद आ जाए। नींद आना

खरूरी है यरना आपकी अदाति और साथ ही साथ आपकी बीमारी भी बढ़ जाएगी। आप एक मागज दें, मैं दवा का नाम लिग देता हूँ।"

चाहे टिकिया के कारण हो या चाहे डाक्टर की सलाह के कारण, दूसरे दिन सवेरे विपिन बाबू को अन्य दिनों की अपेक्षा स्वस्थता का अनुभव हुआ।

सवेरे के नाश्ते में निबटकर विपिन बाबू ने टेलीफोन से दफ्तर को बहुत नें आदेश दिए और उगी दिन राची की टिकट कटा ली।

दूसरे दिन राची स्टेशन पहुंचने ही उन्हें लगा, ये यहाँ बभी नहीं आए थे।

स्टेशन से बाहर आकर उन्होंने एक गाड़ी ठीक की ओर इधर-उधर का घबकर काटने लगे। घबकर काटने पर उन्हें लगा, यहाँ की राह-बाट मकान-इमारत, प्राकृतिक दृश्य, मोराबादी पहाड़, होटल, बंगला—किसी से उनका तनिक भी परिचय नहीं है। हुड़, जलप्रपात को वे पहचान पाएंगे? जल-प्रपात का दृश्य देखते ही उन्हें क्या पुरानी बातें याद आ जाएगी?

सुद उस बात पर विश्वास न होने पर भी, यह सोचकर कि कलकत्ता लौटने के बाद कहीं अनुताप न करना पड़े, एक गाड़ी का इन्तजाम कर दोपहर के बक्त हुड़ की ओर रखाना हुए।

उसी दिन तीसरे पहर पांच बजे एक पिकनिक पार्टी के दो गुजरातियों ने विपिन बाबू को अचेतन अवस्था में पर्यर के टीले के पास देसा। इन दोनों व्यक्तियों की धुध्रूपा के कारण विपिन बाबू होश में आए और बोले, "मैं राची नहीं आया था। मेरा सब बरबाद हो गया। अब कोई उम्मीद नहीं है..."

दूसरे दिन सवेरे विपिन बाबू कलकत्ता लौट आए। उन्होंने मान लिया कि अगर वे इम रहस्य का उद्घाटन नहीं कर सके तो सबमुच अब कोई आशा नहीं है। धीरे-धीरे वे अपनी कार्य-क्षमता, आत्म-विश्वास, उत्साह, बुद्धि, विवेचना—सब-कुछ रागे बैठेंगे। आखिर क्या उन्हें उसी रांची के...?

इसके बाद विपिन बाबू कुछ सोच नहीं सके। सोचना चाहा भी नहीं।...

पर लौटकर किमी तरह स्नान कर विपिन बाबू ने अपने सिर पर बर्फ की पैली रखी और बिछायन पर लेट गए। नौकर से कहा कि वह जाकर डॉक्टर को बुला जाए। जाने के पहले नौकर ने उनके हाथ में एक पत्र धमा-फर कहा, कोई आदमी इसे पत्र-पेटी में डाल गया था। हरे रंग का लिफाफा

था। उसके ऊपर लाल स्याही से लिखा था; 'श्री विपिन बिहारी चौधरी आवश्यक नितान्त व्यक्तिगत'।

तबियत खराब रहने के बावजूद न जाने क्यों, विपिन बाबू को लगा, पत्र पढ़ना जरूरी है। लिफाफा खोलकर देखा। पत्र में यही लिखा था :

प्रिय विपिन,

एकाएक बड़ा आदमी बन जाने का दुष्परिणाम तुममें देखने को मिलेगा, इसकी आशा नहीं थी। दुरवस्था में पड़े बचपन के एक मित्र के लिए कोई न कोई उपाय निकालना तुम्हारे लिए क्या असंभव था? मेरे पास वैसे नहीं हैं, मेरी सामर्थ्य साधारण ही है। मुझमें जो चीज है, वह है कल्पना-शक्ति। उसी में से कुछ खर्च कर तुमसे अदना-सा बदला लिया।

न्यू मार्केट के वह आदमी मेरे पड़ोसी हैं। वे नाम-गिरामी एक अभिनेता हैं। दीनेश मुखर्जी तुम्हारे प्रति सदैव नहीं है, यही वजह है कि उन्हें हाथ में करने में किसी प्रकार की असुविधा नहीं हुई। घुटने में चोट लगने की बात तुम्हें जरूर ही याद होगी—वही चांदपाल घाट में पिछड़कर गिरने की बात, सन् उन्नीस सौ छत्तीस में...?

अब क्या? अब तुम्हारी तबियत ठीक हो जाएगी। मेरा एक उपन्यास प्रकाशक ने पसन्द किया है। कुछ महीने उसी से गुजार लूंगा। इति।

तुम्हारा मित्र,  
चुन्नी लाल

डॉक्टर चंद के आते ही विपिन बाबू ने कहा, "मैं ठीक हूँ। राची स्टेशन पर उतरते ही सब कुछ याद आ गया।"

डॉक्टर ने कहा, "वेरी स्ट्रेंज! सोचता हूँ, आपका केस किसी डॉक्टरों जरनल में छपवा दूँ।"

विपिन बाबू ने कहा, "आपको इसीलिए बुलाया है कि देखिए कि मेरी कमर की हड्डी कहीं टूट तो नहीं गई है। राची में फिसलकर गिर पड़ा था। बहुत ही दर्द है।"

खरूरी है वरना आपकी अर्शांति और साप ही साप आपकी बीमारी भी बढ़ जाएगी। आप एक कागज दें, मैं दवा का नाम लिख देता हूँ।”

चाहे टिकिया के कारण हो या चाहे डाक्टर की सलाह के कारण, दूसरे दिन सवेरे विपिन बाबू को अन्य दिनों की अपेक्षा स्वस्थता का अनुभव हुआ।

सवेरे के नाश्ते से निबटकर विपिन बाबू ने टेलीफोन से दफ्तर को बहुत सं आदेश दिए और उसी दिन रांची की टिकट कटा ली।

दूसरे दिन रांची स्टेशन पहुंचते ही उन्हें लगा, वे यहां कभी नहीं आए थे।

स्टेशन से बाहर आकर उन्होंने एक गाड़ी ठीक की और इधर-उधर का चक्कर काटने लगे। चक्कर काटने पर उन्हें लगा, यहां की राह-बाट मकान-इमारत, प्राकृतिक दृश्य, मोराबादी पहाड़, होटल, बगला—किमी से उनका तनिक भी परिचय नहीं है। हंडू जलप्रपात को वे पहचान पाएंगे? जल-प्रपात का दृश्य देखते ही उन्हें क्या पुरानी बातें याद आ जाएगी?

खुद उस बात पर विश्वास न होने पर भी, यह सोचकर कि कलकत्ता लौटने के बाद कहीं अनुत्पाप न करना पड़े, एक गाड़ी का इन्तजाम कर दोपहर के बत हंडू की ओर रखाना हुए।

उसी दिन तीसरे पहर पांच बजे एक पिकनिक पार्टी के दो गुजरातियों ने विपिन बाबू को अचेतन अवस्था में पत्थर के टीले के पास देखा। इन दोनों व्यक्तियों की धुंधूपा के कारण विपिन बाबू होश में आए और बोले, “मैं रांची नहीं आया था। मेरा सब बरबाद हो गया। अब कोई उम्मीद नहीं है...”

दूसरे दिन सवेरे विपिन बाबू कलकत्ता लौट आए। उन्होंने मान लिया कि अगर वे इस रहस्य का उद्घाटन नहीं कर सके तो सचमुच अब कोई आशा नहीं है। धीरे-धीरे वे अपनी कार्य-क्षमता, आत्म-विश्वास, उत्साह, बुद्धि, विवेचना—सब कुछ खो बैठेंगे। आखिर क्या उन्हें उसी रांची के...?

इसके बाद विपिन बाबू कुछ सोच नहीं सके। सोचना चाहा भी नहीं।...

घर लौटकर किमी तरह स्नान कर विपिन बाबू ने अपने सिर पर बर्फ की घंली रखी और बिछावन पर लेट गए। नीकर से कहा कि वह जाकर डॉक्टर को बुला लाए। जाने के पहले नीकर ने उनके हाथ में एक पत्र थमाकर कहा, कोई आदमी इसे पत्र-पेटी में डाल गया था। हरे रंग का लिफाफा



था। उसके ऊपर लाल स्याही से लिखा था; 'श्री विपिन विहारी चौधरी आवश्यक नितान्त व्यक्तिगत'।

तबियत खराब रहने के बावजूद न जाने क्यों, विपिन बाबू को लगा, पत्र पढ़ना जरूरी है। लिफाफा खोलकर देखा। पत्र में यही लिखा था :

प्रिय विपिन,

एकाएक बड़ा आदमी बन जाने का दुष्परिणाम तुममें देखने को मिलेगा, इसकी आशा नहीं थी। दुरवस्था में पड़े बचपन के एक मित्र के लिए कोई न कोई उपाय निकालना तुम्हारे लिए क्या असंभव था? मेरे पास पैसे नहीं हैं, मेरी सामर्थ्य साधारण ही है। मुझमें जो चीज है, वह है कल्पना-शक्ति। उसी में से कुछ खर्च कर तुमसे अदना-सा बदला लिया।

न्यू मार्केट के वह आदमी मेरे पड़ोसी हैं। वे नाम-गिरामी एक अभिनेता हैं। दीनेश मुखर्जी तुम्हारे प्रति सदैव नहीं है, यही वजह है कि उन्हें हाथ में करने में किसी प्रकार की असुविधा नहीं हुई। घुटने में चोट लगने की बात तुम्हें जरूर ही याद होगी—वही चांदपाल घाट में पिछड़कर गिरने की बात, सन् उन्नीस सौ छत्तीस में...?

अब क्या? अब तुम्हारी तबियत ठीक हो जाएगी। मेरा एक उपन्यास प्रकाशक ने पसन्द किया है। कुछ महीने उसी से गुजार लूंगा। इति।

तुम्हारा मित्र,  
चुन्नी लाल

डॉक्टर चंद के आते ही विपिन बाबू ने कहा, "मैं ठीक हूँ। राची स्टेशन पर उतरते ही सब कुछ याद आ गया।"

डॉक्टर ने कहा, "बेरो स्ट्रेंज! सोचता हूँ, आपका केस किसी डॉक्टरों जरमन में छपवा दूँ।"

विपिन बाबू ने कहा, "आपको इसीलिए बुलाया है कि देखिए कि मेरी कमर की हड्डी कहीं टूट तो नहीं गई है। राची में फिसलकर गिर पड़ा था। बहुत ही दर्द है।"

## दो जादूगर

“पांच, छह, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह।”

सुरपति ने पेटियों की गिनती कर अपने असिस्टेंट अनिल की तरफ मुड़कर कहा, “ठीक है। सबको ब्रेकवन में भेज दो। अब सिर्फ पचीस मिनट बाकी है।”

अनिल ने कहा, “आपकी गाड़ी भी ठीक है, सर। कृपे। दो बर्य आपके नाम से रिजर्व करा लिया है। किसी तरह की असुविधा नहीं होगी।” उसके बाद मुसकराकर कहा, “गाड़ साहब भी आपके भक्त हैं। आपका शो ‘न्यू एम्पायर’ में देख चुके हैं। ओ सर, इधर आइए।”

गाड़ वीरेन बटशी ने खुलकर हंसते हुए अपना दाहिना हाथ सुरपति की ओर बढ़ा दिया।

“आइए सर, जिस हाथ की सफाई देखकर मैंने इतनी खुशियां हासिल की हैं, उस हाथ से एक बार हाथ मिलाकर अपने आपको कृतार्थ कर लूँ।”

सुरपति मंडल की ग्यारह पेटियों में से किसी एक की ओर देखते ही उसका परिचय मिल जाता है। हर पेट की बगल और डक्कन पर साफ-साफ बड़े हल्के में अंग्रेजी में लिखा है : ‘मडलस मिरकल्स’। इससे ज्यादा परिचय की जरूरत नहीं है, क्योंकि ठीक दो महीने पहले कलकत्ते के न्यू एम्पायर थियेटर में मंडल की जादूगरी का प्रमाण पाकर दर्शकों ने बार-बार तालियां पीट-पीटकर वाहवाही दी थी। अखबारों ने भी काफी प्रशंसा की थी। एक सप्ताह का कार्यक्रम भीड़ के कारण चार सप्ताहों तक चला था। फिर भी जैसे लोगों का मन नहीं भरा था। थियेटर के मालिक के अनुरोध से ही मंडल को वादा करना पड़ा है कि बड़े दिन की छुट्टियों में वह फिर से तमाशा दिखाएगा।

“कोई असुविधा हो तो बताइएगा, सर।”

गाड़ साहब ने सुरपति को उसके डिब्बे में बिठा दिया। सुरपति ने इधर-उधर देखकर इत्मीनान की एक सांस ली। बढ़िया डिब्बा है।

“अच्छा सर, फिर...”

“बहुत-बहुत धन्यवाद !”

गाड़ के जाने के बाद सुरपति ने अपनी बेंच के कोने में, सिड़की के पास उठकर बैठते हुए जेब से सिगरेट का पैकेट निकाला। शायद यह उसके विजय अभियान की शुरुआत है : दिल्ली, आगरा, इलाहाबाद, काशी, लखनऊ। इस सफर में इन्हीं कुछ स्थानों में जाना है। इसके बाद कितने ही प्रदेश बाकी हैं, कितने ही नगर, कितने ही उपनगर। और क्या सिर्फ हिन्दुस्तान ही ? उसके बाहर भी एक दुनिया है—विराट विस्तृत जगत्। बंगाली होने से क्या महत्वाकांक्षी नहीं होगा ? सुरपति दिखा देगा। अब तक जिस अमेरिका के जादूगर हुडिनी के धार में पढ़कर उसे रोमांच का अनुभव होता था, उमी अमेरिका में उसकी ह्याति फैल जाएगी। बंगालियों की दौड़ कहां तक हो सकती है, इसे वह दुनिया के लोगों के सामने प्रमाणित कर देगा। कुछ वर्ष गुजर जाएं। अभी तो कुल मिलाकर शुरू ही किया है।

हांफते हुए आकर अनिल ने कहा, “सब ठीक-ठाक है, सर। एवरीथिंग।”

“हालो को चेक कर लिया है ?”

“हां, सर।”

“गुड।”

“मैं दो बाँगी के बाद ही हूँ।”

“लाइन क्लियर हो गई है।”

“अभी-अभी हो चली। मैं चतता हूँ।...वर्धमान में आप चाय पीजिएगा क्या ?”

“मिले तो बुरा नहीं।”

“मैं ले आऊंगा।”

अनिल चला गया। सुरपति ने सिगरेट जलाकर सिड़की के बाहर अपनी आर्से फैला दी। कुली, मुसाफिर, खोमचेवाले प्लेटफार्म के दोनों ओर शोरगुल कर रहे हैं। उस ओर ताकते-ताकते सुरपति अनमनेपन में दूब गया। उसकी दृष्टि में धुंधलापन सिमट आया। स्टेशन का कोलाहल थम गया। उसका मन बहुत दूर, बहुत पीछे की ओर, चला गया। अभी उसकी उम्र तैंतीस साल है, उन दिनों वह सात या आठ साल का था। दिनारपुर जिले का एक छोटा-सा एक गांव—पांच पুকुर। शरद ऋतु की शीत दोपहर। एक बूढ़ी औरत टाट की झोली लिए मति मोदी की दुकान के ठीक सामने बरगद के पेड़ के तले बैठी है। बच्चे-बूढ़ों की भीड़ उसे घेर कर खड़ी है। बुढ़िया को उम्र क्या है ? साठ भी हो सकती है और नब्बे भी हो सकती है। तिकुड़े गालों पर असंख्य झुरियां हैं, हंसती है तो झुरियां

की सख्या दुगुनी हो जाती है। पोपले मुंह से धारा-प्रवाह बोले जा रही है। भानुमती का खेल।

बुढ़िया ने भानुमती का तमाशा दिखाया था। वही पहनी और अंतिम बार देखा था। लेकिन जो कुछ देखा था, सुरपति को वह भूला नहीं और न भूलेगा ही। उसकी दादी की भी उम्र पैसठ वर्ष है, मुई में घागा पिरांते वक्त सारा शरीर थरथर कापता है। लेकिन उम बुढ़िया के सिकुड़े हाथों में कितना जादू है। आंखों के सामने में एक हाथ, दो हाथ की दूरी पर रखी चीजों को फूक मारकर गायब कर देती है और फिर बात की बात में फूक मारकर बाहर निकाल देती है—रुपया, मार्बल, लट्टू, सुपारी, कबूतर।

यह जादू देखकर सुरपति की आंखों में बहुत दिनों तक नींद नहीं आई थी। उसके बाद जब नींद आई तो एक महीने तक वह बीच-बीच में नींद में चिल्ला उठता था : 'मैजिक, मैजिक'।

उसके बाद जब भी गांव में मेला लगता, सुरपति जादू की उम्मीद में वहां की दौड़ लगाता था। लेकिन उस तरह आश्चर्य में डालने वाली चीज फिर कभी उसकी आंखों के सामने नहीं आई।

जब सुरपति सोलह वर्ष का हुआ, वह कलकत्ते में अपने चाचा के विप्रदास स्ट्रीट के मकान में आकर रहने लगा। आने का उद्देश्य था इंटर-मिडिएट की पढाई पढना। कॉलेज की पुस्तकों के साथ-साथ वह जादू की पुस्तकें भी पढ़ता था। कलकत्ता आने पर दो-चार महीने के अन्दर ही सुरपति ने जादू की तमाम पुस्तकें खरीद ली और कुछ दिनों के अन्दर ही पुस्तकों के तमाम जादू सीख लिए। उसे ताश के बहुत से पैकेट खरीदने पड़े थे। घंटों तक आईने के सामने खड़ा होकर उसे जादूगरी का अभ्यास करना पड़ा था। कॉलेज में जब सरस्वती की पूजा होती या दोस्त मित्रों की जब सालगिरह मनाई जाती, सुरपति अपनी जादूगरी का प्रदर्शन करता था।

जब वह इंटरमिडियेट के द्वितीय वर्ष में था, उसे अपने मित्र गौतम की बहन की शादी के अवसर पर निमंत्रण मिला। सुरपति के जादूगरी सीखने के इतिहास में यह एक अविस्मरणीय दिवस है, क्योंकि इसी शादी के अवसर पर उसे त्रिपुरा बाबू से मिलने का मौका मिला था। स्विसहो स्ट्रीट की आलीशान इमारत के पीछे के मैदान में शमियाना खड़ा किया गया है। शमियाने के एक कोने में त्रिपुराचरण मल्लिक मेहमानों से घिरे एक दरी पर बैठे हैं। एकाएक अगर उनपर दृष्टि जाए तो वे बिलकुल नगण्य ही मालूम होंगे। उम्र चौबालीस वर्ष। घुंघराते बाल, माग कड़ी हुई।

हसमुख। होठों के कोनों में पान का दाग। राह-बाट में ऐसे धनमिन्नत आदमी दीख पड़ते हैं। किन्तु उसके सामने ही दरी पर जो कुछ घटित हो रहा है, यह देखकर उनके बारे में राय बदल देनी पड़ती है। गुरु में सुरपति अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं कर पाता है। चांदी की एक अठ्ठनी लुढ़कती हुई तीन हाथ के फासले पर रखी सोने की एक अंगूठी के पास जाती है, उसके बाद उम अंगूठी को अपने साथ लेकर त्रिपुरा बाबू के पास लौट आती है। सुरपति इतना अचकचा जाता है कि उममें तालिया पीटने की सामर्थ्य नहीं रह जाती है। उसके बाद जादूगरी के बहुत से करिश्मे दिखाए जाते हैं। गीतम के ताऊ जादू के तमाशे देखते हुए सिगरेट जलाना चाहते हैं कि सारी तालियां दियासलाई के बक्से से नीचे गिर पड़ती हैं। उनको झुकते हुए देखकर त्रिपुरा बाबू कहते हैं, "आप उठाने की तकलीफ क्यों कर रहे हैं सर। मुझे दीजिए, उठा देता हूँ।"

उमके बाद तालियों को दरी के एक कोने में जमा करके अपने बाएं हाथ में दियासलाई का टब्बा लेकर त्रिपुरा बाबू पुकारते हैं, "आ तू तू तू, आ-आ-आ..."

और तालियां पालतू बिल्ली-शुत्ते की तरह एक-एक कर दिब्बे के अन्दर आने लगती हैं।

उस रात खाना-पीना खत्म होने के बाद सुरपति ने त्रिपुरा बाबू को एकांत में पाकर उनसे जान-पहचान की। सुरपति में जादूगरी के प्रति लगाव देखकर उन्हें बड़ा ही आश्चर्य लगा। उन्होंने कहा, "बंगाली जादू देखते हैं और चले जाते हैं। देखने वालों की तादाद उतनी रहती नहीं। तुममें इसके प्रति दिलचस्पी देखकर सचमुच मैं हैरान रह गया।"

इसके दो दिन बाद सुरपति त्रिपुरा बाबू के घर पर जाता है। उसे मकान कहना ठीक न होगा। मिर्जापुर स्ट्रीट के एक मेस का टूटा-फूटा एक कमरा। अभाव और दरिद्रता की ऐसी धवल सुरपति की निगाह में कभी नहीं आई थी। त्रिपुरा बाबू सुरपति से अपनी जीविका के बारे में बताने लगे। जादूगरी दिखाने के लिए ये पचास रुपये बतौर फीस के लेते हैं। महीने में दो बायने भी मिल जाएं, इसमें सदेह है। कोशिश करते तो और अधिक कमा सकते थे, लेकिन त्रिपुरा बाबू में कोशिश का अभाव है। इतने गुणी व्यक्ति में महत्वाकांक्षा का इतना अभाव हो सकता है, सुरपति ने इसकी कल्पना नहीं की थी। जब उसने इनके घारे में जिक्र किया तो त्रिपुरा बाबू ने कहा, "क्या हो सकता है? इम गए-गुजरे मूलक में अच्छी चीज की कौन कद्र करता है? कितने ऐसे आदमी हैं जिनमें सचमुच कला की ममभदारी हो? उस दिन विवाह की मजलिस में तुमने जादूगरी की इतनी

तारीफ की, लेकिन चिमी और मे कहीं इतनी तारीफ मुझे की चिमी ? जैसे ही खबर आई कि पत्र लिख गए हैं, सभी मंत्रिब छोड़कर हजरतों हुए बैठ-जूटा करने चले गए।”

गुरपति ने अपने कई मंत्रि-मन्त्रियों और मित्रों के साथ उनको के मोर पर त्रिपुरा बाबू के मंत्रिब का इन्तजाम कर दिया था। कुछ ता कृष्णा-बन और कुछ म्याभाविक सन्द् के कारण त्रिपुरा बाबू गुरपति को जादू गिफताने की राजी हो गए थे। गुरपति ने जब पंजे की चर्चा की तो उन्होंने तीव्र विरोध प्रकट किया। “तुम हम तरत की बाने मत कर करो,” उन्होंने कहा था, “मेरा एक उत्तराधिकारी मंजूर हो गया, बड़ी बात बड़ी है। तुममें जब इनका शोक और उरगाह है तो मैं तुम्हें गिफत दूंगा। तब ही, जल्दवादी मन करो। यह एक माधना है। जल्दवादी में कुछ नहीं होगा। अच्छी तरह भीत जाओगे तो तुम्हें एक तरत की मुष्टि का आनन्द प्राप्त होगा। बहुत ज्यादा रण्य-पंजा मा मन की आता मन रगो। इनका जल्द है कि तुम्हारी मेरी जंभी बदलर जामत कभी न होगी, क्योंकि तुम्हें महत्वाकांक्षी है, मुझमें नहीं है ...”

गुरपति ने दरते-दरते पूछा, “ममी जादू गिफत दीजिएगा न ?” अठन्नी और अगूठीवासा जादू भी गिफत दीजिएगा न ?”

त्रिपुरा बाबू ने हगतो हुए कहा, “एक-एक सोड़ी तब करते हुए भागे बडना होगा। पयराओ मन। सगे रहो। माधना जल्दरी है। ये सब प्राचीन काल की यस्तुए हैं। आदमी के मन में जब वास्तव में शक्ति थी, एरादना थी, तब इन जादुओ का उद्भव हुआ था। मुझे चित्तनी कठिन साधना करनी पटी है, जानते हो ?”



त्रिपुरा बाबू से छह महीने तक जब तासीम मिल चुकी थी, तब एक घटना घटी।

एक दिन कनिज जाने के रास्ते में गुरपति ने घोरगी में हर तरफ दीवार और लंपगोस्ट पर विज्ञापन चिपके हुए देखे—‘सोफाल्दो द प्रेंट’। निश्चय जाकर जब पडा तो गुरपति की मम्मक में घात आई। सोफाल्दो इटली का एक नामी जादूगर है। वह कनजत्त में जादू दिखाने आ रहा है। उसके सहकारी के रूप में आ रही है—मादम पैलमो।

गुरपति ने न्यू एम्पायर की एक रुपये वाली मैगरी में बैठकर सोफाल्दो का जादू देखा था। जादूगरी के सभी करिबमें दिलचस्प और अच्छे में डालनेवाले थे। इसके पहले इन जादुओ के सम्बन्ध में गुरपति ने पुस्तको

में ही पढ़ा था। आंखों के सामने से सादृत आदमी धुएँ में खो जाते हैं, उसके बाद अलादीन के चिराग की बाजीगरी की तरह धुएँ की कुंडली से बाहर निकल आते हैं। एक लड़की को लकड़ी की पेंटी के अन्दर डालकर शोफाल्लो ने आरी से पेंटी को दो टुकड़ों में कर डाला। पांच मिनट के बाद ही वह लड़की एक दूसरी पेंटी से मुसकराती हुई बाहर निकल आई। उसके शरीर में खरोंच तक न आई थी। उम दिन तालियाँ पीटते-पीटते सुरपति की हथेलियाँ लाल हो गई थीं।

शोफाल्लो को देख-देखकर उस दिन सुरपति बार-बार अचकचा उठता था। वह जितना बड़ा जादूगर है, उतना ही बड़ा अभिनेता। पहनावे के रूप में काला चमकीला सूट है, हाथ में जादू की छड़ी, सिर पर टॉप-हैट। उस हैट से शोफाल्लो ने जादू के बल क्या नहीं निकाला ! एक बार खाली हैट में हाथ डालकर एक खरगोश का कान पकड़कर निकाला। उमने कल मिलाकर कान फटफटाया ही था कि कबूतर निकल आया—एक, दो, तीन, चार। जादू के कबूतर फड़फड़ाते हुए मंच के चारों तरफ चक्कर काटने लगे। उसी बीच शोफाल्लो ने उसी हैट से चॉकलेट निकालकर दर्शकों के बीच फेंक दिया।

इन सारी क्रियाओं के साथ शोफाल्लो के मुह से अजस्र शब्द धारा भर रही थी। सुरपति ने पुस्तक में पढ़ा था कि इसे 'पेंटर' या बड़बड़ाना कहते हैं। यह पेंटर ही जादूगरों का मुख्य अवलंब होता है। दर्शक जब पेंटर में गोते लगाते रहते हैं, जादूगर उसी बीच हाथ की सफाई का असली काम निकाल लेते हैं।

परन्तु मादाम पॅलमों इसका अपवाद थी। उसकी ज़बान से एक भी शब्द न निकल रहा था। निर्वाक मशीन के पुतले की तरह वह तमाशा दिखा रही थी। फिर वह हाथ की सफाई का मौका कैसे निकालती है ? इसका उत्तर सुरपति को बाद में मिला था। मंच पर इस तरह के जादू दिखाए जा सकते हैं जिनमें हाथ की सफाई की कोई जरूरत नहीं पड़ती। इस तरह के जादू यंत्रों की करामातों पर निर्भर करते हैं और यंत्रों को चलाने के लिए मंच के काले परदे के पीछे आदमी होते हैं। आदमी को दो हिस्से में काटकर जोड़ देना या धुएँ के बीच गायब कर देना, कल-कव्जों का काम है। तुम्हारे पास पैसे ही तो तुम भी उन कल-कव्जों को खरीदकर या बनवाकर ये सब जादू दिखा सकते हो। इतना जरूर है कि जादू की जमाना, दिलचस्प बनाना, साज-पोशाक से चित्ताकर्षक बनाकर दिखाना बहादुरों का काम है, एक कला है। सभी इस कला से परिचित नहीं होते, इमोलिए पैसा रहते से ही कोई बड़ा जादूगर हो सकता है, बात ऐसी नहीं

है। सभी क्या...

सुरपति की स्मृतियों का जाल छिन्न-विच्छिन्न हो गया।

गाड़ी ज्यों ही एक जबरदस्त झटके के माथ प्लेटफार्म से सरकने लगी, जोरो में दरवाजा खोलकर एक आदमी अन्दर आया... यह क्या ? सुरपति बाधा देने जा रहा था, पर ठिठक गया।

यह तो त्रिपुरा बाबू हैं—त्रिपुरा चरण मल्लिक !

सुरपति को इस तरह के अनुभव और कई बार हो चुके हैं। हो सकता है किसी परिचित व्यक्ति से बहुत दिनों से मुलाकात नहीं हो रही है। सहसा किसी दिन उसकी याद आती है या उसने बारी में बातचीत चलती है। सभी एक क्षण बीतते न बीतते वह आदमी आकर मौजूद हो जाता है।

फिर भी सुरपति को लगा, आज के इस आविर्भाव ने जैसे आगे की तमाम घटनाओं को पीछे छोड़ दिया है।

सुरपति के मुह से कुछ शब्दों तक एक शब्द भी न निकला। त्रिपुरा बाबू ने धोती के छोर से सलाट पर छलक आई पसीने की बूंदों को पोछते हुए, हाथ की गठरी को एक कोने में रखा और सुरपति के सामनेवाली बेंच पर बैठ गए। उसके बाद सुरपति की ओर ताकते हुए मुसकराकर कहा, "तुम्हें आश्चर्य लग रहा है ?"

किसी तरह थूक निगलकर सुरपति ने कहा, "आश्चर्य यानी कहने का मतलब है कि आप जिन्दा हैं, मेरी यह धारणा थी ही नहीं।"

"क्यों ?"

"मेरी बी० ए० परीक्षा समाप्त होने के कुछ दिन बाद मैं आपके मेस में गया था। जानें पर देखा, ताला लटका हुआ है। मैनेजर ने—नाम मैं भूल गया हूँ—कहा कि आप गाड़ी से दबकर..."

त्रिपुराबाबू ने एक ठहाका लगाया और उसके बाद कहा, "अगर बंसा होता तो आराम ही मिलता। चिन्ता-फिक्र से छुटकारा मिल जाता।"

सुरपति बोला, "दूसरी बात यह है कि कुछ दिन पहले मैं आपके बारे में सोच रहा था।"

"क्या कह रहे हो तुम।" त्रिपुराबाबू के चेहरे पर विषाद की एक छाया आई। "मेरे बारे में सोच रहे थे ? अब भी मेरे बारे में सोचते हो ? सुनकर हैरान हो गया।"

सुरपति ने दात से जीभ काटते हुए कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं त्रिपुराबाबू ? मैं इतनी आसानी से भुला बैठूंगा ? मैंने आप से ही जादू की विद्या सीखी है। आज खासतौर से पुराने दिनों की याद आ रही थी। आज मैं तमाशा दिखाने बाहर जा रहा हूँ। बगल से यह पहली बार बाहर जा



रहा हूँ। अब मैं पेसेवर जादूगर हो गया हूँ। आपको यह मानूम है ?”

त्रिपुराबाबू ने मिर हिलाया।

“मालूम है। मुझे सब कुछ मानूम है। सब कुछ मालूम होने के कारण ही तुमसे मिलने के लिए आज आया हूँ। बारह बरसों के दरमियान तुम क्या कर रहे हो, क्या नहीं कर रहे हो, क्रिम तरह तुम बड़े आदमी बन गए हो; इस स्थिति में आ गए हो—इनमें से किमी बात से मैं अनजान नहीं हूँ। उम दिन मैं न्यू मार्केट में था—तुम्हारे शो के पहले दिन। पीठ की बेंच पर बैठा था। लोगों ने तुम्हारे कला-कौशल की कमी ठारोफ़ें कीं, यह देख चुका हूँ। मैं थोड़ा-बहुत गौरव का अनुभव कर रहा था। मगर...”

त्रिपुराबाबू चुप हो गए। मुरपति क्या बहे, मौच नहीं सका। वह कहे तो क्या कहे? त्रिपुराबाबू अगर खुश हैं तो उनसे कुछ बर्दा नहीं आ सकता। मचमुच अगर वे शहआत न कराते तो आज वह इतनी उन्नति नहीं कर सकता था। बदने में मुरपति ने उनके लिए क्या किया है? बल्कि बारह बरसों के दरमियान उनकी यादें धीरे-धीरे मलिन होती जा रही हैं। उनके प्रति जो कृतज्ञता का भाव होना चाहिए, वह भी कम हो गया है।

त्रिपुराबाबू ने फिर से कहना शुरू किया, “तुम्हारी उम दिन की गफ-सता पर मुझे गवें डूआ था। लेकिन उसके साथ अफमोग का भाव भी था। जानते हो, इसका कारण क्या है? तुमने जिग रास्ते का चुनाव किया है, वह असली जादूगर का रास्ता नहीं है। तुम्हारा कारोबार बहुत कुछ लोगों को भुनाने का है, उममें करिपमा है, यन्त्रों का कौशल है। तुम्हारा अपना कौशल नहीं। तुम्हें मेरा जादू याद है ?”

मुरपति उसे भूला नहीं। लेकिन उसके साथ-साथ उगे महमूग होता था कि त्रिपुराबाबू अपने अच्छे-अच्छे जादू मित्राने में कनराते रहते थे। वे कहते, “अब भी समय नहीं आया है।” और वह समय कभी आया ही नहीं। उसके पहले ही शेफाल्लो आ गया और उसके बाद दो महीने के अन्दर ही त्रिपुराबाबू लापता हो गए।

उम दिन मेम जाने पर त्रिपुराबाबू जब नहीं मिले तो मुरपति को थोड़ा दुःख हुआ था। लेकिन यह टाणसवायी था। क्योंकि उम समय उनके मन पर शेफाल्लो बहुत कुछ छाया हुआ था। शेफाल्लो के स्थान पर अपने आपकी कल्पना कर वह मयनों का जाल बुनता रहता था। वह देश-देश में जादू दिमाकर पैसे कमाएगा, नाम कमाएगा, लोगों के बीच बाँटेगा। लोगों में मानियाँ मिलेंगी, सावागी मिलेंगी।

त्रिपुरा बाबू निहरी ने बाहर की ओर ताक रहे हैं। बार उन्हें गौर में देखा। मचमुच वे बदतर हालत में मानूम

मिर के करीब-करीब सभी बाल एक चुके हैं, गालों पर झुरिया पड़ गई हैं, आंखें मोटर में घम गट्टे हैं। लेकिन आंगो में क्या मलिनता आई है? ऐसा तो लग नहीं रहा है। आश्चर्य की बात है। उनकी आंखों में तीक्ष्णता है।

त्रिपुरा बाबू ने एक लम्बी मास लेकर कहा, "जानता हूँ, कि तुमने इस रास्ते का चुनाव क्यों किया है। मैं जानता हूँ, तुम्हें इस पर विश्वास है— और इसके लिए हो सकता है मैं ही षोडा-बहुत जिम्मेदार हूँ—कि निलालिस चीज की कद्र नहीं होती है। मच पर जादू चन मके, इसके लिए षोडी घटका चाहिए, तडक-भडक चाहिए। है न यह बात?"

सुरपति ने इनकार नहीं किया। शोफाल्नों के देगने के बाद में ही उसमें यह धारणा बन गई थी। लेकिन तडक-भडक का अर्थ क्या दुरा होना है? आजकल समय बदल गया है। विवाह की मजलिम में दरी पर बैठकर तुम कितना कमा लोगे या कौन तुम्हारा नाम ही जानेगा? त्रिपुरा बाबू की हालत यह अपनी आंखों से देर चुका है। निसालिम जादू दिमाकर आदमी का पेट न भरे तो फिर उस जादू की मायंकता ही क्या है?

सुरपति ने त्रिपुरा बाबू को शोफाल्नों के बारे में बताया। जिम चीज को देखकर हजारों दर्शकों को आनन्द मिलता है, जिमकी वे तारीफ करते हैं, उसकी क्या कोई सार्थकता नहीं? निसालिम जादू के प्रति सुरपति में अश्रद्धा का भाव नहीं है। लेकिन उस रास्ते में जाने पर भविष्य का दर-बाजा बन्द मिलता है। यही वजह है कि सुरपति ने इस रास्ते का चुनाव किया है।

त्रिपुरा बाबू एकाएक उत्तेजित हो उठे। अपने पैरों को बेच पर मोड़कर वे सुरपति की ओर झुक गए।

"सुनो सुरपति, अगर तुम सचमुच समझ पाते कि असली जादू क्या है, तो तुम नकली के पीछे दौड़ न लगाते। हाथ की सफाई उसका एक अंग मात्र है। उसके भी कितने भेद-उपभेद हैं, उसकी कोई सीमा नहीं। योग की क्रियाओं की तरह उन हाथ की सफाइयों के लिए महीने पर महीना और वर्ष पर वर्ष बिताना पड़ता है, तब अभ्यास सघटा है। लेकिन इसके अतिरिक्त भी बहुत-कुछ है। हिपनोटिज्म! सिर्फ आंखों की ताकत के बल पर तुम आदमी को पूरे तौर पर अपने अधीन कर पाओगे। इस तरह बग में करोगे कि वह तुम्हारे हाथ का पुतला हो जाएगा। उसके बाद है क्लेयर-वयेन्स या टेलीपथी या फॉन्टोरीडिंग। दूसरे के चिन्तन के जगत् में तुम बेरोक-टोक विचरण कर पाओगे। किसी व्यक्ति की नाडी टटोलते ही बता दोगे कि वह क्या सोच रहा है। उसी तरह की तालीम मिल जाएगी तो छूने की भी जरूरत न पड़ेगी। सिर्फ एक मिनट तक उसकी आंखों में झांकने से

ही उनके मन की बातें, पेट की बातें—सब कुछ जान लोगे। यह सब क्या कोई कम जादू है? दुनिया के तमाम श्रेष्ठ जादुओं के मूल में ये सब चीजें हैं। इसमें कल-कब्जो का कोई काम नहीं है। सिर्फ साधना, निष्ठा और एकाग्रता है।”

त्रिपुरा बाबू मांस लेने के लिए रुके। ट्रेन की आवाज के कारण उन्हें जोर-जोर से बोलना पड़ रहा था। शायद इसकी वजह से वे ज्यादा थक गए थे। अब वे सुरपति की ओर और भी बढ़ आए और कहा, “मैं तुम्हें यह सब चीज सिखाना चाहता था लेकिन तुमने परवा नहीं की। तुम धीरज नहीं रख सके। एक विदेशी वुजुर्ग की तडक-भड़क और टोम-टाम ने तुम्हारा दिमाग बदल दिया। जिस रास्ते में तुरन्त अर्थ की प्राप्ति होने लगे, असली रास्ते को छोड़कर तुम उस रास्ते पर चले गए?”

सुरपति के होठ सिल गए थे। वह सचार्दे के माय किसी भी अभियोग का प्रतिकार नहीं कर सकता।

त्रिपुरा बाबू ने सुरपति के कंधे पर हाथ रखा और अपनी आवाज को धीमा करके कहा, “मैं तुमसे एक अनुरोध करने आया हूँ, सुरपति! कह नहीं सकता, मुझे देखकर तुम समझ रहे हो या नहीं कि मेरी हालत कितनी बुरी है। इतने तरह का जादू जानता हूँ, लेकिन क्या पैदा करने के जादू से मैं आज भी अनजान रह गया। महत्वाकांक्षा का अभाव ही मेरे लिए काल साबित हुआ वरना मुझे रोटी की किन्तु क्यों करनी पड़ती? अभी मैं लाचार होकर ही तुम्हारे पास आया हूँ, सुरपति। मैं खुद अपने पैरों पर खड़ा होऊँ, इसकी मैं मुझ में ताकत है और न अब मेरी वह उम्र ही है। लेकिन मुझे इतना विश्वास है कि इस बुरे वक़्त में तुम मुझे—योद्दा-मा संकरिफाइस कर—मदद करोगे। वय, उसके बाद तुम्हें परेशान नहीं कहूँगा।”

सुरपति का कलेजा धड़कने लगा। त्रिपुरा बाबू किस प्रकार की मदद चाह रहे हैं?

त्रिपुरा बाबू ने कहना चाँहि रखा, “हो सकता है, यह संभव है, मुझे लिए कुछ कठिन प्रतीत हो, मगर तुम्हें ज्यादा कोई बात नहीं है। मुश्किल की बात यह है कि तुम्हें अलग करने की ही बकरत नहीं है। बुझने में एक नया शौक पैदा हो गया है। बहुत बड़े मजने = एक नए अर्थ तमाम श्रेष्ठ सेना को एक बार दिखाने की इच्छा हो रही है। हो सकता यहाँ पढ़ना और अर्थिन भी हो, मगर हम शौक को फिर से रखा रहा हूँ, सुरपति।”

एक अलग अर्थिन से सुरपति की छाती धड़कने लगी।

त्रिपुरा बाबू ने अब अपना अमली प्रस्ताव रखा। "लगनऊ में तुम्हारे जादू-प्रदर्शन की व्ययस्था की गई है। तुम वही जा रहे हो। मान लो, आखिरी वक्त में तुम बीमार हो जाते हो। दर्जनों को बिलकुल निराश करके लौटा देने के बजाए अगर तुम्हारे स्थान पर कोई..."

सुरपति चहुँक उठा। त्रिपुरा बाबू यह क्या कह रहे हैं! सचमुच यह खादमी टूट चुका है अन्यथा वे इस तरह का प्रस्ताव रखते ही क्यों?

सुरपति चुप्पी साधे है, यह देखकर त्रिपुरा बाबू ने कहा, "अनिवार्य कारणों से तुम्हारे गृह तुम्हारी जगह पर जादू दिखाएंगे—इन तरह की सूचना तुम प्रचारित कर देना। इससे क्या लोग काफी निराशा का अनुभव करेंगे? मुझे तो ऐसा नहीं लगता है। मुझे पूर्ण विश्वास है, लोगों को मेरा जादू अच्छा ही लगेगा। फिर मैं भी प्रस्ताव रखता हूँ, पहले दिन तुम्हें जितना पैसा मिलना चाहिए, उसका आधा तुम्हें मिलेगा ही। उसमें हिस्से के तौर पर मुझे जितना मिलेगा, उसमें ही मेरा काम चल जाएगा। उसके बाद तुम जिम डरें पर चल रहे हो, उमी पर चलना। मैं फिर तुम्हें तग नहीं करने आऊंगा। तुम्हें केवल एक दिन का मौका देना है, सुरपति।"

"असंभव!" सुरपति का माया गरम हो गया।

"असंभव! आप जो कुछ कह रहे हैं, खुद भी उसे समझ नहीं रहे हैं, त्रिपुरा बाबू। बंगाल के बाहर मेरी यह पहली प्रदर्शनी होने जा रही है। लखनऊ के शो पर कितना कुछ निर्भर कर रहा है, आप इसे समझ नहीं पा रहे हैं? अपने करियर के आरम्भ में ही मैं झूठ का सहारा लूँ? आप ऐसी बातें कैसे सोच रहे हैं?"

त्रिपुरा बाबू कुछ देर तक सुरपति की ओर ताकते रह गए। उसके बाद ट्रेन की आवाज को चीरती हुई उनकी दृढ़ और सयत आवाज तैरने लगी।

"अटन्ती और अगूठी के उस जादू पर तुममें अब तक लोभ है?"

"सुरपति चौक पड़ा। लेकिन त्रिपुरा बाबू की दृष्टि में कोई परिवर्तन न आया।

"क्यों?"

त्रिपुरा बाबू ने मीठी हसी हसकर कहा, "अगर तुम मेरे प्रस्ताव से सहमत हो जाते हो तो मैं तुम्हें वह जादू सिखा दूंगा। अगर अभी वादा करो तो अभी तुरन्त सिखा दे सकता हूँ। और, अगर तुम वादा नहीं करते हो..."

कर्मका सीटी बजाती हुई हावड़े की तरफ जाने वाली एक ट्रेन सुरपति वगैरह की ट्रेन की बगल से होती हुई गुजर गई। उसके डब्बों की रोशनी

मे त्रिपुरा बाबू की आँखें जलती हुई दीखीं। रोसनी और आनन्द जब खड़े  
गईं तो सुरपति ने कहा, "और अगर रात्री न होऊँ तो?"

"फिर उमका नतीशा अच्छा नहीं होगा, सुरपति। एक बात जान  
लो। मैं अगर दर्शकों के बीच मौजूद रहूँ, और मेरा मन चाहे तो मैं किसी  
सी जादूगर को अपदस्थ कर सकता हूँ, उसे परेशानी में डाल सकता हूँ—  
यहाँ तक कि उसे निकम्मा बना दे सकता हूँ।"

त्रिपुरा बाबू ने अपनी जेब से एक बड़ा टाग निकालकर सुरपति  
की ओर बढ़ाया।

"लो, अपने हाथ की सफाई दिखाओ। कोई कटिब नहीं, बल्कि पत्थरी  
सफाई। एक ही बार की फँट में पीछे के गुनान को इस दिग्गो पर ने  
आओ।"

सुरपति जब सोलह बरस का था, उसने आँसू के झामने गड़े होकर  
एक सप्ताह तक इसका अभ्यास किया था और पूरे दौर में मौन निभा  
या।

और आज ?

सुरपति ने अपने हाथ में ताग उठाया और पाया कि उसकी उँगलियाँ  
अवश होती जा रही हैं। और न केवल उँगलियाँ बल्कि उँगलियों के माथ-  
साय नाड़ी, कूहनी—पूरा हाथ। घुँघलती आँसू में सुरपति ने देखा,  
त्रिपुरा बाबू के होंठों के कानों में एक अजीब ही तरह की हँसी है और वे  
अमानवीय तीक्ष्ण दृष्टि में सुरपति की आँसू में झाँक रहे हैं। सुरपति का  
माया पसीने से भीग गया, पूरे जिस्म में उसे एक परधराहट का अहसास  
हुआ।

"अब मेरी सामर्थ्य समझ में आई?"

सुरपति के हाथों से ताग का पेंकेट अपने दाएँ बैच पर गिर पड़ा।  
त्रिपुरा बाबू ने ताग की पत्तियों को सहैत्रकर गम्भीर स्वर में कहा, "उपार  
हो?"

सुरपति की जड़ता और सुस्ती का भाव दूर हो चुका था। उसने धके  
और धीमे स्वर में कहा, "वह जादू सिखा दीखिएगा न?"

अपने दाहिनी हाथ की उँगलियों को सुरपति की नाक के सामने ले जाकर  
त्रिपुरा बाबू ने कहा, "लक्ष्मण के प्रथम शां में तुम्हारी अस्वस्थता के  
कारण तुम्हारे स्थान पर तुम्हारे गुरु त्रिपुराचरण मल्लिक अपनी जादूगरी  
दिखाएंगे। यह तुम्हें स्वीकार है न?"

"हां, स्वीकार है।"

तुम्हें जो पैसे मिलेंगे उसका आधा हिस्सा मुझे दोगे, इस बात पर

तैयार हो न ?”

“ठीक है।”

“फिर आओ।”

सुरपति ने अपनी जेब टटोलकर एक अठन्नी और उंगली से प्रवाल-जड़ी अगूठी निकाली और उन्हें त्रिपुरा बाबू के हाथों में थमा दिया।



वधमान में जब गाड़ी घमी, अनिल चाय लेकर अपने बाँस के डब्ये के सामने आया और उन्हें नींद की बाहों में ऊघते पाया। कुछ भिन्नक के साथ अनिल ने धीमे स्वर में 'सर' कहकर पुकारा और सुरपति तडफड़ा कर उठ बैठा।

“क्या...क्या बात है ?”

“आपके लिए चाय ले आया हूँ, सर। आपको डिस्टर्ब किया, अन्यथा न सोचेंगे।”

“मगर...?” सुरपति इधर-उधर ताकने लगा। उसकी आँखों में वहशीपन की छाया तैर रही थी।

“क्या हुआ, सर ?”

“त्रिपुरा बाबू...?”

“त्रिपुरा बाबू ?” अनिल हूतप्रभ हो उठा।

“नहीं-नहीं...वे तो इक्यावन में ही...बस से दबकर...मगर मेरी अगूठी कहा है ?”

“कौन-सी अगूठी, सर ? मृगा तो आपके हाथ में ही है।”

“हां-हां। और...”

सुरपति ने जेब में हाथ डालकर एक अठन्नी निकाली। अनिल ने देखा, सुरपति का हाथ धरधरा रहा है।

“अनिल, अन्दर आओ। जल्दी से। खिड़कियों को बन्द कर दो। हाँ, एक बार देख आओ।”

सुरपति ने बेंच के एक छोर पर अगूठी और दूसरे पर अठन्नी रखी। उसके बाद इष्ट नाम का जाप कर और नियति पर विश्वास रखकर सपने में मिले कौशल का प्रयोग किया : अपनी दृष्टि को एकाग्र कर अगूठी पर टिका दी।

वह अठन्नी एक वशीभूत बालक की तरह लुढ़कती हुई अगूठी के पास गई और उसे अपने माथ लिए सुरपति की ओर लुढ़कती हुई चली आई।

सुरपति 'हाथ की अजीब सफाई' कहकर अगर चाय की प्याली अनिल

के हाथों से लेकर घाम न लेता तो वह अनिल के हाथ से नीचे गिर जाती ।



लगनऊ की जादू-प्रदर्शनी में जब पहले दिन परदा उठा, सुरपति मंडल ने उपस्थित दर्शकों के सामने खड़े होकर जादू-विद्या के शिक्षक स्वर्गीय त्रिपुराचरण मल्लिक के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की ।

आज प्रदर्शनी का अंतिम खेल है । सुरपति ने निखालिस स्वदेशी जादू कहकर जिसका ब्योरा दिया, वह है अंगूठी और अठन्नी का खेल ।

## अनाथ बाबू का भय

अनाथ बाबू से मेरी जान-पहचान ट्रेन के टिकटों में हुई थी। मैं जलवायु-परिवर्तन के लिए रघुनाथपुर जा रहा था। यो मैं कलकत्ते में एक अखबार के दफ्तर में काम करता हूँ। पिछले कुछ महीनों में काम का दबाव इतना बढ़ गया था कि मेरी ग्रास घुटने लगी थी। इसके अलावा मैं तिसरे-पड़ने का शौकीन हूँ। दो-चार कहानियों का प्लॉट मेरे दिमाग में चक्कर काट रहा था, लेकिन काम इतना ज्यादा था कि फुरसत निकाल ही नहीं पा रहा था। अतः किसी तरह की दुविधा में न पड़कर दस दिनों की बकाया छुट्टी और एकाध जिस्ता कागज लेकर निकल पड़ा।

इतनी-इतनी जगहों को छोड़कर रघुनाथपुर के लिए क्यों रवाना हुआ, इसका एक कारण है। वहाँ बिना खर्च के रहने का इन्तजाम हो गया था। मेरे कॉलेज के सहपाठी वीरेन विश्वास का पंतक मकान रघुनाथपुर में है। कॉफी हाउस में बैठकर जब इस बात की चर्चा कर रहा था कि छुट्टियों में कहां जाऊँ तो वीरेन ने खुशी के साथ अपना वह मकान अफर कर कहा, "मैं भी जाता, मगर ऊभटों में फंसा हूँ, यह तुम जानते ही हो। तब हा, तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी। हम लोगो का पचास बरसो का पुराना नोकर भारद्वाज उस मकान में है। वही तुम्हारी देख-रेख करेगा। तुम चले जाओ।"

गाड़ी में मुनाफ़िरो की भीड़ थी। मेरी बेंच पर दगल में ही अनाथ बंधु मित्र बैठे थे। कद नाटा। उम्र लगभग पचास वर्ष। भाग बीच से कट्टी, खिचड़ी वाला। दृष्टि तीक्ष्ण। होठों पर एक ऐसा भाव छाया रहता है जैसे मन के हर कोने में हमेशा मनोरंजक विचार चक्कर काट रहा हो। एकाएक उन पर दृष्टि पड़े तो लगता है, वे जैसे पचास वर्ष पुराने नाटक के किसी पात्र के अभिनय के लिए मुसज्जिन होकर आए हो। उस तरह का कोट, उस तरह का कमीज का कॉलर, चश्मा और खासतौर से उस तरह के बूट जूते—आजकल कोई धारण नहीं करता है।

अनाथ बाबू से जान-पहचान होने के बाद पता चला कि वे रघुनाथपुर जा रहे हैं। कारण पूछने पर वे अनमने से हो गए। यह भी हो सकता है कि ट्रेन की आयाज के चलते मेरा सवाल उनके कानों में पहुँचा ही नहीं।



बीरेत के पैतृक मकान को देखकर मन प्रसन्न हो गया। मकान बहुत सुन्दर है। सामने जमीन का एक कड़ा है। उसमें फल के पीछे और साग-सब्जी लगे हैं। आसपास कोई दूसरा मकान नहीं है, अतः पड़ोसियों के उत्पात से भी रक्षा होती रहेगी।

भारद्वाज के विरोधों के बावजूद मैंने अपने लिए छत के ऊपर का कमरा चुन लिया। वहाँ धूप, हवा और निर्जनता—तीनों पर्याप्त मात्रा में मिलेंगी। कमरे के अन्दर जाकर अपना सरो-सामान सजाने के वक्त देखा, टाढी बनाने का अपना उस्तरा साथ नहीं ले आया हूँ। सुनकर भारद्वाज ने कहा, “इससे हर्ज ही क्या होने जा रहा है, मुन्नाबाबू? कुंहुवाबू की दुकान पर पांच मिनट के अन्दर जाया जा सकता है। वहाँ जाने से ब्लेड मिल जाएगा।”

तीसरे पहर चार बजे वाय पीकर कुंहु बाबू की दुकान की ओर घस पड़ा। जाकर देखा, वह अड्डेबाजी के लिए खासी अच्छी जगह है। दुकान के अन्दर दो बेंचों पर छड़-सात प्रौढ़ बैठकर गपशप कर रहे हैं। उनमें से एक उत्तेजित होकर कह रहे हैं, “अरे भैया, यह कोई सुनी-सुनाई बात नहीं, अपनी आंखों से देखा है। तीस वर्ष बीत गए तो इसका यह मतलब नहीं कि मन से सब धुल-पूछ गया। इस तरह की स्मृतियाँ इतनी आसानी से नहीं भूलतीं, और खासकर जब हलघर दत्त मेरा अन्तरंग मित्र रह चुका है। उसकी मीत के लिए आंशिक रूप में मैं खुद जिम्मेदार हूँ, यह विश्वास अब तक बना हुआ है।”

एक पैकेट सेवेन लोकलाक खरीदकर मैं दो-चार और दूसरी चीजों को खोज-पड़ताल करने लगा। भले आदमी का कहना जारी था, “भोचकर देखिए, मेरा मित्र मुझसे दस रुपए की बाजी लगाकर उस उत्तर-पश्चिम के कमरे में रात बिताने गया। दूसरे दिन नहीं लौटा। अन्त में जितने बकशी, हरिचरण साह, मैं और तीन-चार दूसरे-दूसरे व्यक्ति, जिनका नाम मुझे याद नहीं, हलघर की तलाश में हालदार भवन गए। जाकर देखा, वह उस कमरे में भरकर अकड़ गया है। उसकी आंखों की दृष्टि शहतीरों पर टिकी है। और, उस दृष्टि में भय की जो वानगी मैंने देखी, उससे सिवा भूल-भ्रत के और किसके वारे में सोच सकता हूँ? देह में पायल होने का कोई चिह्न न था, शेर के नोचने-खमोटने का कोई निशान न था, सांप के दर्जन का कोई चिह्न न था—कुछ भी नहीं।

पांच मिनट और रुकने के बाद बातचीत के मदर्म में मोटे तौर से एक धारणा बधी। पटना यों है : रघुनाथपुर के दक्षिणी अंचल में हालदार भवन नामक एक दो सौ वर्ष पुराना खंडहरनुमा राजमहल है।

आपके सामने अपनी प्रज्ञा करने में साम ही क्या हो सकता है मगर इतना कह दूँ, इसके सम्बन्ध में इस देश में शायद ही मुझे ज्यादा कोई जानता हो।”

उनकी बातें सुनकर मुझे यह नहीं लगा कि वे झूठ बोल रहे हैं या बड़ा-पढ़ाकर यह रहे हैं। बल्कि उनके बारे में सहज ही एक विस्वाश और धडा का भाव पैदा हो गया।

कुछ देर तक घुप रहने के बाद अनाप बाबू ने कहा, “हिन्दुस्तान में कम-से-कम तीस सौ भूतहा मकानों में मैंने रातें गुजारी हैं।”

“क्या यह रहे हैं, आप !”

“हां। और जानते हैं, यह भी कौंगी-कौंगी जगहों में ? मगतन जबतपुर, कागिगग, चेरापूजी, बाघी, बटोया, जोधपुर, आजिमगंज, हजारीबाग, सिन्ही, धारासात। और कितनी जगहों का नाम गिनाऊ ? छप्पन डाक-बगलौ और कम से कम तीस नीलकोठियों में मैंने रातें बिताई हैं। इनके अलावा कलकत्ते और उसके आसपास के कम से कम पचास मकानों में। मगर....”

अनाप बाबू एनाएक घुप हो गए। उसके बाद सिर हिलाते हुए धीरे-धीरे कहा, “भूत ने मुझे धोखा दिया है। हो सकता है जो लोग भूतों को नहीं चाहते, भूत उन्हीं के पाम आते हैं। मुझे बार-बार निराश ही होना पडा है। तमिलनाडु के त्रिचनापल्ली में साहयों के डेड सौ वर्ष पुराने परिस्थित बलय में भूत मेरे बिलकुल पास आ गया था। जानते हैं, किस तरह ? कमरा घुप अंधेरा था, हवा का नामोनिशान नहीं। जितनी बार मोमबत्ती जलाने के लिए तीली जलाता हूँ, यह फूंक मार कर उसे बुझा देता है। अन्त में तेरह तीलियां बरवाद होने के बाद मोमबत्ती जती और प्रकाश फैलते ही भूत जो गायब हुआ तो फिर नहीं आया। एक बार कलकत्ते के भामापुरकुर के एक भूतहा मकान में भी एक दिव्यरूप अनुभव हुआ था। मेरे सिर पर इतने बाल देस रहे हैं न ! लेकिन उस मकान में एक अंधेरे कमरे में भूत के इन्तजार में बंठे रहने पर आधी रात के वक्त अह्यतालु के पास मच्छर ने काट लिया। बात क्या है ? अंधेरे में डरते हुए मैंने अपने सिर पर हाथ रखकर देखा और पाया, वहाँ एक भी बाल नहीं है। पूरा सिर ही चिकना और गजा है। यह मेरा सिर है याकि किसी दूसरे के सिर पर हाथ रखकर उसे अपना सिर समझ रहा हूँ ? मगर मच्छर के दश का अनुभव मैंने ही किया है। टॉर्च जलाकर आईने में देखा और कहीं कोई गंजापन न था। मेरे सिर पर पहले जैसे बाल थे, वैसे ही हैं। बस, इन दो के अतिरिक्त भूतों के संबंध में और कोई अनुभव नहीं है, हालांकि मैंने

इतनी-इतनी कोशिशों की हैं। यही वजह है कि भूत देखने की आशा एक तरह से छोड़ ही चुका था, तभी एक पुरानी, जिल्ददार 'प्रवासी' में रघुनाथ पुर के इस मकान के बारे में उल्लेख मिला। इसीलिए तय किया कि एक बार आखिरी कोशिश करके देख ही लूं।"

अनाथ बाबू की बातें सुनते-सुनते कब उस मकान के सदर फाटक पर पहुंच गया, इसका खयाल ही न रहा। उन्होंने अपनी जेब-घड़ी देखकर कहा, "आज पांच बजकर इकतीस मिनट पर सूर्यास्त होगा। अभी सवा पांच बज रहे हैं। चलिए, धूप रहते ही एक बार उस कमरे को देख आऊं।"

संभवतः भूत का नशा संक्रामक होता है, क्योंकि मैंने अनाथ बाबू के प्रस्ताव का विरोध नहीं किया। बल्कि मकान के अन्दरूनी हिस्से और खासतौर से उस कमरे को देखने की एक तीव्र इच्छा हो रही थी।

सदर दरवाजे से घुसने पर विशाल आंगन और नाट्यशाला पर दृष्टि गई। एक सौ-डेढ़ सौ बरसों के दरमियान यहां कितने उत्सव-त्योहार, पूजा, नाटक और वार्तालाप हो चुके हैं। मगर आज उनका कहीं कोई निशान न था।

आंगन के तीन तरफ बरामदे हैं। हम लोगों के दाहिने तरफ के बरामदे पर एक टूटी पालकी पड़ी है। पालकी से दसैक हाथ की दूरी पर दामंजिले पर जाने की सीढ़ी है।

सीढ़ी इतनी अंधेरी थी कि अनाथ बाबू को अपने कोट की जेब से टार्च निकालकर जलाना पड़ा। प्रायः अदृश्य मकड़ी के जालों के ब्यूह का भेदकर हम किसी तरह दामंजिले पर पहुंचे। मन ही मन कहा, इस घर में भूत का रहना अस्वाभाविक नहीं है।

दामंजिले के बरामदे पर खड़े होकर हमने हिसाब लगाया कि अगर बाएं से सीधे जाया जाए तो सामने जो कमरा है, वही उत्तर-पश्चिम वाला कमरा है। अनाथ बाबू ने कहा, "समय बरबाद करने के कोई फायदा नहीं। चलिए, हम लोग आगे बढ़ें।"

यहां यह बात घटा दूं कि बरामदे में केवल एक ही शीश थी और वह भी एक घड़ी। ऐसी घड़ी को 'ग्रैन्डफादरवाच' कहा जाता है। मगर उगकी हालत अत्यन्त शोचनीय थी—शीशा नहीं है, यड़ी गुई गायब है, पेंडुलम टूटकर एक किनारे पड़ा है।

उत्तर-पश्चिम के कमरे का दरवाजा भिटा हुआ था। अनाथ अपने दाहिने हाथ की तर्जनी से सावधानी के साथ टेलकर दरवाजे खोल रहे थे, मेरी देह बिना किसी कारण के सहसा तित्तर उठी।

परन्तु कमरे के अन्दर जाने पर किसी प्रकार की अस्वाभाविकता का अहसास न हुआ। देखकर लगा, किसी जमाने में यह बँटकर रही होगी। कमरे के बीच एक विद्यालय मेज है, त्रिमूर्ति गिरफ्तारों पाए ही साबुत हैं, ऊपर का तख्ता गायब है। मेज के पास, गिराई की तरफ एक आराम-कुर्सी है। इनका ज़रूर है कि अब वह आरामदेह होगी या नहीं, इसमें मदेह है, क्योंकि इसका एक हज़ारा और बँटने की जगह पर बेंत का थोड़ा हिस्सा गायब है।

ऊपर की ओर ताज़ने पर हाथ से रीपने वाला एक पत्र का टूटा हुआ हिस्सा दोस पड़ा। यानी उगम रसमी नहीं है, सफ़री का डडा टूटा हुआ है और भानर आधा फटा हुआ।

इसके अलावा कमरे में खाने बना गन्दूक रखने का एक आना है, बिना नली का एक नंगा और दो मामूली हस्ताविहीन कुर्निया।

अनाथ बाबू कुछ देर तक मस्तक सटके रहे। लगा, ध्यानपूर्वक किसी चीज़ के अनुभव के लिए कोशिशें कर रहे हैं। लगभग एक मिनट के बाद बोले, "एक तरह की गंध का अहसास हो रहा है।"

"किस तरह की गंध का?"

"मद्रासी घुप, मछली का तेल और मुर्दा जलाने की गंधों से मिली एक तरह की गंध।"

मैंने दो-चार बार जोरों से साँस ली। बहुत दिनों से बन्द कमरे को खोलने में जिस तरह की सटी गंध निकलती है, सिवा उम गंध के और किसी तरह की गंध मालूम न हुई। इसीलिए मैंने कहा, "खँसा महसूस नहीं हो रहा है।"

कुछ देर तक घुप रहने के बाद अनाथ बाबू ने अचानक अपनी बायीं हथेली पर दाहिने हाथ से एक मुक्का जमाते हुए कहा, "ठीक है। मैं इस गंध को पहचानता हूँ। इस घर में निश्चय ही भूत है। तब हाँ, एजेंट दीखेंगे या नहीं, यह बात कल रात के पहले समय में नहीं आएगी। चलिए।"

अनाथ बाबू ने तय कर लिया कि दूसरे दिन रात के समय उन्हें इस कमरे में रहना है। लौटते वक़्त बोले, "आज इसलिए नहीं आ रहा कि कल अमावस्या है, जो भूतों के लिए सबसे सुविधाजनक तिथि हुआ करती है। इसके अलावा दो-चार चीज़ें अपने साथ रखना ज़रूरी है। वे घर पर छूट गई हैं, कल लेकर आऊंगा। आज भवैक्षण करके जा रहा हूँ।"

अनाथ बाबू मुझे घर तक छोड़ने आए और जब जाने लगे तो आहिस्ता से बोले, "मेरी इस योजना की बातें किसी से मत बताएँ। इन लोगों की

बातचीत आप आज सुन ही चुके हैं—इन लोगों में इतना भय और पूर्वाग्रह है कि कहीं अड़चन डालकर मेरी योजना को विफल न बना दें। हा, एक बात और। चूंकि आपको अपने साथ लेकर नहीं जाऊंगा इसलिए कुछ अन्यथा न सोचेंगे। इन मामलों में, समझ रहे हैं न, अकेला रहे बिना कोई उपाय निकालना मुश्किल है।”



दूसरे दिन कागज-कलम लेकर बैठने के बावजूद लेखन का कार्य अधिक आगे बढ़ नहीं पाया। मन में हालदार भवन के उत्तर-पश्चिम का कमरा घूमता रहा। इसके अलावा मन में यह विचार भी मंडराता रहा कि रात में अनाथ बाबू को किस तरह के अनुभवों के दौर से गुजरना पड़ेगा। इसके कारण मेरे मन में बेचनी और अशान्ति थी।

तीसरे पहर अनाथ बाबू को हालदार भवन के फाटक तक पहुंचा आया। आज उनके बदन पर काला बंद गले का कोट है, कंधे पर पानी का प्लास्क और हाथ में घड़ी कल वाला तीन सेल का टॉर्च। फाटक से अन्दर जाने के पहले कोट की दोनों जेबों में हाथ डालकर उन्होंने दो बोतलें बाहर निकाली और मुझे दिखाकर बोले, “यह देखिए, इसमें मैंने अपने फारमूले से बनाया तेल रखा है—शरीर की खुली जगहों में इसे लगा लेने से मच्छर नहीं काटेंगे। और, दूसरे में है कार्बॉलिक एसिड। इसे घर के आसपास छिड़क देने से सांपों के उत्पात से निश्चिन्त रहा जा सकता है। यह कहकर दोनों बोतलों को जेब के हवाले किया, टॉर्च को माथे से छुलाकर मुझे सलामी ठोकी और बूटों को खटखटाते हुए अनाथ बाबू हालदार भवन की ओर चल दिए।



रात में मुझे ठीक से नींद नहीं आई।

सुबह होते ही भारद्वाज से कहा कि वह मेरे प्लास्क में दो आदमी के साथ चाय भर दे। चाय आ जाने के बाद मैं प्लास्क लिए हालदार भवन की ओर रवाना हो गया।

हालदार भवन के फाटक के पास पहुंचने के बाद मुझे कहीं कोई आहट नहीं सुनाई पड़ी। अनाथ बाबू का नाम लेकर पुकारू या सीधे दोमजिले पर चला जाऊ, जब यही सोच रहा था तभी एकाएक कानों में आवाज आई, “ए साहब, मैं इधर हूँ।”

अब मेरी दृष्टि अनाथ बाबू पर गई जो महल के पूर्वी जंगल

से चहस-कदमी करते हुए मेरी ओर आ रहे थे। उन्हें देखकर ऐसा महसूस ही नहीं हुआ कि रात में उन्हें किसी प्रकार का भयावह या अस्वाभाविक अनुभव हुआ है। मेरी ओर आकर हंसते हुए नीम की एक डंठल दिखाकर बोले, "कुछ मत कहिए जनाब ! नीम की इस डंठल की सोज में आघे पटे तक जंगल की शाक छानती पड़ी है। मैं दातुन के बाद ही मुंह घोने का अभ्यस्त हूँ।"

हठात् रात की बातों के बारे में पूछने में बंसा-बंसा तो लगा। मैंने कहा, "घाय ले आया हूँ। यहाँ पीजिएगा या घर खलिएगा?"

"चलिए न, उस फव्वारे के पास जाकर पिएँ।"

गरम घाय से एक घूट लेने के बाद अनाथ बाबू के मुँह से तृप्ति सूचक शब्द 'आह' निकला और फिर वे मेरी ओर मुड़कर मसकराते हुए बोले,

"आपके मन में वही ही उत्सुकता जग रही होगी?"

मैंने सरकपकाते हुए कहा, "हां, यानी एक..."

"ठीक है। सुनिए। घुरु में ही बता दूँ: एकसपिठिशन हायली सक्ते-फुल।<sup>1</sup> "मेरा यहाँ आना सार्थक हुआ।"

अनाथ बाबू ने एक मग घाय पीकर खत्म कर डाला और दूसरा मग ढालते हुए अपनी बातें घुरु की :

"आप जब मुझे पहचानकर चले गए तब पांच बज रहे थे। घर के अन्दर जाने के पहले मैंने आसपास का सर्वक्षण कर लिया। बहुत बार भतों के बजाय जिन्दा आदमी या जानवरों के उपद्रवों की ज्यादा आशंका रहती है। बहरहाल मैंने देखा कि आसपास सदेहजनक कोई वस्तु नहीं है।

"घर के अन्दर जाकर मैंने उन तमाम कमरों को देख लिया जो खुले हुए थे। इतने दिन हो चुके हैं अतः सरो-समान पटा हुआ हो, इसकी समा-यना नहीं थी। एक कमरे में मलबे, कुछ लोहा-लकड़ और चारोंक चमगादड़ के अतिरिक्त और कोई चीज देखने में न आई। मुझ पर नजर पड़ने पर भी चमगादड़ों के दल ने हटने का नाम नहीं लिया। मैंने भी उनके साथ छेड़खानी नहीं की।

"जब साढ़े छह बज गए, दोमंजिले के असली कमरे के अन्दर जाकर रात बिताने का इन्तजाम करने लगा। अपने साथ मैं एक झाड़ून ले आया था, उससे आराम कुर्सी को झाड़-पोछकर साफ किया। न जाने, उस पर कब से गर्द की परतें जमी हुई थी।

“कमरे के अन्दर एक घुटन फैली थी, अतः मैंने खिड़की खोल दी। हज़रत भूत अगर सशरीर आना चाहें, इसीलिए बरामदे के दरवाजे को भी खुला छोड़ दिया। उसके बाद टॉर्च और प्लास्क फर्श पर रखकर टूटी बेंत की उस आरामकुर्सी पर लेट गया। मैं बहुत ही चेचनी महसूस कर रहा था, मगर इसके पहले भी इसकी अपेक्षा बदतर हालत में रात गुज़ारे रहने के कारण मैंने कुछ खयाल नहीं किया।

“आश्विन के महीने में साढ़े पांच बजे ही सूर्यास्त हो जाता है। देखते-देखते अंधकार गहराने लगा और, उसके साथ-साथ वह गंध भी आहिस्ता-आहिस्ता स्पष्टतर होती गई। यों तो मैं शांत प्रकृति का आदमी हूँ, सहज ही कभी उत्तेजना मे नहीं आता हूँ मगर कल अन्दर ही अन्दर एक उत्तेजना महसूस कर रहा था।

“कह नहीं सकता कि उस समय वक्त क्या हो रहा था, तब मेरा अनुमान है, नौ या साढ़े नौ बजे होंगे, कमरे के अन्दर एक जुगनु आया। एक मिनट तक वह इधर-उधर चक्कर काटता रहा और फिर खिड़की से बाहर चला गया।

“उसके बाद कब तियार और भोंगुरों की आवाज़ धम गई और कब मैं नींद में खो गया, याद नहीं है।

“एक आवाज़ सुनकर मेरी नींद खुल गई। डिग-डांग आवाज़ कर घड़ी ने बारह बजाए। मीठी परन्तु तेज़ आवाज़। यह घड़ी की जैसी ही आवाज़ थी और बरामदे की तरफ से आ रही थी।

“कृछ ही क्षणों में नींद बिल्कुल दूर हो गई और सजग होने पर मेरा ध्यान और दो चीजों पर गया। पहला यह कि मैं आरामकुरसी पर सच-मुच आराम से ही लेटा हुआ हूँ। बेंत का टूटा हुआ हिस्सा जुड़ गया है और किसी ने मेरी पीठ के पीछे एक तकिया रख दिया है। दूसरा यह कि मेरे माथे पर झालरदार एक नया हाथ से खींचने वाला पंखा है और उससे एक रस्ती दीवार के सूरख से होती हुई बरामदे पर चली गई है। न जाने कौन उस रस्ती को खींच रहा है और पंखे के हिलने-डुलने से मैं फुरहरी हवा का अनुभव कर रहा हूँ।

“मैं अवाक़ होकर सब देख रहा हूँ और उनका उपभोग कर रहा हूँ, तभी न जाने कैसे अमावस की रात में वह कमरा प्रकाश से जगमगाने लगा। उसके बाद मेरे नयुनों में एक अजीब ही गंध आई। मैंने करवट बदली और देखा, कोई अनजान व्यक्ति एक नैचा रख गया है और उससे मीठी-मीठी गंध निकल रही है। उम्दा से उम्दा अंबुरी तम्बाक़ की

अनाथ बाबू एक क्षण खूप रहे। उसके बाद मेरी ओर मुड़कर

हुए बोने, "बड़ा ही मनोरम परिवेश था। था न?"

मैंने कहा, "सुनकर तो अच्छा ही लगा। फिर मोटे तौर से आपकी रात आराम में ही बीती?"

मेरा गवाल सुनकर अनाथ बाबू के चेहरे पर एकाएक गभीरता उतर आई। कुछ देर तक मैंने प्रतीक्षा की, फिर धीरे-धीरे गवाकर पूछ ही बैठा, "फिर क्या आपके साथ कोई खोफनाक घटना नहीं घटी? आपने भूत नहीं देखा?"

अनाथ बाबू ने पुनः मेरी ओर आँसों फैला दी। लेकिन अब होठों पर पहले की मुसकराहट नहीं थी। भराए स्वर में उन्होंने पूछा, "परमों जब आप कमरे के अन्दर गए थे तो शहतीरों की ओर आपने गौर से देखा था?"

मैंने कहा, "शायद खूब अच्छी तरह नहीं देखा था। क्यों, बात क्या है?"

अनाथ बाबू ने कहा, "वहाँ एक रात चीख है, आप उसे जब तक देख नहीं लेते हैं, बाकी घटना मैं आपकी समझा नहीं पाऊँगा। चलिए।"

अधेरी सीढियाँ तय करते हुए अनाथ बाबू ने मुझसे इतना ही कहा, "अब मैं भूतों के पीछे दौड़ नहीं लगाऊँगा, सीतेश बाबू। कभी नहीं। मेरा वह शोक अब पूरा हो चुका है।"

बरामदे से जाते हुए मैंने घड़ी की ओर देखा, वह पहले जैसी थी, बँसी ही टूटी हालत में अब भी थी।

कमरे के दरवाजे के सामने पहुँचकर अनाथ बाबू ने कहा, "जाइए।"

दरवाजा उठका हुआ था। हाथ से उसे ठेलकर मैं कमरे के अन्दर गया। उसके बाद दो कदम आगे बढ़ते ही मेरी आँखें फर्श की ओर गईं और मेरी पूरी देह उसी क्षण विस्मय और आश्चर्य से सिहर उठी।

वूट पहने कौन फर्श पर पड़ा है? और बरामदे की तरफ से किसका ठहाका आ रहा है—वह ठहाका जो हालदार भवन के कोने-कोने को प्रतिध्वनित कर रहा है, जो मेरे खून को पानी बनाकर मेरी तमाम चेतना और ज्ञान को जड़ बनाता जा रहा है। फिर क्या...

इसके बाद मुझे कुछ याद नहीं है।

जब मेरी चेतना लौटी, भारद्वाज को अपने पैताने खड़ा पाया। भवतोष मजुमदार पंखे से हवा झल रहे थे। मेरी आँखें खुलते देखकर भवतोष बाबू ने कहा, "भाग्यवश सिधु चरण ने आपको उस घर के अन्दर जाते देखा था चरना पता नहीं आपकी क्या हालत होती। आप किस बुद्धि के भरोसे वहाँ गए थे?"

मैंने कहा, "अनाथ बाबू जिस रात..."



भवतीय बाबू ने मुझे टोकते हुए कहा, "अब अनाथ बाबू ! कल मैंने जो इतनी बातें कही, उन्हें किसी बात पर विश्वास नहीं आया। भाग्य कही कि उनके साथ आप रात गुजारने नहीं गए थे। उनकी हालत देख ली न। हलधर के साथ जो हुआ, उनके साथ भी वही बात हुई। मरकर लकड़ी हो गए। उनकी आंखों में भी वही दृष्टि थी, देखने का वही भाव, वही सहतीरो की तरफ देखना..."

मैंने मन ही मन कहा, नहीं मर कर वे लकड़ी नहीं हो गए हैं। मैं जानता हूँ, वे मर कर बया हो गए हैं। कल सुदह भी अगर जाऊँ तो वे मिलेंगे उनके शरीर पर होगा काला कोट, पैरों में बूट और वे हातदार भवन के पूरबी जंगल से हाथों में भीम के दातुन घामे, हंसते हुए, बाहर निकलते दीखेंगे।

## शिवु और राक्षस की कहानी

“आ शिवु, इधर सुनते जा।”

शिवु जब स्कूल जाता था, फटिकदा अक्सर उसे इसी तरह पुकार करता था।

फटिकदा का मतलब है पागल फटिक।

जयनारायण बाबू के मकान से आगे बड़ने पर, चौराहे के पास, जहाँ आज दस बरसों से स्टीम रोलर पड़ा हुआ है, ठीक उस स्टीम रोलर के सामने फटिकदा की छोटी-सी टिन की चाल है। न जाने, फटिक आठो पहर ओसारे पर बैठकर खूट-खूट कौन-सा काम करता रहता है। शिवु को इतना ही मालूम है कि फटिकदा बहुत ही गरीब है। लोग कहा करते हैं, फटिक किसी जमाने में खूब लिखा-पढ़ा करता था, इसीलिए वह पागल हो गया है। मगर जब शिवु फटिक की बातें सुनता है तो उसे लगता है, फटिक की तरह बुद्धिमान व्यक्ति कोई दूसरा नहीं है।

तब हा, यह सच है कि फटिक की ज्यादातर बातें अजीब और पागल-पन से भरी हुआ करती हैं, “कल चाद के आसपास का हिस्सा देखा था? बाईं ओर एक सीग जैसा कुछ निकला हुआ था। कुछ दिनों से कौवे अजीब मुर में पुकार रहे हैं। सुना है? सबको ठड लग गई है।”

शिवु को हंसने का मन करता है, कभी-कभी ऊब भी महसूस होती है। जिन बातों का कोई उत्तर नहीं हो सकता, जिनका सचमुच कुछ अर्थ नहीं होता, उन बातों को सुनने का मतलब है समय नष्ट करना। यही वजह है कि कभी-कभी फटिक के पुकारने पर भी शिवु उसके पास नहीं जाता। “आज मेरे पास वक्त नहीं है फटिकदा, दूसरे दिन आऊंगा।” यह कहकर वह स्कूल की ओर चल देता है।

आज भी उसने सोचा था कि वह नहीं जाएगा, परन्तु फटिकदा ने आज बहुत ज्यादा दबाव डाला।

“मैं तुम्हें जो कहना चाहता हूँ, उसे न सुनेगा तो तेरी हानि होगी।”

शिवु सुन चुका है कि पागल आदमी बीच-बीच में ऐसी बातें बोला करता है जो सामान्य मनुष्य के लिए असंभव हैं। इसीलिए हानि के बारे में सोचते ही वह डरता हुआ फटिक की ओर चलता गया।



“मैं बहुत-बहुत की तरह रत बदलने में समर्थ हो जाऊंगा।”

शिव ने कहा, “फटिकदा, मैंने देखा क्या?”

“क्या?”

“दात।”

“ओ। क्या मानस टूटा?”

“यों सब ठीक है, पान का दाग है और दो दात कुछ बड़े हैं।”

“बीन-बीन में?”

“यगन के। यों के।” शिव ने उगली में बताया।

“हू। यों के दात को क्या बना जाता है, मानस है?”

“क्या?”

“श्वदन्त। कुकुर दात।”

“ओ।”

“आदमी के जबड़े में दन्तों का बड़ा कुकुरदात इसके पहले सभी देता है।”

“शायद नहीं।”

“कुकुर दात कितना बड़ा होता है, जानते हो?”

“कितने का।”

“ईडियॉट! सिर्फ कुत्ते का ही क्या? सभी मांसाहारी जानवरों के श्वदन्त बड़े होते हैं। उन्हीं दातों से कच्चे मांस को मोच-मोचकर हड्डियों को घे चबाकर खाते हैं। शासक हिसक जीव-जन्तु।”

“ओ।”

“और किसके श्वदन्त बड़े होते हैं?”

शिव आकाश-पाताल सोचने लगा। और किसका हो सकता है? आदमी और जीव-जन्तुओं के अलावा दातवाले और होते ही क्या है?

फटिकदा ने अपने हमामदिस्ते में एक अखरोट और एक चम्मच काली जीरा डालकर कहा, “... ? ... के ... ?”

“राक्षसों के ... ?”

और, आजकल ... का

अस्तित्व तो दन्तकथाओं की पुस्तकों के पृष्ठों में ही है। राक्षसों के बारे में शिव ने डेरों कहानियां पढ़ी हैं : उनके दात मूली की तरह होते हैं, सूप की तरह...

शिव चीक पड़ा।

सूप की तरह पीठ।

जनार्दन बाबू की पीठ सीधी नहीं है। कंसी तो कुबड़े की जैसी, सूप

की तरह। शिवु ने किसी से सुना था कि जनादेन बाबू बात के मरोज हैं, इसलिए पीठ सीधो कर चल नहीं पाते।

मूली की तरह दांत, सूप की तरह पीठ... और ? और पता नहीं राक्षसों के क्या-क्या होते हैं।

और गेंद की तरह आंखें।

जनादेन बाबू को आंखों को शिवु ने ध्यान से देखा है ? नहीं; नहीं देखा है। ध्यान से देखने की सभावना नहीं है।

बजह यह है कि जनादेन बाबू चश्मा लगाते हैं और उनके चश्मे के कांच का रंग मटमला है। उनकी आंखों का रंग लाल या बैंगनी या कि हरा है, यह समझना नामुमकिन है।

शिवु गणित में तेज है। लघुतम समापवर्त्तक, महत्तम समापवर्त्तक, मिल्न—किसी को हल करने में वह असमर्थ नहीं रहता है। कम से कम कुछ दिन पहले तक उसके साथ यही बात थी ! प्यारीचरण बाबू जब गणित शिक्षक थे, उसे हर रोज दस में से दस अंक प्राप्त होते थे। मगर दो दिनों से शिवु थोड़ी बहुत उलझन महसूस कर रहा है। कम उसने मन के छोर से स्वयं को बहुत कुछ संभाल लिया था। सुबह नींद टूटते ही उसने मन ही मन कहना शुरू किया था कि वे राक्षस नहीं हो सकते। आदमी राक्षस नहीं हुआ करते। चाहे पहले होते हों, मगर अब नहीं हुआ करते। जनादेन बाबू राक्षस नहीं है, वे मनुष्य है। क्लास में भी बैठा-बैठा वह इन्हीं बातों को दुहरा रहा था। तभी एक बात हो गई।

ब्लैक बोर्ड पर एक हिासाव लिखकर जनादेन बाबू अनभने जैसे हो गए और अपना चश्मा उतारकर उसे चादर के छोर से पोछने लगे। और ठीक उसी वक्त शिवु से उनकी आंखें टकरा गयीं।

शिवु ने जो कुछ देखा उससे उसके हाथ-पांव ठंडे पड़ गए।

जनादेन बाबू की आंखों की सफेदी—सफेद रंग की नहीं, घटख लाल रंग की है—पलट्टू की पेंसिल की तरह लाल।

पह देखने के बाद शिवु बेचैन हो उठा।



यो शिवु छुट्टी होने पर सीधे घर नहीं जाता है। वह सुरु में मित्तिर के बगीचे में जाता है। छतियन के पेड़ के तले लाजवंती की जो लताएं हैं, उन्हें वह अपनी उगलियों से छेड़-छेड़कर नींद में मशगूल कर देता है। उसके बाद वह सरलदीधि के किनारे जाता है। तालाब के पानी में ठीकरे फेंककर वह भीमरो खेलता है। उसका ठिकरा अगर सात बार से ज्यादा

फलांगता हुआ उम पार पहुँच गके तो वह हरेन का रेकाई तोड़ मकेगा। गरसदीधि के बाद ही इंट की भट्टियों का मंदान है। यहाँ यह सजी हुई इंटों की छल्ली पर दमेक मिनट तक व्यायाम करने के बाद कुहनी के बल घसता हुआ मंदान पार करता है और उमके बाद मकान के सिइकीनुमा दरवाजे के पास आता है।

आज मिस्त्रि के बगीचे में आने पर उसे साजवती नगाएं झुकी हुई मिली। ऐसी बात क्यों हुई? सताओं पर से कोई चहलकदमी करते हुए गया है? इस रास्ते से कोई तो आता-जाना नहीं है!

अब शिव को बगीचे में रहने की इच्छा नहीं हुई। एक अजीब सन्नाटा रंग रहा है। आज जैसे जल्दी-जल्दी ग्राम पिरती जा रही है। कौए क्या रोज इसी तरह चिल्लाते हैं या किसी वजह में ब्रे डर गए हैं? सरनदीधि के किनारे हाथ से किताबें नीचे उतारकर रखते ही शिव ने महसूस किया, आज ठीकरे उछालना ठीक नहीं है। आज उसे ज्यादा देर तक बाहर नहीं रहना चाहिए। अगर रहेगा तो हो सकता है, विपत्ति का सामना करना पड़े।

एक विशाल मछली जैसी किसी चीज ने पोस्टर के बीच छलांग लगाकर गहरे पानी में डुबकी लगाई।

शिव ने किताबें उठा ली। उम पार के बरगद पर झूलते घमगादड़ों ने पेड़ को स्याह जैसा बना डाला है। थोड़ी देर के बाद उनके उड़ने का समय आएगा। फटकदा ने उससे कहा है कि घमगादड़ों के सिर में घून न रहने का कारण वह एक दिन उसे बता देगा।

जामुन के पीछे की झाड़ी से एक तपक की आवाज आयी, "खोक्! खोक्! खोक्!"

शिव अपने घर की ओर रवाना हुआ।

इंटों के भट्टे के पास आते ही उसकी नजर जनार्दन बाबू पर पड़ी।

इंटों की छल्ली से बीसेक हाथ की दूरी पर एक बेर का पेड़ है। उसके पास दो बकरियाँ खेल रही हैं और जनार्दन बाबू अपने हाथों में किताब और छाता थामे उनका खेल देख रहे हैं।

शिव सास रोककर चुपचाप इंट की एक छल्ली पर चढ़ गया और दो इंटों की फाँक से अपनी गरदन को यथासंभव आगे बढ़ाकर, जनार्दन बाबू को देखने लगा।

उसने देखा, बकरियों की ओर ताकते-ताकते जनार्दन बाबू ने दो बार अपने दाहिने हाथ को उलटकर उससे होंठों के नीचे के हिस्से को सह-लाया।

जीभ से लार टपके बिना कोई आदमी इस तरह अपने होंठों के नीचे का हिस्सा नहीं पोंछता है।

उसके बाद शिवु ने देखा, जनार्दन बाबू उस प्रकार नीचे की ओर झुक पड़े, जिस तरह कि लोग आक्रमण करने की स्थिति में किया करते हैं।

उसके बाद एकाएक हाथ से किताब और छाता फेंककर एक ही भ्रष्ट में बकरी के एक बच्चे को पकड़कर हाथों में उठा लिया। और, उसी क्षण शिवु को बकरी के बच्चे की चीख और जनार्दन बाबू की हंसी सुनाई पड़ी।

शिवु ने एक ही छलांग में इंट की छल्ली को पार किया। दूसरी छलांग में वह एक दूसरी छल्ली को ज्योंही फलांगना चाहता था कि वह फिसलकर घड़ाम से गिर पड़ा।

“वहां कौन है ?”

किसी तरह शिवु ने जब अपने आपको संभाला तो देखा, जनार्दन बाबू बकरी के बच्चे को नीचे रखकर उसकी ओर आ रहे हैं।

“कौन हो ? शिवराम ? चोट लग गई ? तुम वहां क्या कर रहे थे ?”

शिवु ने बोलने की चेष्टा की, पर उसका गला सूख गया था। उसे इच्छा हो रही थी कि बदले में वह जनार्दन बाबू से पूछे कि आप वहां क्या कर रहे थे; कि आपके हाथ में बकरी का बच्चा क्यों था, कि आपकी जीभ से लार क्यों टपक रही थी।

जनार्दन बाबू शिवु के पास आये और बोले, “लो, मेरा हाथ पकड़ो।”

बिना उनका हाथ पकड़े शिवु किसी तरह उठकर खड़ा हुआ।

“तुम्हारा घर निकट ही है न ?”

“हां सर।”

“वही लाल जैसा मकान ?”

“हां सर।”

“ओ।”

“मैं चल रहा हूं, सर।”

“वह क्या है—खून ?”

शिवु ने देखा, उसका घुटना छिल गया है और थोड़ा-सा रक्त चूकर नीचे गिर पड़ा है। जनार्दन बाबू उसी रक्त की ओर ताक रहे हैं और उनके चश्मे के कांच आग की तरह चमक रहे हैं।

“मैं चल रहा हूँ, सर।”

शिवु ने किसी तरह जमीन पर से अपनी किताबें उठायीं।

“मुनो, शिवराम।”

फलांगता हुआ उस पार पहुंच सके तो वह हरेन का रेकाहं तोड़ मकेगा। सरलदीपि के बाद ही इंट की भट्टियों का मैदान है। यहाँ वह सजी हुई इंटों की छल्ली पर दमेक मिनट तक व्यायाम करने के बाद कुहनी के बल चलता हुआ मैदान पार करता है और उसके बाद मकान के सिङ्कीनुमा दरवाजे के पास आता है।

आज मित्रि के बगीचे में आने पर उसे साजवती सताएं झुकी हुई मिली। ऐसी बात क्यों हुई? सताओं पर से कोई पहलकदमी करते हुए गया है? इस रास्ते से कोई तो आता-जाता नहीं है!

अब शिवु को बगीचे में रहने की इच्छा नहीं हुई। एक अजीब सन्नाटा रंग रहा है। आज जैसे जल्दी-जल्दी शाम घिरती जा रही है। कोए क्या रोज इसी तरह चिल्लाते हैं या किसी वजह में वे डर गए हैं? सरलदीपि के किनारे हाथ से किताबें नीचे उतारकर रसते ही शिवु ने महसूस किया, आज ठीकरे उछालना ठीक नहीं है। आज उसे ज्यादा देर तक बाहर नहीं रहना चाहिए। अगर रहेगा तो हो सकता है, विपत्ति का सामना करना पड़े।

एक विशाल मछली जैसी किसी चीज ने पोखर के बीच छलांग लगाकर गहरे पानी में डुबकी लगाई।

शिवु ने किताबें उठा ली। उस पार के बरगद पर झूलते घमगादड़ों ने पेड़ को स्याह जैसा बना डाला है। थोड़ी देर के बाद उनके उड़ने का समय आएगा। फटिकदा ने उससे कहा है कि घमगादड़ों के सिर में खून न रहने का कारण वह एक दिन उसे बता देगा।

जामुन के पीछे की झाड़ी से एक तक्षक की आवाज आयी, "खोक्! खोक्! खोक्!"

शिवु अपने घर की ओर रवाना हुआ।

इंटों के भट्टे के पास आते ही उसकी नज़र जनार्दन बाबू पर पड़ी। इंटों की छल्ली से बीसेक हाथ की दूरी पर एक बेर का पेड़ है। उसके पास दो बकरियाँ खेल रही हैं और जनार्दन बाबू अपने हाथों में किताब और छाता धामे उनका सेन देख रहे हैं।

शिवु सात रोककर चुपचाप इंट की एक छल्ली पर चढ़ गया और दो इंटों की फाँक से अपनी गरदन को यथासंभव आगे बढ़ाकर, जनार्दन बाबू को देखने लगा।

उसने देखा, बकरियों की ओर ताकते-ताकते जनार्दन बाबू ने दो बार अपने दाहिने हाथ को उलटकर उससे होंठों के नीचे के हिस्से को सह-लाया।



जीभ से लार टपके बिना कोई आदमी इस तरह अपने होंठों के नीचे का हिस्सा नहीं पोंछता है।

उसके बाद शिव ने देखा, जनादन बाबू उस प्रकार नीचे की ओर झुक पड़े, जिस तरह कि लोग आक्रमण करने की स्थिति में किया करते हैं।

उसके बाद एकाएक हाथ से किताब और छाता फेंककर एक ही झपट्टे में बकरी के एक बच्चे को पकड़कर हाथों में उठा लिया। और, उसी क्षण शिव को बकरी के बच्चे की चीख और जनादन बाबू की हंसी सुनाई पड़ी।

शिव ने एक ही छलांग में इंट की छल्ली को पार किया। दूसरी छलांग में वह एक दूसरी छल्ली को ज्योंही फलांगना चाहता था कि वह फिसलकर घड़ाम से गिर पड़ा।

“वहाँ कौन है ?”

किसी तरह शिव ने जब अपने आपको संभाला तो देखा, जनादन बाबू बकरी के बच्चे को नीचे रखकर उसकी ओर आ रहे हैं।

“कौन हो ? शिवराम ? चोट लग गई ? तुम वहाँ क्या कर रहे थे ?”

शिव ने बोलने की चेष्टा की, पर उसका गला सूख गया था। उसे इच्छा हो रही थी कि बदले में वह जनादन बाबू से पूछे कि आप वहाँ क्या कर रहे थे; कि आपके हाथ में बकरी का बच्चा क्यों था, कि आपकी जीभ से लार क्यों टपक रही थी।

जनादन बाबू शिव के पास आये और बोले, “लो, मेरा हाथ पकड़ो।”

बिना उनका हाथ पकड़े शिव किसी तरह उठकर खड़ा हुआ।

“तुम्हारा घर निकट ही है न ?”

“हां सर।”

“वही लाल जैसा मकान ?”

“हां सर।”

“ओ।”

“मैं चल रहा हूँ, सर।”

“वह क्या है—खून ?”

शिव ने देखा, उसका घुटना छिल गया है और थोड़ा-मा रक्त चूकर नीचे गिर पड़ा है। जनादन बाबू उसी रक्त की ओर ताक रहे हैं और उनके चश्मे के काच आग की तरह धमक रहे हैं।

“मैं चल रहा हूँ, सर।”

शिव ने किसी तरह जमीन पर से अपनी किताबें उठायी।

“सुनो, शिवराम।”

जनादन बाबू ने आगे बढ़कर शिव की पीठ पर अपना हाथ रखा। शिव के कलेजे पर जैसे घुरमस की चोटें पड़ने लगी।

“अच्छा ही हुआ कि तुम एकान्त में मिल गए। सोचा था, तुमसे एक बात पूछू। गणित में तुम कठिनाई महसूस करते हो? आज इतने आसान सवाल को भी तुम हल नहीं कर सके। अगर तुम्हें कोई कठिनाई महसूस हो तो छुट्टी के बाद मेरे घर पर आया करो, मैं तुम्हें समझा दिया करूंगा। गणित ऐसा विषय है जिसमें पूर्णतः प्राप्त किए जा सकते हैं। मेरे घर पर आओगे न?”

शिव किसी तरह दो कदम पीछे हटा। जनादन बाबू का हाथ अपनी पीठ से अलगकर धूक निगलते हुए बोला, “नहीं सर। मैं खुद हल कर लूंगा, सर। कल ठीक हो जाएगा।”

“ठीक है। तब हां, कठिनाई हो तो बताना। और एक बात। तुम मुझ से इतना डरते क्यों हो? मैं क्या राक्षस हूँ जो दांत से काटकर खा डालूंगा? अयं! ह...ह...ह...ह...”



ईंट की भट्ठी से एक ही दौड़ में घर लौट आने के बाद शिव ने देखा, सामने के मकान में हीरेन ताऊ आए हुए हैं। हीरेन ताऊ कलकत्ते में रहते हैं। वे मछली पकड़ने के शौकीन हैं। बाबूजी और हीरेन ताऊजी प्रातः हर रविवार सरलदीधि में मछली पकड़ने जाते हैं। अब की भी शायद वे लोग जाएंगे, क्योंकि शिव ने देखा, चीटी के अंडों का चारा बनाया गया है।

शिव ने यह भी देखा कि अब की हीरेन ताऊजी बंदूक भी लेकर आए हैं। सुनने में आया है, बाबूजी और हीरेन ताऊजी सोनापुर की झील में चाहा का शिकार करने जाएंगे। बाबूजी भी बंदूक चलाते हैं मगर वे हीरेन ताऊजी को तरह निशानेबाज नहीं हैं।

रात में खा-पीकर शिव शयन-कक्ष में गया और सोचने लगा। जनादन बाबू के राक्षस होने में अब उसे किसी प्रकार का सदेह न रह गया था। भाग्यवश फटिकदा ने उसे होशियार कर दिया था। वरना आज हो सकता है ईंट की भट्ठी में ही... इसके बाद शिव सोच नहीं सका।

बाहर खुली चादनी फंली है। भजू के घर तक साफ-भाफ दीख रहा है। शिव की परीक्षा निकट है, अतः वह रात में जल्दी ही सो जाता है और भोर में उठकर पढ़ता है। जब तक वह रोशनी नहीं बुझा देता, उसकी आँखों में नींद उतरती नहीं है। इतना खरूर है कि अगर चादनी रात न होती तो

वह रोशनी जलाकर रखता, क्योंकि ऐसा न करता तो सम्भवतः भय से उसे नींद ही न आती। बाबूजी और हीरेन ताऊजी अभी खाने बैठे हैं, मां उन्हें खिला रही है।

खिड़की के बाहर, चांदनी के प्रकाश में चमकते बेल के वृक्ष की ओर ताकते-ताकते शिवु की आंखों में नींद उतर आई थी। तभी किसी चीज पर दृष्टि पड़ते ही उसकी नींद भाग खड़ी हुई और उसके रोंगटे खड़े हो गए।

दूर से एक आदमी उसकी खिड़की की ही ओर चला आ रहा है।

वह आदमी थोड़ा कुबड़ा है और उसकी आंखों पर चरमा है। चश्मे के काच चांदनी में चमक रहे हैं।

जनार्दन बाबू !

शिवु का गला फिर से सूख गया।

जनार्दन बाबू ने दबे पावों बेल के वृक्ष को पार किया और आहिस्ता-आहिस्ता वे खिड़की के विलकुल निकट आकर खड़े हो गए। शिवु ने अपनी वगत से तकिष् की जोरों से अकवार भर लिया।

कुछ देर तक इधर-उधर ताकने के बाद जनार्दन बाबू ने भिन्नक के साथ कहा, "शिवराम है जो ?"

यह क्या ? उनके स्वर में अनुनासिक भाव क्यों है ? रात में उनका राक्षसपन और भी तीव्र हो जाता है ?

"शिवराम !" दूसरी बार पुकार आई।

अब शिवु की मा ने ओसारे पर से कहा, "ए शिवु बाहर कोई पुकार रहा है। तू सो गया क्या ?"

जनार्दन बाबू खिड़की से ओझल हो गए। कुछ देर के बाद उनकी आवाज सुनाई पड़ी, "शिवराम अपनी ज्यामिति की किताब इं ट की भट्टी पर छोड़ आया था। कल रविवार है, स्कूल में उससे मुलाकात नहीं होगी। आज सुबह उठकर उसे पढ़ना है, इसीलिए..."

उसके बाद फुमफुमाकर क्या कहा, शिवु को सुनाई नहीं पड़ा। आखिर में सिर्फे बाबूजी की बातें सुनाई दी, "हा अगर आपका यह कहना है तो अच्छा ही है। न होगा तो आपके घर पर ही भेज दिया कहेंगा।" हां, कल से।"

शिवु के न तो होंठ ही धरधराए और न गले से ही आवाज निकली, लेकिन उसका मन चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा, "नहीं, नहीं, नहीं, मैं नहीं जाऊंगा, किसी भी हालत में नहीं जाऊंगा। आप लोगों को कुछ भी मालूम नहीं है। वे राक्षस हैं ! जाले ही मुझे खा जायेंगे।"

दूमरे दिन रविवार होने पर भी शिवु सुबह-सुबह फटिकदा के मकान पर पहुँचा। उमे फटिकदा में बहुत-कुछ कहना है।

उमको देसकर फटिकदा बोना, "स्वागतम् ! तेरे घर के पाम नाग-फणी का पौधा है न ? दाय से घोड़ा-गा काटकर मुझे दे जाना। दिमाग में एक तरह की नई रंगोई पकाने की बात आई है।"

शिवु ने भर्राई आवाज में कहा, "फटिकदा !"

"क्या ?"

"तुमने बताया था कि जनार्दन बाबू राक्षस हैं..."

"किमने कहा है ?"

"तुम्ही ने तो कहा था।"

"बिलकूल नहीं। तुमने मेरी बात पर ध्यान नहीं दिया।"

"कैसे ?"

"मैंने तुम्हें कहा था कि जनार्दन बाबू के दातों को गौर से देखना। उसके बाद तूने बताया कि उनके श्वदन बड़े-बड़े हैं। मैंने कहा, योंतें कुकुर दात राक्षसों के भी होते हैं। इसका मतलब क्या यह है कि जनार्दन बाबू राक्षस हैं ?"

"फिर वे राक्षस नहीं हैं ?"

"ऐसा मैंने नहीं कहा था।"

"फिर ?"

फटिकदा ओसारे पर खड़ा हो गया और उमने खोरो से एक उवासी ली। फिर बोला, "आज तेरे ताऊजी पर नजर पड़ी। लगता है, मछली पकड़ने आए हैं। मंबकड़ी साहब ने बसी से एक बार शेर पकड़ा था। उसकी कहानी मालूम है ?"

शिवु ने मरियल की तरह कहा, "फटिक दा, तुम क्या अट-सट बर रहे हो ? जनार्दन बाबू मचमुच ही राक्षस है। मैं जानता हू कि वे राक्षस हैं। मैंने बहुत कुछ देखा-सुना है।"

उमके बाद शिवु ने फटिक से पिछले दो दिनों की घटनाओं के बारे में बताया। सब कुछ सुनने के बाद फटिक ने गभीरता के साथ सिर हिलाते हुए कहा, "हम ! तो तू इसके सबध में क्या करने जा रहा है ?"

"तुम्ही बता दो फटिकदा। तुम्हें तो सब मालूम ही है।"

अपना सिर झुकाकर फटिक सोचने लगा।

मौका देखकर शिवु ने कहा, "अभी मेरे घर पर बंदूक है।"

फटिक ने दात पीसकर कहा, "बलिहारी है तुम्हारी बुद्धि की ! बंदूक रहने से क्या होगा ? बंदूक से राक्षस को मारेगा ? गोली घूमकर चली

आएगी और जो गोली चलायेगा, उसी को आकर लगेगी।”

“ऐसा ?”

“जी हाँ। देवकफ कहीं का।”

“फिर ?” शिव की आवाज धीमी होती जा रही थी। “फिर क्या होगा फटिक दा ? आज से मुझे बाबूजी...”

“ज्यादा मत बक। बड़-बड़कर मेरे कान का परदा फाड़ रहा है।”

दो मिनट तक सोचने के बाद फटिक शिव की ओर मुड़कर बोला,  
“जाना ही पड़ेगा।”

“कहा ?”

“जनार्दन बाबू के घर पर।

“क्यों ?”

“उनकी जन्मकुंडली देखनी है। मैं अभी निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकता हूँ। जन्मकुंडली देखने पर सब पता चल जाएगा। पेटी-चंगेरी उलटने-पलटने से जन्मकुंडली मिल ही जाएगी।”

“मगर...”

“तू चुप रह। पहले योजना सुन ले। हम दोनों दोपहर में जाएंगे। आज रविवार है, वे घर पर ही रहेंगे। तू मकान के पिछवाड़े में जाकर जनार्दन बाबू को पुकारना। जब बाहर निकलें तो कहना, गणित मम भूने के लिए आया हूँ। उसके बाद दो-चार आलतू-फालतू बातें कर उन्हें अटकाकर रखना। मैं उसी मौके पर मकान के सामने की तरफ से अन्दर जाकर जन्मकुंडली ले आऊंगा। फिर तू इधर से भागना और मैं उधर से भागूंगा। बस।”

“उसके बाद ?” शिव को योजना बहुत ही अच्छी लगी हो, बात ऐसी नहीं थी। लेकिन फटिक पर निर्भर करने के अलावा दूसरा कोई चारा नहीं था।

“तीसरे पहर तुझे फिर से मेरे घर पर आना है। तब तक जन्मकुंडली देखकर, पुरानी कुछ पोरियों को उलट-पलटकर मैं विलकुल तैयार रहूंगा। अगर देखकर पता चला कि जनार्दन बाबू सचमुच राक्षस है तो फिर उसका उपाय मैं जानता हूँ। तू धरना मत। और अगर देखकर पता चला कि राक्षस नहीं है तो फिर चिन्ता की कोई बात ही नहीं।”

फटिकदा ने बताया था कि दोपहर में बाहर निकलेंगे। यही वजह है कि ग्या-पीकर शिव फटिक के घर पर आया। पाँचक मिनट के बाद फटिकदा ने बाहर आकर कहा, “मेरी बिल्ली को सुधनी की आदन लग गई है। भँभटों की बया कोई कमी है ? शिव ने देखा, फटिक के हाथों में एक

जोड़ा घमड़े का फटा दस्ताना और माइकिल की एक घंटी है। घंटी को शिवु के हाथ में घमाते हुए कहा, "इसे तू रत ले। मुगीयत में फगने पर इसे बजा देना। मैं आकर तेरी रक्षा करूंगा।"

पूरबी महलने के अंतिम छोर पर, दोन गोविन्द के मकान के बाद ही जनार्दन मास्टर का मकान है। ये अनेने ही रहते हैं, घर में नौकर तक नहीं रखते। बाहर में यह समझना मुशकल है कि इस घर में कोई राक्षस रहता है।

जब रास्ता थोड़ा ही बाकी बच गया, शिवु और फटिकदा अलग-अलग हो गए।

मकान के पिछवाड़े में पहुँचने के बाद शिवु को लगा, उमका गला फिर से सूखता जा रहा है। जनार्दन बाबू को पुकारने के बरत अगर उमके गले से आवाज न निकले तो ?

मकान के पिछवाड़े एक दीवार है, उम दीवार में एक दरवाजा और दरवाजे के पास ही अमरूद का एक पेड़। उस पेड़ के आसपास भाड़-भूसाडों का जगल है।

शिवु दब पावो आगे बढ़ता गया। अब वह देर करेगा तो फटिकदा की सारी योजना चोपट हो जाएगी।

थोड़ी-मी और हिम्मत बटोरने के लिए शिवु अमरूद के पेड़ पर हाथ रलकर उमके सहारे टिकने जा रहा था और 'मास्टर-साहब' कहकर-पुकारने जा रहा था कि तभी 'क्विचमिच' आवाज सुनकर उसने नीचे की ओर देखा और कालभरवी की एक लता के झुरमुट में एक गिरगिट को जाते हुए देखा। गिरगिट जिस रास्ते से गुजरा, उसकी बगल में सफेद जैसी कोई चीज पड़ी हुई दीखी।

याम की एक कमाची से झुरमुट में सूरख करते ही शिवु सिहर उठा! यह तो हड्डी है। जानवर की हड्डी। किस तरह के जानवर की ? बिल्ली की या कुत्ते की या कि बकरे की ?

"वहा क्या देख रहे हो शिवराम ?"

शिवु की रीढ़ की हड्डी में बिजली खेन गई। उसने पीछे की ओर मुड़कर देखा और जनार्दन बाबू को लिडकी के पल्लों को हटाकर, गरदन बढ़ाए अपनी ओर अजीब निगाहों से ताकते हुए पाया।

"कुछ खो गया है ?"

"नहीं सर... मैं मैं..."

"तुम क्या मेरे पास ही आ रहे थे ? फिर पिछवाड़े के दरवाजे से क्यों ? आओ अन्दर चलें आओ।"

पीछे की ओर मुड़ते ही शिव ने पाया, उसका एक पैर लता में फँस गया है।

“कल से मुझे संरदी-बुंधार हो गया है। रात में तुम्हारे घंर पर गया था न। तब तुम सोए थे।”

शिव इतनी जल्दी-जल्दी भाग नहीं पाएगा। उधर फटिकदा का काम खत्म हो ही नहीं पाएगा। वह बीच में ही पकड़ लिया जाएगा। एक बार मन में हुआ कि घंटा बजाए। फिर मन में हुआ कि अभी वह किसी विपत्ति में फँसा नहीं है। हो सकता है कि फटिकदा विगड़ने लगे।

“तुम भूंक कर क्या देख रहे थे ?”

शिव का तत्काल कोई उत्तर सूझ नहीं पड़ा। जनार्दन बाबू ने आगे बढ़कर कहा, “वही ही गंदी जगह है। उधर न जाना ही अच्छा है। न जाने कुत्ता कहां में माम लाकर हड़डी वहां फेंक देता है। उसे एक-एक बार डांटूंगा, मगर हो नहीं पाना है। मुझे जीव-जन्तु बंधुत अच्छे लगते हैं न !”

जनार्दन बाबू ने अपने हाथके पिछले हिस्से में होंठों के नीचे का हिस्सा पोंछा।

“तुम अन्दर जाओ शिव... तुम्हारा गणित...”

अब देरी नहीं करनी चाहिए। “आज नहीं कल आऊंगा,” यह कहकर शिव ने मुडकर दौड़ लगाई और एक ही दौड़ में मैदान, रास्ता, नीलू का मकान, कार्तिक का मकान, हरेन का मकान—सबको पारकर वह माहा-बाबू के गिरे मकान के ओमारे पर आकर हांपने लगा। आज की बात उसे कभी नहीं भूलेगी। उसमें इतनी हिंमत हो सकती है, उसने स्वयं कभी इस पर सोचा नहीं था।



तीसरा पहर आते आते शिव फटिक के मकान पर आकर हाजिर हुआ। पता नहीं, फटिकदा को उसकी जन्मकुंडली में क्या मिला होगा।

शिव पर नजर पडते ही फटिक ने मिर हिलाया।

“सब गडबड हो गया।”

“क्यों फटिक दा ? जन्मकुंडली नहीं मिली ?”

“मिल गई है। तेरे गणित के शिक्षक राक्षस हैं, इसमें सदेह की कोई गुंजाइश नहीं है। वे राक्षस ही नहीं, बल्कि पिरिन्डी राक्षस है। मामला गंभीर है। साढ़े तीन भौ पुरखो पूर्व में लोग पूरे राक्षस थे। मगर इनमें तेजी इतनी है कि अब भी इनमें दो-चार आधे राक्षस के रूप में मिल जाते हैं।

अब किसी भी देश में, पूरा राक्षस मिमता नहीं है। है तो गिरक अफ्रीका के किसी इलाके में, ब्राज़िल और बोलिवो यगैरह् रगानो में। तब हा, आधा राक्षस अब भी कभी-कदा गभ्य देनों में मिल जाता है। जनार्दन बाबू भी उमी किस्म के है।”

“फिर गडबड क्यों ?” शिवू की आवाज घरघरा उठी। अगर फटिकदा हार मान लें तो उसकी आँसों के मामने अंधेरा छा जाएगा।

“तुमने सबेरे बताया था कि तुम उपाय जानते हो ?”

“म न जानता हूँ, ऐसी कोई चीज नहीं है।”

“फिर ?”

फटिकदा कुछ गभीर हो गया। उसके बाद बोला, “मछली के पेट में क्या रहता है ?”

तो, फटिक दा फिर पागलपन करने लगा। शिवू ने रोनी-रोनी-सी आवाज में कहा, “फटिक दा, राक्षस की बाँछें चल रही थी और तुम मछली की बात से आए।”

“क्या रहता है ?” फटिक ने गरजते हुए कहा।

“पो—पोटा ?” फटिकदा की आवाज मुनकर शिवू बेहद डर गया था।

“तेरा गिर ! दमनी कम बिधा में सू बगुने का घरानम भी लगा न जाएगा। दाईं बर्ये की उम्र में मैंने एक श्चोक लिगा था जो अब भी याद है :

नर या बंदर या जितने भी जीव जगत के  
हृत् पिठों में प्राण रहा करते हैं सबके।  
मस्स्य-उदर में प्राण बसा करते दनुजों के  
वे न सहज ही अतः मरा करते मनुजों में।”

बात तो ठीक है। शिवू ने बहुत-सी किताबों में पढ़ा है कि राक्षसों के प्राण मछलियों के पेट में रहते हैं। उमें यह बात याद रखनी चाहिए थी।

श्लोक को दुहराते हुए फटिक ने कहा, “दोपहर जब तू मास्टर के घर पर गया तो जनार्दन राक्षस को किस हालत में पाया ?”

“बताया कि उन्हें सरदी-बुखार है।”

“होगा ही। फटिक की आँखें चमकने लगी। होगा नहीं ? प्राण खतरे में जो है ! जैसे ही कतला मछली बसी से पकड़ी गई है, वैसे ही बुखार आ गया। यह तो होगा ही !”

उसके बाद शिवू की ओर बढ़कर, उसकी कमीज के अगले हिस्से को एकाएक मुट्ठी में कसते हुए बोला, “हो सकता है, अभी भी वक्त है। तेरे



ताऊजी आधा घंटा पहले सरलदीधि ? उस आधे मन की कतला मछली पकड़कर घर लौटे हैं। देखते ही मुझे अन्दाज लग गया कि उसके पेट में ही जनादंन राक्षस के प्राण हैं। अभी बुखार के बारे में सुनकर मेरा विश्वास पक्का हो गया। उस मछली को चीर कर देखना होगा।”

“मगर यह कैसे संभव हो पाएगा फटिकदा ?”

“आसानी से। तुम्ह पर ही निर्भर है। और अगर यह न हो पाया तो सू किस मुसीबत में फस सकता है, इसकी कल्पना करते ही मेरा पसीना छूटने लगता है।”

एक घंटे के बाद शिवु सरलदीधि की आधे मन की उस कतला मछली को एक डोरी से बांधकर, घसीटता हुआ फटिक के मकान के सामने आया। पकावट के मारे वह हाँफ रहा था।

फटिक ने कहा, “किमी को पता नहीं है न ?”

“नहीं,” शिवु ने कहा, “वाबूजी नहा रहे थे, ताऊजी श्रीनिवास को डांट-फटकार रहे थे और मा सांझवाती में ध्यस्त थी। नारियल की रस्सी खोजने में देर हो गई। और उफ, इतनी भारी है !”

“परवाह नहीं। पेशियां सुदृढ़ होंगी।”

फटिक मछली लेकर अन्दर चला गया। शिवु ने सोचा, फटिकदा में आश्चर्यजनक बुद्धि और ज्ञान है। उसकी वजह से इस बार शिवु के प्राणों की रक्षा हुई। हे भगवान् ! ऐसा करना कि जनादंन राक्षस के प्राण मछली के पेट में ही मिलें।

दस मिनटों के बाद फटिक बाहर निकला और शिवु की ओर हाथ बढ़ाकर बोला, “ले। इसे कभी अपने से अलग मत करना। रात में तकिया के नीचे रखकर सोना। स्कूल जाते वक़्त अपनी पेट की दवाई जेब में रख लेना। अगर यह तेरे हाथ में रहेगा तो राक्षस कँचुए की तरह असहाय रहेगा और इसे इमामदिल्ली में कूटते ही राक्षस की जान खत्म हो जाएगी। मेरी राय में कूटने की जरूरत नहीं पड़ेगी, हाथ में रख लेना ही काफी है, क्योंकि बहुत बार ऐसा देखने में आया कि पिरिन्डो राक्षस चौवन वर्ष की उम्र के बाद पूरा आदमी हो गया है। तेरे जनादंन मास्टर का उम्र अभी तिरपन वर्ष, प्यारह महीना, छत्रोस दिन है।”

शिवु ने अब माहम घटोरकर अपनी हथेली की ओर देखा—भीगी मिसरी के दाने-भा परपर अभी-अभी उगे चाँद के प्रकाश में क्लिप्तमिला रहा है।

परपर को जेब के हुवाले कर शिवु पर की तरफ मुड़ा। पीछे से फटिक दा ने कहा, “तेरे हाथ में चोइया की गंध आ रही है। तर्ह

से धो लेना। और बेयकूफ़ जैसा बना रहना करना तू पकड़ में आ जाएगा।”



दूसरे दिन गणित के पीछेंड में कक्षा के अन्दर जाने के ठीक पहले जनार्दन बाबू को छीस आर्ड, उसके बाद धोमट में ठोकर लगने के कारण उनके जूते का सोन फट गया। उस वक़्त शिशु का बायाँ हाथ उसकी पैंट के अन्दर था।

बनाम खत्म होने पर शिशु को बहुत दिनों के बाद दम में दम अक प्राप्त हुए।

## टेरोडैकटिल का अंडा

बदन बाबू अब ऑफिस के बाद कर्जंन पार्क नहीं आते ।

पहले इससे अच्छा था । सुरेन्द्र बनर्जी की प्रतिमा के पास एकाध घंटे तक चुपचाप बठकर वे आराम करते थे और जब ट्राम की भीड़ थोड़ी कम हो जाती थी, शाम होते न होते अपने शिव ठाकुर लेन के मकान में लौट आते थे ।

अब चूंकि ट्राम की लाइन अन्दर तक चली आई है, इसलिए पार्क में बैठने पर पहले जैसा आनन्द नहीं मिलता है । मगर इस भीड़ में, पत्नीने से लयपय, लटकते हुए घर भी कैसे वापस जाए ?

केवल यही नहीं, दिन भर में कम से कम एक घंटे तक चुपचाप बठकर कलकत्ते के खुले हुए सौंदर्य का अगर उपभोग न किया जाए तो बदन बाबू को अपना जीवन बेमानी लगने लगता है । किरानी होने पर भी वे कल्पनाशील व्यक्ति हैं । इस कर्जंन पार्क में ही बैठे बैठे उन्होंने मन ही मन अनेक कहानियां बुनी हैं । मगर लिख नहीं पाए हैं । समय ही कहाँ है ? लिखने से हो सकता है ख्याति प्राप्त होती । ऐसा उनके हृदय में विश्वास है ।

इतना जरूर है कि उनकी सारी कहानियां मैदान में ही समाप्त नहीं हो गई हैं ।

उनका पंगु पुत्र बिल्डू अब बड़ा हो चुका है । वह सात बरस का है । बिछावन पर से उठकर खड़ा नहीं हो पाता है । फलस्वरूप वह अपना जमाया से ज्यादा समय मां या बाबू जी से कहानी सुनकर बिताता है । जानी-पतानी कहानियां, छपी कहानियां, भर्तों की कहानियां, लघु कथा इत्यादि, हसी-मजाक की कहानियां, देश-विदेश की परियों की कहानियां शीघ्र बरसों के दरमियान सुन चुका है । कम से कम एक हजार कहानियां । इन कहानियों में बदन बाबू हर रात उसे एक नई कहानी सुनाते हैं । इन कहानियों में उन्होंने कर्जंन पार्क में ही बठकर गढ़ा है ।

लेकिन निश्चय एक महीने में इस नियम में बहुत बार-बार बदलाव आ चुका है ! जिन कहानियों को उन्होंने सुनाया है, वे उतना ही अच्छे हैं, उतना ही यह बात बिल्डू के चेहरे को देखते ही समझ में आ गई है ।

अगम्य नहीं है। एक तो घोड़ी अफिम में काम का दधार रहना है, उस पर विश्राम करने की जगह के साथ साथ चित्त का सुप्रसन्न भी शाय में निराल गया है।

एक जिन पाठ छांटने के बाद वे कई दिनों तक सान्नीपिक के किनारे जाकर बैठे। यहाँ उन्हे प्रच्छन्न न लगा। टेलीफोन के उम विमान देखाकर भवन ने आकाश के बहुत-बहुत अंग को अपने में मनेटकर मध-बुद्ध बरपाव कर दिया है।

उमने बाद सान्नीपिक के मैदान में भी द्राम की सादन आ गई और बदन बाबू को भी आगम के लिए दूगने स्थान की तनाज करनी पड़ी।



आज वे मगा के किनारे आए हैं।

आउट गामपाट के दक्षिण में रेन्ने सादन पर डरर ताने में घोडा घाने के बाद ही यह बेंच मिलनी है। तोप का किना सामने ही दीग पटना है। गाटे की मलाग के गिरे पर अब भी बाल है। नीला के गिरे पर मानो आनन्दम हो।

बदन बाबू को स्कूल की बालें बाद हो आईं. एक बजते ही छडाम में तोप की आवाज होनी थी। उमी बरा टिकिन की छुड़ी होनी थी और हेडमास्टर हरिनाथ बाबू अपनी जेबघड़ी का बरा मिलाते थे।

इग स्थान को निर्जन नहीं कहा जा सकता। सामने नदी में नावों की फतारें हैं और उन पर बंटे मल्लाह बातचीत करते रहते हैं। दूर धूमर रग का एक जापानी जहाज लगर डाले खटा है। और भी दूर, तिरिपुर की तरफ, शाम के आकाश को छूना मस्कूल और परती है।

बाह, रामी अच्छी जगह है।

बेंच पर बैठना चाहिए।

वह रहा मुकनारा, स्टीमर के धुए के अन्तराल से धुलना-धुधला जैसा दीस रहा है।

बदन बाबू को लगा, इतना बडा आकाश उन्होंने बहुत दिनों में नहीं देखा है। अहा, किनना विशाल है, कितना विराट् ! ऐमा न हो तो कल्पना का पक्षी डैनों को फँसाए कमे उड़ें ?

बदन बाबू ने कँवस् के जूतो को उतारा और पाव मोड़कर बाबू साह्य की तरफ बैठ गए !

आज वे महा बैठे-बैठे एक नहीं, अनेक कहानियों का प्लॉट गढ़ेंगे।

विल्डु का हसता हुआ चेहरा जैसे उनकी आँखों के सामने तैरने लगा।

नमस्कार !

लो, यहां भी बाधा ही है।

बदन बाबू ने मुड़कर देखा। एक दुबला-पतला व्यक्ति। उम्र करीब पचास वर्ष। पहनावे के रूप में कट्यई रंग के कोट-पैट। कंधे पर टाट की झोली। शाम की घुंघली रोशनी में चेहरा साफ-साफ नहीं दीख पड़ता है, मगर आंखों की दृष्टि अस्वाभाविक तौर पर तीक्ष्ण है।

और वह क्या है ? स्टैथेस्कोप है क्या है ?

उस आदमी की छाती के पास लटकते एक यंत्र से खर की दो नलियां निकलकर उसके कानों के अन्दर चली गई हैं।

अजनबी ने मीठी हसी हंसते हुए कहा, "डिस्टर्ब तो नहीं कर रहा हूं ? अन्यथा न सोचें। आपको यहां इसके पहले कभी नहीं देखा था, इसीलिए..."

बदन बाबू को ऊब महसूस हुई। अरे बाबा, मैं एकान्त में ही अच्छी हालत में था। जोर-जबरन जान-पहचान क्यों कर रहे हो ? सब बेकार हो गया। बेचारे विल्टु को वे क्या कंफियत देंगे ?

वे बोले, "इसके पहले कभी आया नहीं था, इसीलिए मुझ पर नजर नहीं पड़ी थी। इतने बड़े शहर में देखे हुए लोगों के धनिस्वत अनदेखों की संख्या क्यादा होती है। है न यह बात ?"

अजनबी ने बदन बाबू के व्यंग्य को अनसुना करके कहा, "मैं पिछले चार बरसों से यहां लगातार आ रहा हूँ।"

"ओह !"

"ठीक यहीं। एक ही स्थान पर। इसी बेंच पर बठा करता हूँ। मेरे प्रयोग की जगह यही है।"

"प्रयोग ? गंगा के किनारे छुली, जगह में किस तरह का प्रयोग करता है ? यह आदमी अधपगला है क्या ?

या कुछ और ही हो सकता है ? गुडा बर्गरह ? कलकत्ता शहर के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता।

सर्वनाश ! बदन बाबू को आज ही तनखा मिली है। रुमाल की गांठ में एक मो रुपये के दो फडफड़ाते नोट बंधे हैं। इसके अलावा पॉकेट, मे रमे मनीबैंग में नोट व रेजगारी मिलाकर पचपन रुपये बरतीग नए पैसे हैं।

बदन बाबू उठकर खड़े हो गए। सावधान हो जाने पर फिर

खतरे का डर नहीं रहना ।

“यह क्या साहब ? चल दिए ? गुस्से में आ गए ?”

“नहीं-नहीं, बात गंभीर नहीं है।”

“फिर ! अभी-अभी आप बैठे ही थे। इमी बीच उठकर खड़े हो गए ?”

वात तो सही है। वे इस तरह का बचपना क्यों कर रहे हैं ? डर की कौन-सी बात है ? तीस मज की दूरी पर सामने की नावों में कम से कम एकाध सौ आदमी है।

फिर भी बदन बाबू ने कहा, “चलू, देर हो गई है।”

“देर ? अभी तो सिर्फ साढ़े पाच बजे हैं।”

“बहुत दूर जाना है।”

“कितनी दूर ?”

“बागवतजार।”

“अरे राम-राम-राम ! अगर आप श्री रामपुर या चुचड़ा या कम से कम दक्षिणेश्वर कहते तो कोई बात थी।”

“वह भी क्या कम दूर है ? ट्राम से जाने पर पूरा चालीस मिनट लगता है। उस पर दस मिनट पाव पैदल चलना अलग में।”

“आप ठीक ही कह रहे हैं।”

अजनबी एकाएक गम्भीर हो गया। उसके बाद बुदबुदाया, “चालीस जोड़ दस बराबर पचास।” मैं मिनट और घंटों का हिसाब लगाने का अभ्यस्त नहीं हूँ। हमलोग...बैठिए न ! जरा बैठ जाइए।”

बदन बाबू बैठ गए।

अजनबी की आवाज और दृष्टि में कुछ ऐसी चीज थी जिसके कारण बदन बाबू उसके अनुरोध को ठुकरा नहीं सके। मन ही मन कहा शायद इसीको हिप्टोनियम कहते हैं।

अजनबी ने कहा, “मैं जिसको-तिमको अपने पास बैठने को नहीं कहता। आप पर नजर पड़ते ही मुझे लगा, आप भाबुक व्यक्ति हैं। आप केवल रुपया, आना, पाई लेकर ही इस दुनिया में जिन्दा रहने वाले नहीं हैं, जैसा कि निन्यानवे पॉपुलर नाइन रेकरिंग परसेन्ट लोग हुआ करते हैं। कहिए, ठीक कर रहा हूँ न ?”

बदन बाबू ने सकपकाते हुए कहा, “जी, मतलब है कि...”

“आप विनम्र भी हैं। यह भी अच्छी बात है ! बड़ाई करना मुझे पसन्द नहीं। अगर मैं बड़ाई करता तो कोई मुझसे आगे नहीं बढ़ पाता।”

अजनबी चुप हो गया। उसके बाद अपने कानों से नलियां हटाकर उम यंत्र को बेंच पर रखा, उसके दाद बोला, "डरने की कोई बात नहीं है। अंधेरे में हाथ से स्विच गिर पड़े तो भयंकर कांड हो जाएगा।"

बदन बाबू के होंठों पर एक प्रश्न भंडरा रहा था, अब वह बाहर निकल आया!

"आपका यह यंत्र स्टेयेस्कोप है या और कुछ दूसरा ही?"

उस आदमी ने इन सवाल पर कोई ध्यान ही न दिया। बड़ा ही असह्य मालूम होता है! उत्तर देने के बदले एक अवान्तर प्रश्न पूछ बैठा।

"आप लिखा-पढ़ा करते हैं?"

"आपका लिखने का मतलब कहानी से है?"

"चाहे कहानी हो या निबन्ध या कुछ भी हो। बात यह है कि मैं यह सब नहीं जानता। मगर मेरे पास जो अनुभव हैं, मैंने जो खोजें की हैं, उन्हें भविष्य के लिए लिखा जाता तो अच्छा रहता।"

अनुभव? खोज? यह आदमी क्या बक रहा है?

"आपने कितने प्रकार के संलानियों को देखा है?"

सचमुच इस आदमी के सवालों का कोई ओर-छोर नहीं है। एक ही संलानी को देखने का सौभाग्य कितनों को प्राप्त होता है?

बदन बाबू ने कहा, "संलानी कई तरह के होते हैं, यह मुझे मालूम नहीं है।"

"यह क्या! तीन तरह के बारे में कोई भी बता सकता है: जलचर, धलचर और नमचर। पहली कोटि में वास्को डि० गामा, कॅप्टन स्कॉट, बोल्डविंस आते हैं। स्पल में ह्वेनसांग, मांगो पार्क, लिबिगस्टोन से लेकर उमेता मट्टाचार्य तक है। और आकाश में भ्रमण करने वालों में प्रोफेसर पिबाई, जो बेलून से पचास हजार फुट ऊंचाई तक गया था और इसके अलावा गोपरिन। इतना जरूर है कि ये सब मामूली बातें हैं। जिस तरह के संलानी की बात बह रहा हूं, वह न तो जल या धल या नभ में विचरण करता है।

"किर?"

"शान में।"

"यानी?"

"कास के बीप विचरण करना। मैं मतीत में विचरण कर सकता हूं, भविष्य में कर सकता हूं। स्वच्छा से मृत और भविष्य में विचरण कर सकता हूं। चूकि वर्तमान में हूं ही, अतः उसके लिए मायापञ्ची नहीं

खतरे का डर नहीं रहता ।

“यह क्या माहब ? चल दिए ? गुस्से में आ गए ?”

“नहीं-नहीं, बात गंभीर नहीं है ।”

“फिर । अभी-अभी आप बैठे ही थे । इसी बीच उठकर खड़े हो गए ?”

वात तो मही है । वे इस तरह का वचपना क्यों कर रहे हैं ? डर की कौन-सी बात है ? तीस गज की दूरी पर सामने की नावों में कम से कम एकाध सौ आदमी है ।

फिर भी बदन बाबू ने कहा, “चल, देर हो गई है ।”

“देर ? अभी तो सिर्फ साढ़े पांच बजे हैं ।”

“बहुत दूर जाना है ।”

“कितनी दूर ?”

“बागवाजार ।”

“अरे राम-राम-राम ! अगर आप श्री रामपुर या चुचडा या कम से कम दक्षिणेश्वर कहते तो कोई बात थी ।”

“वह भी क्या कम दूर है ? ट्राम से जाने पर पूरा चालीस मिनट लगता है । उस पर दस मिनट पांच पैदल चलना अलग में ।”

“आप ठीक ही कह रहे हैं ।”

अजनबी एकाएक गम्भीर हो गया । उसके बाद बुदबुदाया, “चालीस जोड़ दस बराबर पचास । मैं मिनट और घंटों का हिसाब लगाने का अभ्यस्त नहीं हूँ । हमलोग... बैठिए न ! जरा बैठ जाइए ।”

बदन बाबू बैठ गए ।

अजनबी की आवाज और दृष्टि में कुछ ऐसी चीज थी जिसके कारण बदन बाबू उसके अनुरोध को ठुकरा नहीं सके । मन ही मन कहा शायद इसीको हिप्टोनिज्म कहते हैं ।

अजनबी ने कहा, “मैं जिसको-तिमको अपने पास बैठने को नहीं कहता । आप पर नजर पड़ते ही भुंभे लगा, आप भावुक व्यक्ति हैं । आप केवल रपया, आना, पाई लेकर ही इस दुनिया में ज़िन्दा रहने वाले नहीं हैं, जैसा कि निन्यानवे पाँचन्ट नाइन रेकारिंग परसेन्ट लोग हुआ करते हैं । कहिए, ठीक कर रहा हूँ न ?”

बदन बाबू ने सकपकाते हुए कहा, “जी, मतलब है कि...”

“आप विनम्र भी हैं । यह भी अच्छी बात है । बड़ाई करना मुझे पसन्द नहीं । अगर मैं बड़ाई करता तो कोई मुझमें आगे नहीं बढ़ पाता ।”



अजनबी चुप हो गया। उसके बाद अपने बापों के मन्त्रित्व में उस यत्र की बेंच पर रखा, उसके बाद बोला, "दुन्दुब को बाँटें वही है। अंधेरे में हाथ में स्विच फिर पड़े तो नन्दुब काँटें को काँटें।"

बदन बाबू के हाँठों पर एक मन्त्र लिखा रहा था, अतः वह बहुर निश्चय आया !

"आपका यह मंत्र लोपेल्कोव है या और कुछ दुन्दुब का है ?"

उस आदमी ने इस सवाल पर कोई जवाब नहीं दिया। वह तो असभ्य मालूम होता है ! अगर देने के बजाए एक अज्ञान्य मन्त्र दुन्दुब बैठा।

"आप निश्चय-मन्त्र करते हैं ?"

"आपका निश्चय का मन्त्र कौन कहती है ?"

"बाहे कहानी ही का निश्चय का कुछ भी है। अगर वह है तो सब नहीं जानता। अगर नरे यह जो दुन्दुब है, तो जो बाँटें को है, उन्हें भविष्य के लिए लिखा जाता तो अच्छा मन्त्र है।"

अनुभव ? शक्ति ? यह आदमी क्या कह रहा है ?

"आपने कितने प्रकार के मन्त्रों को देखा है ?"

सचमुच इस आदमी के सवालों का कोई जवाब नहीं है। वह ही संलानी का देखने का सौभाग्य किन्तों को प्राप्त होता है ?

बदन बाबू ने कहा, "संलानी कई तरह के होते हैं, वह तुम्हें मन्त्र नहीं है।"

"यह क्या ! तीन तरह के बारे में बाँटें की बात नन्दुब है : उन्कर, पलचर और नमचर। पहली कोटि में बाँटें ही, उन्कर, पलचर, कोलम्बस आते हैं। स्थल में ह्वे नमांग, मांसे नन्दु, लिपि-नन्दुब के लिये उमेरा भट्टाचार्य तक हैं। और आकाश में उन्कर उन्कर कालों में उन्कर पिकाई, जो बैलून में पचास हजार फुट ऊँचाई तक उन्कर का और इसके अलावा गोपरित। इतना जरूर है कि ये सब मामूली बातें हैं। जिस तरह के संलानी की बात कह रहा हूँ, वह न तो जन या जन या नम में विचरण करता है।"

"फिर ?"

"कान में।"

"यानी ?"

"काल के बीच विचरण करना। मैं अतीत में विचरण कर सकता हूँ, भविष्य में कर सकता हूँ। स्वेच्छा से भूत और भविष्य में विचरण कर सकता हूँ। चूँकि वर्तमान में हूँ ही, अतः उसके लिए मायापत्नी

करता।”

अब बदन बाबू के सामने यान स्पष्ट हो गई। वे बोले, “आप एच० जी० वेल्स के बारे में कह रहे हैं? टाइम मशीन? वही न—कि माइकिल की तरह की एक चीज को दबाकर हैडिल खींचते ही आदमी अतीत काल में चला जाता है और दूसरे को खींचते ही भविष्य में विचरण करने लगता है। उसी कहानी पर विलायत में एक सिनेमा बनाया गया था।”

वह आदमी उपेक्षा की हमी हमता हुआ बोला, “वह तो कहानी है। मैं सच्ची घटना के बारे में कह रहा हूँ। मेरे साथ ही यह घटना घटी है। यह मेरा ही अनुभव है। यह मेरी मशीन की बात है। किसी साहब लेखक की मनगढ़त हवाई कहानी नहीं है।”

कहीं स्टीमर का भोपू बज उठा।

अचकचाकर बदन बाबू ने अपने हाथों को चादर के अन्दर समेट लिया और सिंकुड़कर बैठ गये। कुछ देर बाद नावों के प्रकाश के अतिरिक्त कुछ भी न दीसगा।

बदन बाबू ने गहराते अंधेरे में अजनबी की ओर एक घार फिर से निगाह डाली। उसकी आँखों की पुतलियों में सध्या के आकाश की अंतिम लाली तैर रही थी।

अजनबी ने अपने चेहरे को आममान की ओर किया। वह कुछ देर तक खामोश रहा, उसके बाद बोला, “मुझे हसने की इच्छा होती है। तीन सौ वर्ष पहले यहाँ, ठीक इमी बेंच के पास की जगह पर एक मगर और उसके सिर पर बैठा हुआ एक बगुला घूप सेंक रहे थे। वह जो पुआल से लदी नाव है, वही से एक हीलैंड के पाल तने जहाज के डेक पर खड़े होकर एक नाविक ने मूहभरनी बंदूक से उगे मारा था। एक ही गोली में मगर ठंडा हो गया था। बगुले ने ज्योंही हड़बडाकर उड़ना चाहा, उसकी एक पाख खिसककर मेरे पैरों के नीचे गिर पड़ी। यह वही पाख है।”

अजनबी ने अपनी झोली में एक कककक मफेद पाल निकालकर उसे बदन बाबू के हाथ में धमा दिया।

“ये लाल-लाल दाग किस चीज के हैं?”

बदन बाबू की आवाज में धरधराहट थी।

अजनबी बोला, “मगर का थोड़ा-सा रक्त छिटककर बगुले की देह में लग गया था।”

बदन बाबू ने पाल लौटा दी।

अजनबी की आँखों की रोशनी निमटती जा रही है। गंगा की धारा में जलकुम्भी बहती हुई जा रही है। अब आँखों में दीख नहीं रहा है। पानी,

मिट्टी, आकाश—सब कुछ मँटमँले रंग में बदलते जा रहे हैं।

“जानते हैं, वह क्या है ?”

बदन बाबू ने हाथ में लेकर देखा। वह लोहे का एक छोटा-सा तिकोना बर्छा है, जिसका ऊपरी हिस्सा सुईनुमा है।

अजनबी ने कहा, “यह दो हजार वर्ष पुराना है। नदी के बीच में,— उस बोया के पास से होता हुआ एक मकरमुखी जहाज कसीदे-कड़े पाल को ताने समुद्र की ओर जा रहा है। सभवतः वह वाणिज्य-पोत है। बलिद्वीप या कहीं व्यापार करने के लिए जा रहा है। पछिहा हवा में बत्तीसों पतवारों की छपछप आवाज में यहां से सुन रहा हूँ।”

“आप सुन रहे हैं ?”

“हां। मैं नहीं तो फिर कौन ? यहा—यहां यह बेंच है—मैं एक बर-गद के पास छिपा हुआ हूँ।”

“छिपे हुए क्यों हैं ?”

“लाचारी मे। यह इतनी विपत्तियों से घिरी जगह है, यह बात मालूम नहीं थी। इतिहास के पन्नों पर ये बातें लिखी हुई नहीं हैं।”

“आप घोर बगैरह के बारे में कह रहे हैं ?”

“शेरों की मांद है। आदमी है। मेरी कमर के बराबर चपटी नाक वाला, स्याह काला वनमानुष। कानों में बाली, नाक में छल्ला, देह में गोदना गुदा हुआ। हाथों में तीर-घनुष। तीर के छोर पर जहरीला फलक।”

“क्या कह रहे हैं आप ?”

“ठीक ही कह रहा हूँ। एक भी शब्द असत्य नहीं है।”

“आपने देखा ?”

“सुनिए तो मही। वैशाख का महीना है। आधी चल रही है। इस तरह की आधी इसके पहले नहीं आई थी। मकरमुखी जहाज देखते-देखते ही पानी में डूब गया।”

“उसके बाद ?”

“उससे निकलकर एक आदमी टूटे नख्ते पर चढ़ना है और हलक जल-जन्तुओं, मगरों में बचता हुआ परती जमीन पर आता है... बाप रे ! ...”

“क्या हुआ ?”

“उस वनमानुष ने उसकी क्या हातत कर दी, उसे आप जब तक अपनी आँखों में नहीं देख लेते हैं... इतना जरूर है कि अन्न-भक्त तक मैं भी नहीं देख सका। एक तीर बरगद के तने में आकर बिध गया था। उसी से मैंने स्विक दवा दिया और वर्तमान में लौट आया।”

अजनबी दम लेने के लिए चुप हो गया।

गिरजा की घड़ी से डिग-डाग आवाज आ रही है। छह बज चुका।  
रोशनी एकाएक तेज बयो हो गई ?

बदन बाबू की आँखें पूरव की ओर गईं। ग्रेण्ड हॉटन की छत के पीछे से त्रयोदशी का चांद उगता हुआ दीख रहा है।

अजनबी ने कहा, "पहले जैसा था, अब भी वैसा ही है। देश में ऐसे बहुतेरे व्यक्ति हैं जिनके नाम-धाम का पता किसी को नहीं है, किन्तु उनकी विद्या-बुद्धि परिचय के किसी वैज्ञानिक से निलमात्र कम नहीं है। इन लोगों को आमतौर से कागज-पेंसिल, किताब, प्रयोगशाला वगैरह की कोई ज़रूरत महसूस नहीं होती है। ये लोग एकांत में चुपचाप बैठकर मोचते रहते हैं और अपने दिमाग में बड़े-बड़े फ़रमूने को हलकर समस्या का समाधान करते हैं।"

अजनबी के चुप होते ही बदन बाबू बोले, "आप क्या उन्हीं लोगों में से हैं ?"

"नहीं", अजनबी ने कहा, "मगर भाग्यवश एक व्यक्ति से मेरी भेंट हुई थी। अवश्य ही भेंट यहा नहीं हुई थी। इस अचल में नहीं। जबानी के दिनों में पहाड़ों पर मैंने काफी सैर किया है। उन्हीं पहाड़ों में एक से भेंट हो गई थी। वे असाधारण व्यक्ति थे। नाम था गणितानन्द। इतना जरूर था कि वे लिखकर ही गणित हल करते थे। वे जहा रहते थे, उसके आसपास के तीस मील के दरमियान फीले पहाड़ों पर जितने बड़े-बड़े खड थे, उनकी जड़ से चोटी तक गणित के अंकों से भरे हुए थे। खडिया से लिखा हुआ था। अपने गुरु से ही गणितानन्दजी ने अतीत और भविष्य में विचरण करने का रहस्य सीखा था। गणितानन्द से ही मुझे इस बात की जानकारी प्राप्त हुई है कि हिमालय में एवरेस्ट से भी पाच हजार फुट ऊँची एक दूमरी चोटी थी। आज से सैतालीस हजार वर्ष पहले एक प्रलयकारी भूकम्प हुआ था और उस भूकम्प में उस चोटी का आधा हिस्सा धरती के अन्दर समा गया। उसी भूकम्प में उत्तरी हिमालय के एक पहाड़ में दरार पड़ गई और उससे एक झरना निकल पड़ा। उसी झरने की सृष्टि है यह नदी जो हमारे सामने प्रवाहित हो रही है।"

आश्चर्य की बात है ! बहुत ही आश्चर्य की बात।

घोती के छोर में माये के पमीने को पोछते हुए बदन बाबू बोले, "यह यन्त्र आपको उन्हीं में मिला था ?"

अजनबी ने कहा, "हां। यानी मिला था, यह नहीं कहा जा सकता। उन्हीन इसके उत्पादनो के बारे में बता दिया था। मैंने उन्हीं मसालो से

खुद ही इस यन्त्र को बनाया है। ये जो आप नलियां देख रहे हैं, वे रबर की नहीं हैं। यह एक किस्म के पहाड़ी वृक्ष की डाल है। इस यन्त्र की एक भी वस्तु के लिए मुझे किसी दुकान या कारीगर के पास जाना नहीं पड़ा था। इसका सब कुछ प्राकृतिक उत्पादनों से तैयार किया गया है। डायल पर मैंने खुद चिह्न लगाकर अंक बिठाए हैं। तब हां, चूंकि मेरे हाथों से ही तैयार हुआ है, इसलिए बीच-बीच में बिगड़ जाता है। भविष्य का स्वप्न कई दिनों से काम ही नहीं कर रहा है।”

“आप भविष्य में पहुंच चुके हैं?”

“एक ही वार। तब हां, ज्यादा दूर तक नहीं जा सका। तीसवीं सदी के बीच तक पहुंच सका था।”

“कौंसा दीख पड़ा?”

“देखूंगा भला क्या? तब वहा विशाल सड़क है और मैं ही एकमात्र मनुष्य हूं जो चहलकदमी कर रहा है। एक अजीब गाड़ी के नीचे आते-आते मैं बच गया। इसके बाद मैं नहीं गया।”

“और अतीत की कितनी दूरी आपने तय की है?”

“वह भी एक गड़बड़ ही है। मेरे इस यंत्र से सृष्टि के आरम्भ में नहीं जाया जा सकता है।”

“यह बात है?”

“बहुत-बहुत कोशिशों करने के बाद मैं सबसे दूर जहां तक जा सका हूं, उस समय सरिसृप का आविर्भाव हो चुका था।”

बदन बाबू का गला सूखने लगा। बोले, “किस प्रकार का सरिसृप? सांप...?”

“अरे, नहीं-नहीं। सांप तो बच्चा है।”

“फिर?”

“यही जैसे ब्रटोरस, टिरानोसरस, डाइनोसरस वगैरह।”

“इसका मतलब यह हुआ कि आप उस देश में भी पहुंच चुके हैं।”

“यही तो गलती है। उस देश में क्यों? आपकी धारणा क्या यही है कि ये सब चीजें हमारे देश में नहीं थीं?”

“ये सब चीजें थीं?”

“आपके कहने का मतलब? यही थी। इस बेंच की बगल में ही थी।”

बदन बाबू की रीढ़ की हड्डी में एक

अजनबी ने कहा, “तब गंगा नाम नहीं था।

सावड़ परधर के टीले थे और था लता-गुल्म,

अजनबी दम लेने के लिए चुप हो गया।

गिरजा की घड़ी से डिग-डाग आवाज आ रही है। छह बज चुका। रोशनी एकाएक तेज क्यों हो गई?

बदन बाबू की आँखें पूरब की ओर गईं। ग्रेण्ड होटल की छत के पीछे से त्रयोदशी का चांद उगता हुआ दीख रहा है।

अजनबी ने कहा, “पहले जैसा था, अब भी वैसा ही है। देश में ऐसे बहुतेरे व्यक्ति हैं जिनके नाम-धाम का पता किसी को नहीं है, किन्तु उनकी विद्या-बुद्धि पश्चिम के किसी वैज्ञानिक से तितमात्र कम नहीं है। इन लोगों को आमतौर से कागज-पेंसिल, किताब, प्रयोगशाला बगैरह की कोई जरूरत महसूस नहीं होती है। ये लोग एकांत में चुपचाप बैठकर सोचते रहते हैं और अपने दिमाग से बड़े-बड़े फरमूले को हलकर समस्या का समाधान करते हैं।”

अजनबी के चुप होते ही बदन बाबू बोले, “आप क्या उन्हीं लोगों में से हैं?”

“नहीं”, अजनबी ने कहा, “भगर भाग्यवश एक व्यक्ति से मेरी भेंट हुई थी। अवश्य ही भेंट यहाँ नहीं हुई थी। इस अंचल में नहीं। जवानी के दिनों में पहाड़ों पर मैंने काफी सैर किया है। उन्हीं पहाड़ों में एक से भेंट हो गई थी। वे असाधारण व्यक्ति थे। नाम था गणितानन्द। इतना जरूर था कि वे लिखकर ही गणित हल करते थे। वे जहाँ रहते थे, उसके आसपास के तीस मील के दरमियान फँसे पहाड़ों पर जितने बड़े-बड़े खंड थे, उनकी जड़ से चोटी तक गणित के अकों से भरे हुए थे। खडिया से लिखा हुआ था। अपने गुरु से ही गणितानन्दजी ने अतीत और भविष्य में विचरण करने का रहस्य सीखा था। गणितानन्द से ही मुझे इस बात की जानकारी प्राप्त हुई है कि हिमालय में एवरेस्ट से भी पाच हजार फुट ऊँची एक दूसरी चोटी थी। आज से सैतालीस हजार वर्ष पहले एक प्रलयकारी भूकम्प हुआ था और उस भूकम्प में उस चोटी का आधा हिस्सा धरती के अन्दर समा गया। उसी भूकम्प में उत्तरी हिमालय के एक पहाड़ में दरार पड़ गई और उसमें एक झरना निकल पड़ा। उसी झरने की सृष्टि है यह नदी जो हमारे सामने प्रवाहित हो रही है।”

आश्चर्य की बात है! बहुत ही आश्चर्य की बात।

घोटी के छोर में माथे के पसीने को पोछते हुए बदन बाबू बोले, “यह यन्त्र आपको उन्हीं से मिला था?”

अजनबी ने कहा, “हाँ। यानी मिला था, यह नहीं कहा जा सकता। उन्हींने इसके उत्पादन के बारे में बता दिया था। मैंने उन्हीं मसालों से

नाया है। ये जो आप नलियां देख रहे हैं, वे रबर की न के पहाड़ी वृक्ष की डाल है। इस यंत्र की एक भी गी दुकान मा कारीगर के पास जाना नहीं पडा था। तक उपादनो से तैयार किया गया है। डायल पर र अक बिठाए हैं। तब हां, चूकि मेरे हाथों से ही बीच-बीच मे बिगड़ जाता है। भविष्य का स्विच ही कर रहा है।”

पहुंच चुके हैं?”

व हा, ज्यादा दूर तक नही जा सका। तीसवी सदी था।”

“? तब वहा विशाल सडक है ओर मैं ही एकमात्र कर रहा है। एक अजीब गाड़ी के नीचे आते-बाद मैं नही गया।”

कतनी दूरी आपने तय की है?”

डे ही है। मेरे इस यंत्र से सृष्टि के आरम्भ में नहीं

गें करने के बाद मैं सबसे दूर जहां तक जा सका हूं, गविर्भाव हो चुका था।”

सूखने लगा। बोले, “किस प्रकार का सरिसृप ?

“प तो बच्चा है।”

टिरानोसरस, डाइनोसरस वगैरह।”

हुआ कि आप उस देश में भी पहुंच चुके है।”

उस देश मे क्यों ? आपकी धारणा क्या यही है मे नही थी ?”

मतलब ? यही थी। इस बेंच की बगल में ही

गि हड़डी में एक सिरहन दौड गई।

व गंगा नाम नही था। इन स्थानों मे तब ऊबड़-ओर था लता-गुल्म, पेड़-पौधो का जंगल। वह

दृश्य में भूतूगा नहीं। जहा जेटी है, वहां सेंवार ने भरा हुआ एक खबरा था। मैं उसे अपनी आंखों के सामने देग रहा हूँ। एक अगच्छाया घप्रक कर जल उठी और एक मिनट तक हिल-डुल कर फिर बुझ गई। उमी रोगनी मे दो गाजर जैसी आखें दीस पड़ी। चीनी डूंगन<sup>1</sup> की तगवीर आपने देखी है न? वे भी ठीक वैसी ही थी। विनाय मे मैं तगवीर देग चुना था। ममभगया वह उसी तरह का स्टेगोमरग है। पता नहीं, किम चीज का पता घवाता हुआ वह जलमय भूमि मे छग-छग शब्द करता हुआ आ रहा है। जानता हूँ, यह आदमी वो नहीं साएगा क्योंकि यह उषिदजीवी हुआ करता है। फिर डर से मैं धूक नहीं निगल पा रहा हूँ। वर्तमान मे लौटने के लिए ज्योही स्विच दवाता हूँ कि तभी अपने मिर के ऊपर फड फड शब्द सुनकर मे चौंकर देगता हूँ। एक टेरोडैरुटिल है। यह न तो चिडिया है, न जानवर और न ही घमगादट। उगने पानी मे गोल लगाकर उम जानवर पर आशमण किया। इग आफोश का कारण तव ममभ मे आघा जब मेरी दृष्टि निकट ही स्थित पन्वर के टीने पर पडी। उम पत्थर मे एक बडा गूरास था और उस गूरास के जन्दर घा एक सफेद चमचमाना हुआ गोन जडा। टेरोडैरुटिल का अण। नजर पटते ही लोभ न गभात सका, हाताकि डर लग रहा था। उधर तगई चल रही थी और इधर मैं अडे को अपनी बगल मे दवाकर... हो हो हो।' मगर बदन बाबू को हमी नहीं आई। यह मय क्या कहानी की दुनिया मे परे भी घटित होता है?

“आपको परीक्षा करने के लिए मैं यह यत्र देता, मगर...”

बदन बाबू के मिर की नमें फडरने लगी। धूक निगलकर बोले, “मगर क्या?”

“फल मिलने की बहुत ही कम सम्भावना है।”

“क्यों?”

“फिर भी आप एक बार कोशिश करके देख सकते हैं। लाभ चाहे न हो पर हानि होने की कोई सम्भावना नहीं है।”

बदन बाबू ने अपनी गरदन आगे बढ़ा दी। जय मा जगत्तारिणी। निराश मत करना मा!

अजनबी ने नलियों के मुह को बदन बाबू के कानो मे ठूस दिया और चट से उनके दाहिने हाथ की नाडी पकड ती।

“नाडी टटोतनी है।”

बदन बाबू ने बलि पर चटने वाले बरूरे की तरह धीमी आवाज मे



पूछा, "अतीत या भविष्य ?"

अजनबी ने कहा, "अतीत। सिक्स थाउजैंड बी० सी०। अपनी आंखें दबाकर बंद कर लें।"

बदन बाबू ने धैर्यहीन उत्कंठा के साथ एक क्षण तक अपनी आंखें मूंद कर रखी, फिर कहा, "कहां, कुछ भी नहीं हो रहा है।"

अजनबी ने यंत्र को निकाल लिया।

"होने की संभावना करोड़ में एक की होती है।"

"क्यों ?"

"मेरे और आपके सिर के बालों की संख्या अगर एक ही होती तो आपके लिए भी यह यंत्र काम करता।"

बदन बाबू फटे बैलून की तरह चिपके हो गए। हाय-हाय ! ऐसा भौका हाय से निकल गया।

अजनबी ने अपनी भोली के अन्दर हाय डाला।

चादनी अब चारों ओर स्पष्ट दीख रही है।

"एक बार हाय में लेकर देख सकता हूँ ?" बदन बाबू यह कहने का सोभ संभाल नहीं सके।

अजनबी ने उस सफेद चमवमाती वस्तु को उनकी ओर बढ़ा दिया। सासा वजनदार है। साथ ही साथ बड़ा ही चिकना।

"दीजिए। अब चलूं। रात हो चुकी है।"

बदन बाबू ने अंडे को वापस कर दिया। न जाने और कितने प्रकार के अनुभव इस आदमी ने बटोरे हैं। पूछा, "कल आप यहां आइएगा न ?"

"कोशिश करूंगा। ढेरों काम है। पुस्तकों में लिखे ऐतिहासिक तथ्यों का अब भी मूल्यांकन नहीं कर पाया हूँ। कलकत्ते के निर्माण से सम्बन्धित बातों की एक बार छानबीन करनी है। हजरत चार्नक को लेकर लोग बड़ी प्यादती कर रहे हैं।... चलूं। जयगुरु।"



ट्राम पर चढ़ते ही झूठमूठ का एक बहाना बनाकर बदन बाबू को उतर जाना पड़ा। जब में हाय डालते ही उन्हें अंधेरा ही अंधेरा दीखने लगा।

मनीबैंग गायब था।

घर की ओर पांव-पंदल चलते हुए उन्होंने एक उसांस ली और मन ही मन कहने लगे, 'समझ गया। जब मैंने आंखें बंद की, उस आदमी ने नाड़ी टटोलने के लिए मेरा हाथ पकड़ा था...इस्स छिः छिः छिः ! आज

में बड़ा ही बेवकूफ बना ।'



जब वे घर पहुंचे, रात के आठ बज रहे थे ।

बाबूजी पर नजर पड़ते ही बिल्टु की आँखें चमकने लगी ।

अब बदन बाबू भी बहुत-कुछ हलकापन महसूस करने लगे थे ।

कमीज का बटन खोलते-खोलते बोले, "आज तुम्हें एक अच्छी-सी कहानी सुनाऊंगा ।"

"सचमुच ? और-और दिनों की तरह तो नहीं ?"

"नहीं रे । सचमुच ।"

"किस चीज की कहानी, बाबू जी ?"

"टेरोइकटिल के अंडे की । उसके अलावा और बहुत सारी कहानिया । एक ही दिन में यह सब कहानियां समाप्त नहीं होंगी ।"

सच कहने में हर्ज ही क्या है ? बिल्टु की खुशियों का खुराक आज एक दिन में ही उन्हें जितना मिला है उसकी कीमत क्या पचपन रुपए बत्तीस पैसे भी न होगी ?

## चमगादड़ की विभीषिका

चमगादड़ को मैं कतई बरदाश्त नहीं कर पाता। मेरे भवानीपुर के फ्लैट में शाम के वक़्त खिड़की की सलाखों की फाँक से जब चमगादड़ कमरे के अन्दर चले आते हैं तो मुझे लाचार होकर काम बन्द करना पड़ता है। खासतौर से गरमी के दिनों में जब पंखा चलता रहता है और चमगादड़ अन्दर आकर सिर के ऊपर चक्कर काटता रहता है तो मुझे लगता है, अभी इसे रॉड से धक्का लगेगा और वह फर्श पर गिरकर छटपटाने लगेगा। ऐसी स्थिति में, मैं बिलकुल हक्का-बक्का-सा हो जाता हूँ। अकसर मुझे कमरे से बाहर चला जाना पड़ता है। अपने नौकर विनोद से कहता हूँ कि वह चमगादड़ को भगाने का कोई इन्तज़ाम करे। एक बार विनोद ने मेरे बँडमिन्टन के रैकेट से एक चमगादड़ को मार डाला था। सच कहूँ, न केवल अशांति का बोध होता है, बल्कि उसके साथ आतक का एक मिला-जुला भाव रहता है। मैं चमगादड़ के चेहरे को बरदाश्त कर ही नहीं पाता हूँ। वह न तो चिड़िया है और न जानवर। उस पर इम तरह तिर नीचे कर पार्यों से वृक्ष की शाखा को कसकर पकड़े लटकना—यह सब देखकर लगता है, चमगादड़ नामक जीव का अस्तित्व न होना ही सम्भवतः अच्छा रहता।

कलकत्ते में मेरे कमरे के अन्दर चमगादड़ इतनी बार आ चुका है कि मुझे लगता है, इस जीव में मेरे प्रति एक पक्षधरता है। किन्तु इनका कुछ होने पर भी मैंने यह नहीं सोचा था कि सिउड़ी आने पर अपने वासस्थान में प्रवेश कर ज्योंही मैं शहतीर की ओर ताकूँगा, मुझे वहाँ भी एक चमगादड़ लटकता हुआ मिलेगा। यह तो बड़ी ज़्यादाती है। ज़रूरत पड़े तो उसे यहाँ से विदा नहीं कर लेता हूँ तब तक मैं इस कमरे में रह नहीं सकूँगा।

मुझे इस मकान का पता अपने पिताजी के मित्र तीनकौड़ी चाचा से चला था। कभी वे मिउड़ी में ही डॉक्टरों की सेवा करते थे। अथ रिटायर्ड होकर कलकत्ते में रह रहे हैं। यह कहने की ज़रूरत नहीं है कि सिउड़ी में उनके बहूत में जाने-पहचाने लोग हैं। इसलिए जब मुझे मातेरु दिनों के लिए सिउड़ी जाने की ज़रूरत पड़ी, तो मैं तीनकौड़ी चाचा के पास ही गया। उन्होंने मुझे के बाद कहा, "मिउड़ी जा रहे हो? क्यों? वहाँ गया

करना है ?”

मैंने उन्हें बताया कि मैं वं  
अनुसंधान कर रहा हूँ। मुझे एक

मंदिर चारों ओर फैले हैं, लेकिन  
णिक ग्रंथ नहीं लिखा गया है।”

“अहो, तुम तो कलाकार हो  
लगाव है। बड़ी अच्छी बात है।

के मन्दिर वीरभूम के अनेक स्थ  
फूलवेरा, वीरसिंहपुर—इन स्थानों

सब क्या इतने अच्छे हैं कि उन पत्तियों तो नहीं हैं ? मेरा एक रोगी उस  
खैर, तीनकौड़ी चाचा ने मुझे

मकान में रहने में तुम्हें कोई आप  
मकान में रहता था। अब वह क

मुझे पता है, वहाँ देखभाल करने  
बड़ा मकान है। तुम्हें कोई असुविधा

नहीं देना है, क्योंकि मैं रोगी को  
तुम उसके मकान के एक कमरे में

रहोगे, मैं अगर उससे ऐसा अनुरोध  
लेगा।”

यही हुआ। लेकिन रिक्शा ले  
उस मकान में आने कमरे के अन्दर

मैंने घर की देखरेख करनेवाले  
“तुम्हारा नाम क्या है जी ?”

“जी, मुझे मधुसूदन कहते हैं  
“ठीक है, तो मुझे मधुसूदन, वाकते हुए फिर खुजलाया और कहा,

मैं वाम करते हैं या मेरे स्वागत के  
मधुसूदन ने शहतीर की ओर

“इस पर मैंने कभी ध्यान नहीं दिया  
करता है। आप आज आने वाले थे,

“मगर ये हजरत रहेगे तो मेरे  
“आप चिन्ता मत करें मालिक

जाएगा।”  
“माना कि चला जाएगा। मगर  
कोई न कोई ब्यवस्था करनी होगी।”

गाल के प्राचीन ढहे मंदिरों के संबंध में

पुस्तक लिखनी है। इनमें सुन्दर-सुन्दर  
उनके संबंध में आज तक एक भी प्रामा-

। लगता है, तुममें उन चीजों के प्रति

नेकिन मिर्फ सिउड़ी ही क्यों ? उम तरह

नों में है। सुन्दर इतमपुर, दुबराजपुर,  
नो में अच्छे-अच्छे मंदिर हैं। तब हा, वे

पुस्तकें लिखी जाए ?”

के एक मकान का पता बताया। “पुराने

कोर्ट दरवान रहता है। खासा

नुम्हें इसके लिए पैसा भी

मातेक दिनों के लिए अतिथि बनकर

करो तो वह खुशी से इस बात को मान

र गया तो चमगादड़ पर नजर पड़ी।

हमेशा ही इस कमरे

है हजरत। यह कमरा बन्द ही रहा

रहना नामुमकिन है।”

शाम होने पर वह अपने आप चला

लौटकर न आए इसकी

“अब नहीं आएगा। उसने यहां कोई बसेरा नहीं बनाया है कि आएगा ही। रात में किसी समय अन्दर घुस गया है। दिन के वक़्त आंखों से दिखाई नहीं पड़ता है। यही कारण है कि बाहर नहीं जा सका है।”

चाप पीकर मैं कमरे के सामने पड़ी एक पुरानी बेंत की कुर्सी पर आकर बैठ गया।

मकान शहर के एक कोने में है। सामने उत्तर की दिशा में बहुत बड़ा आम का एक बगीचा है। तने की फांक से दूर दिगंत विस्तृत घान का खेत दीख पड़ता है। पच्छिम की ओर एक बंसवारी में ऊपर की तरफ गिरजा का गुंबद दीख पड़ता है। यह सिउड़ी का एक प्रसिद्ध पुराना गिरजा है। सोचा, धूप कुछ कम हो जाए तो जरा उधर से धूम आऊं। कल से काम शुरू करूंगा। खोज-पड़ताल करने पर पता चला है कि सिउड़ी एवं उसके आसपास जीर्ण मंदिर हैं। मेरे पास कैमरा और बहुतेरी फिल्में हैं। इन मंदिरों में जो नक्काशी है, उसकी मुझे तस्वीरें लेनी हैं। ईंटों की आयु अब कितने दिनों की है? ये सब अगर नष्ट हो जाती हैं तो बंगाल को अपनी अमूल्य संपदा से हाथ धोना पड़ेगा।

मैंने अपनी कलाई-घड़ी की ओर देखा। साढ़े पांच बज रहे थे। गिरजा के गुंबद के पीछे सूर्य अदृश्य हो गया। मैं अंगड़ाई लेकर, कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और बरामदे की सीढ़ी की ओर पांव बढ़ाया। तभी मेरे कान के पास सांय-साय शब्द करती हुई न जाने कौन सी चीज़ उड़कर आम के बगीचे की ओर चली गई।

शयन-कक्ष में प्रवेश कर मैंने शहतीर की ओर देखा। चमगादड़ वहां नहीं है।

खैर, अब चैन मिला। कम से कम शाम तो निश्चिन्तता के साथ बीतेगी। हो सकता है, मेरे लेखन का कार्य थोड़ा-बहुत आगे बढ़ सके। वर्धमान, बांकुड़ा और चौबीस परगना के मंदिरों को इसके पहले ही देख चुका हूं। सोचा था, उनके संबन्ध में लिखने का काम सिउड़ी के प्रवास में ही आरंभ करूंगा।

जब धूप ढल गई, अपना टार्च हाथ में लिए मैं गिरजा की ओर चल पड़ा। वीरभूम की लाल मिट्टी, ऊबड़-खाबड़ जमीन और ताड़ों की कतार—ये सब चीज़ें मुझे बहुत ही अच्छी लगती हैं। तब हां, सिउड़ी में मैं पहली बार आया हूं। यद्यपि मैं प्राकृतिक सौंदर्य के उपभोग के निमित्त नहीं आया हूं, फिर भी आज की शाम लाल गिरजा के आसपास का स्थान मुझे बड़ा ही मनोरम प्रतीत हुआ। मैं चहल-कदमी करता हुआ गिरजा से आगे बढ़कर पच्छिम की तरफ थोड़ी दूर ओर निकल गया। मेरे सामने

करना है ?”

मैंने उन्हें बताया कि मैं बंगाल के प्राचीन ढहे मंदिरों के संबंध में अनुमधान कर रहा हूँ। मुझे एक पुस्तक लिखनी है। इतने सुन्दर-सुन्दर मंदिर चारों ओर फैले हैं, लेकिन उनके संबंध में आज तक एक भी प्रामाणिक ग्रंथ नहीं लिखा गया है।”

“अहो, तुम तो कलाकार हो। लगता है, तुमने उन चीजों के प्रति लगाव है। बड़ी अच्छी बात है। लेकिन सिर्फ सिउड़ी ही क्यों? उस तरह के मन्दिर वीरभूम के अनेक स्थानों में हैं। सुसुल हेतमपुर, दुवराजपुर, फूलवेरा, वीरसिद्धपुर—इन स्थानों में अच्छे-अच्छे मंदिर हैं। तब हा, वे सब क्या इतने अच्छे हैं कि उन पर पुस्तकें लिखी जाएँ ?”

खैर, तीनकौड़ी चाचा ने मुझे एक मकान का पता बताया। “पुराने मकान में रहने में तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं है? मेरा एक रोगी उस मकान में रहता था। अब वह कलकत्ता चला आया है। तब हा, जहाँ तक मुझे पता है, वहाँ देखभाल करने के लिए कोई दरबान रहता है। खासा बड़ा मकान है। तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी। तुम्हें इसके लिए पैसा भी नहीं देना है, क्योंकि मैं रोगी को तीन बार यम के हाथ में बचा चुका हूँ। तुम उसके मकान के एक कमरे में सातके दिनों के लिए अतिथि बनकर रहोगे, मैं अगर उससे ऐसा अनुरोध करूँ तो वह सुशी से इस बात को मान लेगा।”

यही हुआ। लेकिन रिक्शा लेकर जब मैं स्टेशन से सरो-सामान लेकर उस मकान में अरने कमरे के अन्दर गया तो चमगादड़ पर नज़र पड़ी।

मैंने घर की देखरेख करनेवाले दरबान को बुलाया।

“तुम्हारा नाम क्या है जी ?”

“जी, मुझे मधुमूदन कहते हैं।”

“ठीक है, तो सुनो मधुमूदन, वह चमगादड़ जी हमेशा ही इस कमरे में वास करते हैं या मेरे स्वागत के निमित्त इनका आना हुआ है ?”

मधुमूदन ने शहतीर की ओर ताकते हुए सिर खुजलाया और कहा, “इस पर मैंने कभी ध्यान नहीं दिया है हज़ूर। यह कमरा बन्द ही रहा करता है। आप आज आने वाले थे, इमीलिए इसे खोल दिया है।”

“मगर ये हज़रत रहेगे तो मेरा रहना नामुमकिन है।”

“आप चिन्ता मत करें भालिक। शाम होने पर वह अपने आप चला जाएगा।”

“माना कि चला जाएगा। मगर कल जिससे लौटकर न आए इसकी कोई न कोई व्यवस्था करनी होगी।”



घोडा-सा स्थान रेलिंग से घिरा था, जो दूर से किसी के बगीचे जैसा लगता था। लगता है, लोहे का एक फाटक भी लगा है।

थोड़ी दूर और आगे बढ़ने पर ममरूम में आया, वह दगीचा नहीं, कब्रिस्तान है। उस कब्रिस्तान में तीसके कब्रें हैं। किसी-किसी पर नक्काशी किया हुआ पत्थर या ईंटों का स्तम्भ है। किसी-किसी मिट्टी की कब्र पर शिलापट रखा हुआ है। ये सब बहुत ही पुराने हैं, इसमें सदेह की कोई गुंजाइश नहीं। स्तम्भों में दरारें पड़ गई हैं। किसी-किसी दरार में बरगद के पेड़ उग आए हैं।

फाटक खुला हुआ ही था। भीतर जाकर मैं शिलापटों पर अस्पष्ट उगी लिखावट को पढ़ने की कोशिश करने लगा। एक पर सन् 1793 लिखा हुआ था, दूसरे पर 1788। जितनी भी कब्रें थी सबकी सब गोरे लोगों की थी। अंग्रेजी राज्य के प्रारम्भिक काल में हिन्दुस्तान आने पर इनमें से अधिकांश की मृत्यु महामारी के प्रकोप से अल्पायु में हुई थी। एक शिलापट पर की लिखावट कुछ स्पष्ट रहने के कारण मैं ज्यों ही टॉर्च जलाकर झुकते हुए पढ़ने जा रहा था, तभी मुझे अपने पीछे पदचाप सुनाई पड़ी। मैंने मुड़कर देखा। एक अर्धे नाटे कद का आदमी करीब दस हाथ की दूरी पर लड़ा मेरी ओर देखता हुआ झुककर रहा था। पहनावे के रूप में उस व्यक्ति के बदन पर अल्पका का कोट और पेंडुलुन था। हाथ में पैबंद लगा एक छाता।

“आप चमगादड़ को पसन्द नहीं करते हैं? यह बात सही है न?”

उस आदमी की बातों से मैं चिह्नक उठा। यह बात उसे कैसे मालूम हुई? मुझे विस्मय में पाकर वह आदमी बोला, “आप सोच रहे हैं कि मुझे इस बात की जानकारी कैसे हुई? सीधी-सी बात है। आप जब अपने मकान के दरवान से चमगादड़ को बाहर भगाने को कह रहे थे तब मैं आसपास ही मौजूद था।”

“ओह, यह बात है!”

उस आदमी ने मुझे नमस्कार किया।

“मेरा नाम है जगदीश पतिवैल मुखर्जी। हम लोग चार पुरखों से सिउड़ी में वाम करते आ रहे हैं। मैं ईसाई जो ठहरा— इसलिए शाम के बवत गिरजा और कब्रगाह के इर्द-गिर्द चक्कर काटना मुझे अच्छा लगता है।”

अधेरा बढ़ता जा रहा है, यह देखकर आहिस्ता-आहिस्ता घर की ओर बढ़ना बढाया। वह आदमी मेरे साथ हो लिया। वह कैमा-कैमा तो लग रहा था। यो वह निरीह जैसा लग रहा था किन्तु उसके गले की आवाज



में घीमेपन के साथ कर्कशता का संयोग था। इसके अलावा जो आदमी और-जवरन जान-पहचान करता है, मुझे वह यों भी भला नहीं लगता है।

मैंने टॉर्च का बटन दबाया मगर वह जला नहीं। याद आया, हावडा स्टेशन में एक जोड़ा बैटरी खरीदने का मैंने निश्चय किया था, मगर वैसे नहीं कर सका था। वड़ी ही मुश्किल है! रास्ते में अगर माप-बिच्छू रहे तो दीखेगा भी नहीं।

उस आदमी ने कहा, “आप टॉर्च के लिए फिक्र मत करें। मैं अंधेरे में चलने का आदी हूँ। मुझे अच्छी तरह दीख पड़ता है। मगर सावधान रहें, सामने एक गड़ढा है।”

उम आदमी ने मेरे हाथ को पकड़कर खीचा और मुझे बायी तरफ हटा दिया। उसके बाद बोला, “वैम्पायर किसे कहते हैं, यह आपको मालूम है?”

मैंने संक्षेप में कहा, “मालूम है।”

वैम्पायर के बारे में कौन नहीं जानता? खून चूसने वाले चमगादड़ को वैम्पायर बेट कहा जाता है। वह घोड़ा, गाय, बकरी इत्यादि के गले में खून चूसकर पीता है। मुझे इस बात की जानकारी नहीं है कि इस किस्म के चमगादड़ हमारे देश में है या नहीं, तब हा, विदेशी पुस्तकों में वैम्पायर बेट के बारे में पढ़ा है। विदेश की भूतों की कहानियों की पुस्तकों में मैंने पढ़ा है कि न केवल चमगादड़, बल्कि आधी रात के समय लार्शें भी कब्र से बाहर निकलकर जीवित मोये मनुष्य के गले से खून चूसकर पीती हैं। उन्हें भी वैम्पायर ही कहा जाता है। काउन्ट ड्रैकुला की लीमहर्षक कहानी में तभी पढ़ चुका हूँ जब मैं स्कूल में पढ़ता था।

मुझे यह सोचकर ऊब महसूस हुई कि चमगादड़ों के प्रति मुझ में एक विरोधी भावना है, यह बात जानते हुए भी इस आदमी ने जवरन चमगादड़ की चर्चा क्यों छेड़ दी।

इसके बाद हम लोग कुछ देर तक खामोश रहे।

आम के बगीचे की बगल से होते हुए जब हम घर के निकट पहुंचे तब एकाएक वह आदमी बोल पड़ा, “आपसे परिचित होने के कारण मुझे वड़ी ही प्रमन्नता हुई। कुछ दिनों तक ठहरिएगा न?”

मैंने रहा, “लगभग एक मप्ताह।”

“ठीक है, फिर मुलाकात होगी ही।” उसके बाद कब्रगाह की ओर उगलती से इशारा करते हुए बोला, “शाम के वक्त उधर आने पर मुझसे मुलाकात होगी। मेरे वाप-दादे की कब्रें भी उधर ही हैं। कल आइएगा, दिसा दूंगा।”

मैंने मन ही मन कहा, 'तुमसे जितनी ही कम मुलाकातें हो, उतना ही अच्छा। चमगादड़ों का उपद्रव जिम तरह बरदास्त के बाहर है, चमगादड़ के सदम में चर्चा भी उतनी ही अरुचिकर। सोचने के लिए बहुत सी दूसरी बातें भी हैं।'

बरामदे की सीढिया तय करते वक़्त मैंने देखा, वह आम के बगीचे में अदृश्य हो गया। बगीचे के पीछे के धान के खेतों में तब सियारों का समवेत संगीत मुखर हो चुका था।

आश्विन का महीना है, फिर भी उमस महसूस हो रही है। छा-नीकर जब मैं बिस्तर पर लेटा, कुछ देर तक करवटें बदलता रहा, उसके बाद सोचा, चमगादड़ों के भय से मैंने खिड़की-दरवाजे बन्द कर दिए थे। उन्हें खोल देने से हो सकता है, थोड़ा आराम महसूस हो।

लेकिन दरवाज़ा खोलने का साहस न हुआ। इसका कारण चमगादड़ नहीं था। दरवान की नींद अगर पतली हो तो चोरी के उपद्रव से रक्षा हो सकती है। मगर इस तरह के कस्बों में दरवाज़ा खोलकर रखने से अकसर यह देखने में आता है कि कुत्ते कमरे के अन्दर आकर चभल-जूते गायब कर देते हैं। मुझे इस तरह के अनुभव इसके पहले हो चुके हैं। इसलिए बहुत देर तक सोचने के बाद मैंने दरवाज़ा नहीं खोला। पश्चिम दिशा की खिड़की अवश्य ही खोल दी। देखा, बहुत ही ताज़ा हवा आ रही है।

मैं क्योंकि धकान से चुर था इसलिए नींद आने में देर नहीं लगी।

नींद में मैंने सपने में देखा, खिड़की की सलाख से अपना मुह सटाकर शाम का वह आदमी हंस रहा है। उसकी आँखें चटख हरे रंग की हैं, दात पतले-पतले और पंने, उसके बाद मैंने देखा, वह दो कदम पीछे हटा और फिर दो हाथ ऊँचा उठकर फलागते हुए, सलाख के बीच से कमरे के अन्दर चला आया। उसके कदमों की आहट से मेरी नींद टूट गई।

आँख खोलकर देखा—सुबह हो चुकी थी। वाप दे, कितना विचित्र स्वप्न था।

मैं बिस्तर से उठकर खड़ा हुआ और मधुसूदन को पुकारकर उससे चाय लाने के लिए कहा।

मधुसूदन जब बरामदे की बेंत की मेज़ पर चाय रखकर जाने लगा, मुझे उसका चेहरा उदास जैसे लगा। मैंने पूछा, "क्या हुआ है मधुसूदन? तद्विषयत खगब है क्या? या रात में ठीक से नींद नहीं आई?"

मधुसूदन ने कहा, "नहीं बाबूजी, मुझे कुछ नहीं हुआ है। जो कुछ हुआ है, वह मेरे बछड़े के साथ हुआ।"

"क्या हुआ है?"

“कन रात सांघ ने डंस लिया और वह मर गया।”

“यह क्या ? मर गया ?”

“मरेगा नहीं हुआ ? कुल मिलाकर सात दिनों का ही बछड़ा था। गले के पास डग लिया था। पता नहीं, गेहुअन था या और कोई दूसरा ही।”

मेरा मन विचलित हो उठा। गले के पास ? गले में डंस लिया ? कल ही जैसे...

एकाएक मुझे याद हो आया। वैम्पायर बेट। वैम्पायर बेट गले से खून चूस लेता है। किन्तु दूसरे ही क्षण मुझे लगा, संपदंश से अगर बछड़ा मर जाता है तो इसमें आश्चर्य की कौन-सी बात है ? बछड़ा अगर सोया हुआ हो तो गले में डंस लेना कोई अस्वाभाविक बात नहीं है। मैं दोनो के बीच व्यर्थ ही एक सामंजस्य स्थापित करने की चेष्टा कर रहा हूँ।

मधुसूदन को संवेदना के दो शब्द कहने के बाद मैं अपना काम शुरू करने के खयाल में ज्यो ही कमरे के अन्दर जाने लगा, मेरी निगाह अपने-आप शहतीर की ओर चली गई। कल का वही चमगादड़ पता नहीं कब अपनी जगह पर आकर जम गया है।

उम खिड़की को खोलने से ही ऐसी बात हुई है। गलती मेरी ही है। मन ही मन सोचा, आज रात चाहे जितनी भी उमस क्यों न हो, खिड़की और दरवाजे बन्द ही रखूंगा।



पूरा दिन मंदिर में आनन्द में ही कटा। अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी के इन जीर्ण मन्दिरों पर उकरी नक्काशी देखकर सचमुच मैं अचम्भे में खो गया।

जब मैं हैतमपुर से बस पर सवार होकर मिउड़ी पहुंचा तो साढ़े चार बज रहे थे।

घर लौटने का रास्ता कब्रिस्तान के निकट से ही जाता है। तमाम दिन काम में मशगूल रहने के कारण उस आदमी की बातें लगभग भूल ही चुका था। इसलिए कब्रिस्तान के बाहर सहिजन वृक्ष के तले उस पर अचानक नजर पड़ते ही मैं चौंक पड़ा। दूसरे ही क्षण मुझे लगा, इसे न देख पाने का बहाना कर उसे नजर-अन्दाज करते हुए निकल जाना ही अच्छा रहना। किन्तु अब इसका उपाय न था। सिर झुकाकर पांवी की गति में ज्योही तेज कर दी कि वह आदमी तेज कदमों से चलता हुआ मेरे पास आ गया।

“रात में आपको अच्छी तरह नींद आई थी तो ?”

मैंने सक्षेप में ‘हां’ कहा और आगे बढ़ना जारी रखा। लेकिन वह आज भी मेरा पिछ छोड़ने वाला नहीं था। मेरी तेज चाल से तालमेल बिठाते हुए बोला, “जानते हैं, मुझमें क्या उन्माद है? रात में मैं सो ही नहीं पाता। दिन के वक्त गहरी नींद में पड़ जाता हूँ और शाम से रात भर इधर-उधर चहलकदमी करता रहता हूँ। इस चक्कर काटने में कितना आनन्द है, इसे आपको कैसे समझाऊँ? आपको पता है कि इस कब्रगाह और इसके पास देखने-सुनने लायक कितनी चीजें हैं? जो ये लोग भिट्टी के अन्दर ताबूत में बरसों तक बन्दी की हालत में रहकर साल पर साल गुजार देते हैं, उनकी अतृप्त वासना के बारे में आप कुछ जानते हैं? इनमें से कोई क्या इस तरह बन्दी बनकर रहना चाहता है? कोई नहीं। सभी मन-ही-मन सोचते हैं, काश, बाहर निकल पाता! मगर कठिनाई क्या है?—निकलने का रहस्य हर किसी को मालूम नहीं है। उसी शोक में कोई रोता है, कोई कराहता है और कोई लम्बी साँसें खींचता रहता है। आधी रात में जब चारों तरफ सन्नाटा रेंगने लगता है, सिमार सो जाते हैं, म्हीगुर बोलते-बोलते थक जाते हैं, तब वे जिसकी श्रवण-शक्ति तीव्र हुआ करती है—जैसे मेरी—भिट्टी के नीचे ताबूत में बन्द प्राणियों के शोक के उद्गार सुन पाते हैं। इतना जरूर है कि जिमके बारे में मैंने आपसे कहा, सुनने के लिए कान पतला होना चाहिए। मेरी आल और कान दोनों बहुत ही अच्छे हैं। एकदम चमगादड़ के जैसे...”

मन-ही-मन सोचा, मधुसूदन से इस आदमी के बारे में पूछताछ करूँगा। इसे पूछू तो सही उत्तर देगा, इस बात पर मुझे विश्वास नहीं है। यह आदमी यहाँ का कब का बाशिन्दा है? क्या करता है? इसका मकान कहां है?

मेरे पीछे-पीछे चलते हुए वह आदमी कहने लगा, “मैं किसी से ललक कर जान-पहचान नहीं करता, मगर आपसे कर रहा हूँ। आशा है, जब तक आप यहाँ रहेगे मुझे अपनी संगति से वंचित नहीं करेगे।”

अब मैं अपना क्रोध सभाल न सका। चहलकदमी रोककर मैं उस आदमी की तरफ मुड़कर बोला, “मैं यहाँ मात दिनों के लिए आया हूँ। मेरे जिम्मे बहुत सारे काम हैं। आपकी संगति का मौका मिलेगा, ऐसा नहीं लगता।”

मेरी बात सुनकर आरम्भ में उस आदमी का चेहरा बुझ गया। उसके बाद पीछे किन्तु दृढ़ स्वर में मुसकराते हुए कहा, “आप मुझसे न भी मिल पाएँ तो भी मैं आपसे मिल सकता हूँ। आप जिम वक्त काम करते हैं—



बाद ही मैं नींद की बाहो में सो गया था ।

कब मेरी नींद टूटी, पता नहीं और कुछ देर तक यह बात ममझ में नहीं आई कि क्यों टूट गई । उसके बाद पूरबी दीवार पर चतुष्कोण चादनी देखते ही मेरी छाती घडघड करने लगी ।

पता नहीं खिडकी कब खुल गई और उममें चांदनी आकर दीवार पर झूल रही थी ।

उममें के बाद मैंने देखा, चतुष्कोण प्रकाश के ऊपर किमी चीज की छाया बार-बार झिल-झूल रही है ।

मास रोजे, गरदन घुमाकर मैंने ज्योही ऊपर की ओर ताका, चमगादड़ पर मेरी निगाह गई ।

मेरी छाट के ठीक ऊपर ही चमगादड़ चरखी की तरह घूम रहा है और घूमते हुए आहिस्ता-आहिस्ता नीचे मेरी ओर आ रहा है ।

जी-जान में कोशिश करने पर जितनी हिम्मत बटोर सकता था, मैंने अपने आपमें उतनी हिम्मत बटोरी । इस हालत में दुर्बलता को प्रथम देने से विपत्ति अवश्यभावी है । चमगादड़ की तरफ से बिना अपनी आँखें हटाए, मैंने अपने दाहिने हाथ को छाट के पास पड़ी भेज की ओर बढ़ाया और उस पर रखी अपनी मजबूत जिल्द मढ़ी कापी उठा ली ।

तीन-चार हाथ की दूरी से ज्यों ही चमगादड़ मेरी कठ नली की ओर कूदा, मैंने काँपी से उसके माथे पर जोरो से प्रहार किया ।

चमगादड़ छिटककर खिडकी की सलाख से जाकर टकराया और कमरे के बाहर मैदान में गिर पड़ा । दूसरे ही क्षण 'खर-खर' आवाज हुई लगा, कोई चीज जैसे घास पर दौड़ती भाग गई ।

मैंने खिडकी के पास जाकर गरदन बढ़ाकर देखा । कहीं कुछ नहीं था । चमगादड़ का निशान तक न था ।

उस रात फिर मैं सो नहीं सका ।

सुबह घूप निकलते ही रात की विभीषिका बहुत कुछ दूर हो गई । वह चमगादड़ वैम्पायर हो सकता है, अब तक इसका कोई ठीक-ठीक प्रमाण मेरे पास न था । चमगादड़ नीचे मेरी ओर आ रहा था, इसका मतलब यह नहीं कि वह मेरा खून ही पीने आ रहा था । वह अजीब आदमी अगर वैम्पायर का प्रसंग न छेड़ता तो मेरे दिमाग में यह बात आती ही क्यों ? कलकत्ते में जिस जाति का चमगादड़ कमरे के अन्दर आता है, यह भी उसी जाति का चमगादड़ प्रतीत होता ।

खैर ! अभी हैतमपुरा का काम बाकी है । चाय पीकर साढ़े छह बजे मैं निकल पड़ा ।



## पटल बाबू फिल्म स्टार बने

पटल बाबू ने कुल मिलाकर कंधे से झोली लटकाई ही थी कि बाहर से निशिकान्त बाबू ने पुकारा, "पटल, घर में है जी?"

"जी हां! ठहरिए, अभी आया।"

निशिकान्त घोष नेपाल भट्टाचार्य लेन में पटल के मकान के तोंन मकान वाद ही रहते हैं। वे बड़े ही विनोदी व्यक्ति हैं।

पटल बाबू झोली लटकाए हुए आए और बोले, "बात क्या है? सुबह-सुबह कैसे आना हुआ?"

"तुम कब तक वापस आ रहे हो?"

"एकाध घंटे में। क्यों?"

"उसके बाद कहीं जाना तो नहीं है? आज टैगोर का बर्थ-डे है। कल मुझे अपने छोटे साने से नेताजी फार्मसी में मुलाकात हुई थी। वह फिल्म में काम करता है—आदमी लाकर जुटा देता है। उसने बताया कि किसी तसवीर के एक दृश्य के लिए एक आदमी की जरूरत है। वह जैसा आदमी चाह रहा है, समझ रहे हो न, उसकी उम्र पचास वर्ष होनी चाहिए, कद नाटा हो और सर गंजा। मुझे तत्काल तुम्हारी याद आ गई। इसीलिए मैंने उसे तुम्हारा पता बता दिया है। कह दिया है, सीधे तुममें आकर बात करे। आज दिन में दस बजे आएगा। तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं है? उन लोगो का जो रेट है उसके हिसाब से कुछ पेमेंट भी करेगा..."

सुबह-सुबह इस तरह के समाचार की पटल बाबू ने आशा नहीं की थी। वायन वर्ष की उम्र में अभिनय करने का प्रस्ताव रखा जा सकता है, उनके जैसे नगण्य मनुष्य के लिए इसका अनुमान करना सचमुच कठिन ही है। यह तो जैसा उमक चिन्तन के परे थी कोई यस्तु है।

"क्यों जी, हां या ना जो कहना हो, कह डालो। किसी जमाने में तुम अभिनय कर चुके हो न?"

"हा यानी इसमें ना कहने की कौन-सी बात है? वह आए फिर बात-चीत करते देखूंगा। आपने अपने साने का नाम क्या बनाया?"

"नरेन। नरेन दत्त। उम्र लगभग तीस वर्ष, लम्बा, दोहरे बदन का। बड़ा है, दस-माढ़े दग बजे तक आएगा।"



बाजार जाने के बाद आज पटल बाबू अपनी पत्नी की फरमाइशें भुला बैठे और काला जीरा की जगह मिर्च खरीद लाए। संध्या नमक की बात उनके ध्यान में रही ही नहीं। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। किसी जमाने में पटल बाबू अभिनय के बड़े शौकीन थे। वह शौक शौक न होकर नशे जैसा था। यात्रा, थियेटर, पूजा-पर्व, महल्ले के बलब के समारोह इत्यादि में उनका बंधा-बंधाया काम या अभिनय करना। कितनी ही बार इन्हें हारों में पटल बाबू का नाम छप चुका है—'पराशर की भूमिका में श्री शीतलाकान्त राय (पटल बाबू)।' एक जमाना ऐसा भी था कि उनके नाम से ज्यादा टिकटें बिका करती थीं।

तब वे कांचरापाड़ा में रहते थे। वही वे रेलवे के कारखाने में नौकरी करते थे। उन्नीसवीं चीनी इस्वी में कलकत्ते के हडसन एण्ड किम्ब्रली कम्पनी में ज्यादा रुपये की नौकरी और नेपाल भट्टाचार्य लेन में मकान मिल जाने के कारण पटल बाबू सपत्नीक कलकत्ता चले आए। कुछ वर्ष अच्छी तरह ही व्यतीत हो गए। दफ्तर का साहब पटल बाबू के प्रति स्नेह का भाव रखता था। उन्नीस सौ तैतालीस ईस्वी में पटल बाबू जब एक थियेटर व पार्टी बनाने को थे कि युद्ध के कारण दफ्तर में छंटनी हुई और पटल बाबू की नौ बरसों की मनचाही नौकरी कपूर की गन्ध की तरह उड़ गई।

उसी समय से आज तक का अरसा पटल बाबू ने रोजगार धंधे की खोज में गुजार दिया है। शुरू में उन्होंने मनिहारी की दुकान खोली थी। पांच बरसों के बाद वह बन्द हो गई। उसके बाद एक छोटे-से बंगाली दफ्तर में कुछ दिनों तक किराती के पद पर रहे। दफ्तर के बड़े मालिक बंगाली साहब मिस्टर मिटार की उच्छ्र खलना और वेवजह क्रोध में आ जाने के स्वभाव को बरदाश्त न कर पाने के कारण उन्होंने खुद ही नौकरी छोड़ दी थी। उसके बाद इस दस साल के दरमियान जीवन-बीमा की दलाली से लेकर कौन-सा ऐसा काम है, जिसे पटल बाबू ने नहीं किया हो? लेकिन अभाव और तंगी कभी दूर नहीं हुई। आजकल वे एक लोहा-लकड़ की दुकान में दौड़-धूप कर रहे हैं। उनके एक चचेरे भाई ने कहा है कि वहां कोई-न-कोई इन्तजाम हो जाएगा।

और अभिनय? यह तो जैसे उनके पूर्वजन्म की बातें हो चुकी हैं। अनजाने ही एक आह निकलनी है और धंधली यादें मन में तैरने लगती हैं। पटल बाबू की स्मरण-शक्ति तीव्र है, यही वजह है कि अब भी अच्छे-अच्छे पार्ट के बेहतरीन अंश उन्हें याद हैं: 'सुनो, बार-बार गाडीव की भूतकार। अपना दल है आकुल महासमर में। जो हैं शत समीर हुंकार। घुमा रहें हैं

## पटल बाबू फिल्म स्टार बने

पटल बाबू ने कुल मिलाकर कंधे से झोली लटकाई ही थी कि बाहर से निशिकान्त बाबू ने पुकारा, "पटल, घर में है जी?"

"जी हाँ! ठहरिए, अभी आया।"

निशिकान्त घोष नेपाल भट्टाचार्य लेन में पटल के मकान के तीन मकान बाद ही रहते हैं। वे बड़े ही विनोदी व्यक्ति हैं।

पटल बाबू झोली लटकाए हुए आए और बोले, "बात क्या है? सुबह-सुबह कैसे आना हुआ?"

"तुम कब तक वापस आ रहे हो?"

"एकाध घंटे में। क्यों?"

"उसके बाद कही जाना तो नहीं है? आज टंगोर का बर्म-डे है। कल मुझे अपने छोटे साने से नेताजी फार्मसी में मुलाकात हुई थी। वह फिल्म में काम करता है—आदमी लाकर जुटा देता है। उसने बताया कि किसी तसवीर के एक दृश्य के लिए एक आदमी की जरूरत है। वह जैसा आदमी चाह रहा है, समझ रहे हो न, उसकी उम्र पचास वर्ष होनी चाहिए, कद नाटा हो और सर गजा। मुझे तत्काल तुम्हारी याद आ गई। इसीलिए मैंने उसे तुम्हारा पता बता दिया है। कह दिया है, सीधे तुममें आकर बात करे। आज दिन में दस बजे आएगा। तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं है? उन लोगों का जो रेट है उनके हिसाब से कुछ पेमेन्ट भी करेगा..."

सुबह-सुबह इस तरह के समाचार की पटल बाबू ने आशा नहीं की थी। बावन वर्ष की उम्र में अभिनय करने का प्रस्ताव रखा जा सकता है, उनके जैसे नगण्य मनुष्य के लिए इसका अनुमान करना सचमुच बठिन ही है। यह तो जैसे उनके चिन्तन के परे की कोई वस्तु है।

"क्यों जी, हाँ या ना जो बहना हो, कह डालो। किसी जमाने में तुम अभिनय कर चुके ही न?"

"हाँ यानी इसमें ना बहने की कौन-सी बात है? यह आए फिर बात-चीत करके देखूंगा। आपने अपने साने का नाम क्या बताया?"

"नरेण। नरेण दत्त। उम्र लगभग तीस वर्ष, लम्बा, दोहरे बदन का। कहा है, दस-साढ़े दस बजे तक आएगा।"

बाजार जाने के बाद आज पटल बाबू अपनी पत्नी की फरमाइशें भुला बैठे और काला जीरा की जगह मिर्च खरीद लाए। सेंधा नमक की बात उनके ध्यान में रही ही नहीं। इसमें आश्चर्य को कोई बात नहीं है। किसी ज़माने में पटल बाबू अभिनय के बड़े शौकीन थे। वह शोक शोक न होकर नसे जैसा था। यात्रा, थियेटर, पूजा-पर्व, महल्ले के बलब के समारोह इत्यादि में उनका बंधा-बंधाया काम था अभिनय करना। कितनी ही बार इश्तहारों में पटल बाबू का नाम छप चुका है—'पराशर की भूमिका में श्री शीतलाकान्त राय (पटल बाबू)।' एक ज़माना ऐसा भी था कि उनके नाम से ज्यादा टिकटें बिका करती थीं।

तब वे कांचरापाड़ा में रहते थे। वही वे रेलवे के कारखाने में नौकरी करते थे। उन्नीस सौ चौतीस ईस्वी में कलकत्ते के हडसन एण्ड किम्बलो कम्पनी में ज्यादा रुपये की नौकरी और नेपाल भट्टाचार्य लेन में मकान मिल जाने के कारण पटल बाबू सपत्नीक कलकत्ता चले आए। कुछ वर्ष अच्छी तरह ही व्यतीत हो गए। दफ्तर का साहब पटल बाबू के प्रति स्नेह का भाव रखता था। उन्नीस सौ तैंतालीस ईस्वी में पटल बाबू जब एक थियेटर व पार्टी बनाने को थे कि युद्ध के कारण दफ्तर में छटनी हुई और पटल बाबू की नौ बरसों की मनचाही नौकरी कपूर की गन्ध की तरह उड़ गई।

उसी समय से आज तक का अरसा पटल बाबू ने रोजगार धंधे की खोज में गुज़ार दिया है। शुरू में उन्होंने मनिहारी की दुकान खोली थी। पांच बरसों के बाद वह बन्द हो गई। उसके बाद एक छोटे-से बंगाली दफ्तर में कुछ दिनों तक किरानी के पद पर रहे। दफ्तर के बड़े मालिक बंगाली साहब मिस्टर मिटार की उच्छ्रलता और वेवजह क्रोध में आ जाने के स्वभाव को बरदाश्त न कर पाने के कारण उन्होंने खुद ही नौकरी छोड़ दी थी। उसके बाद इस दस साल के दरमियान जीवन-बीमा की दलाली से लेकर कौन-सा ऐसा काम है, जिसे पटल बाबू ने नहीं किया हो? लेकिन अभाव और तंगी कभी दूर नहीं हुई। आजकल वे एक लोहा-सक्कड़ की दुकान में दौड़-धूप कर रहे हैं। उनके एक चचेरे भाई ने कहा है कि वहां कोई-न-कोई इन्तज़ाम हो जाएगा।

और अभिनय? यह तो जैसे उनके पूर्वजन्म की बातें हो चुकी हैं। अतः जाने ही एक आह निकलनी है और धुधली मादें मन में तैरने लगती है। पटल बाबू की स्मरण-शक्ति तीव्र है, यही वजह है कि अब भी अच्छे-अच्छे पार्ट के बेहतरीन अंश उन्हें याद हैं: 'सुनो, बार-बार गाडीव की भनकार। अपना दल है आकुल महासमर में। जो है शत समीर हुंकार। घुमा रह दूँ

गदा पर्वताकार—बृकोदर—संचालन मे ।' ...सोचने पर अब भी रोमाच का अनुभव होता है ।

नरेशदत्त ठीक सांठे बारह बजे आए । पटल बाबू उम्मीद लगभग छोड़ चुके थे और स्नान करने की तैयारियां कर रहे थे कि दरवाजे पर दस्तक पड़ी ।

"आइए, आइए !" पटल बाबू दरवाजा खोलकर आगतुक को घर के अन्दर खींचते हुए ले आए और टूटे हृत्पे वाली कुर्सी उनकी ओर बढ़ा दी और कहा, "बैठिए ।"

"नहीं-नहीं । बैठूंगा नहीं । शायद निशिकान्त बाबू ने आपसे मेरे बारे में कहा होगा..."

"हा-हा । मैं अलबत्ता दंग रह गया । इतने दिनों के बाद..."

"आपको कोई आपत्ति नहीं है न ?"

दाम से पटल बाबू का सिर नीचे झुक गया ।

"मेरे द्वारा...हे हे...मतलब है कि काम चल जाएगा तो ?" नरेश बाबू ने गम्भीरता के साथ पटल बाबू को एक बार सिर से पैर तक गौर से देखा, फिर कहा, "अच्छी तरह चल जाएगा । मगर काम कल ही है ।"

"कल ? रविवार में ?"

"मगर किमी स्टूडियो में नहीं । जगह के धारे में आपको बता जाता हूं । मिशन रोड और वॉटिक स्ट्रीट के मोड़ पर फैंराडे हाउस है । देखा है न ? सात मजिली इमारत ? उमी के सामने ठीक आठ बजे घले आइएगा । काम वही है । बारह बजे तक आपको फर्सत मिल जाएगी ।"

नरेश बाबू उठकर लड़े हुए । पटल बाबू ने पबराकर कहा, "आपने पार्ट के बारे में कुछ बताया ही नहीं ।"

"आपका पार्ट है...पेटेस्ट्रियन यानी राहगीर का । एक अनमना तुनक मिजाज पेटेस्ट्रियन ! ...अच्छी बात है, आपके पाग बन्द गले का कोट है ?"

"शायद है ।"

"वही पहनकर आइएगा । रंग गहरा है न ?"

"बादामी क्रिम का है । मगर गरम पगहा है ।"

"गो होने दीजिए । हम लोगों का सीन भी सरदियों का है । अच्छा ही है...याद रगिएगा कल सांठे आठ बजे फैंराटे हाउस ।"

पटल बाबू के दिमाग में एकाएक एक सवाल पैदा हुआ ।

"पार्ट में सवाद है न ? बोचना पड़ेगा तो ?"

"जरूर । स्वीटिंग पार्ट है । ...क्याने इगके पहने अभिनय किया है ?"

“हां... थोड़ा-बहुत...”

“फिर पैदल चलाने की खातिर ही आपके पास क्यों आता ? सो तो सड़क से किसी भी राहगीर को पकड़ने से काम चल जाता।... संवाद है और कल यहां पहुंचते ही आपको मिल जाएगा। अच्छा, चलूं...”

नरेश दत्त के चले जाने के बाद पटल बाबू ने अपनी पत्नी के पास जाकर उसे तमाम बातें बताईं।

“जो बात मेरी समझ में आई, अजी ओ समझ रही हो न ? यह पाटें कोई खास बड़ा नहीं है। पैसा कम ही मिलेगा और यह भी कोई बड़ी बात नहीं है। असली बात है, थियेटर में मेरा पहला पाटें क्या था, तुम्हें याद है न ?—मत सैनिक का पाटें। सिर्फं मुंह बाये, आंख मूंदे, हाथ पांव पसारे पड़े रहना। और उसी से आहिस्ता-आहिस्ता मैंने कितनी उन्नति की, याद है न ? वाट्स साहब का हैंड शेक याद है ? और हम लोगों की म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन चारुदत्त के द्वारा दिया गया वह मेडल ? यह तो पहली सीढ़ी है। कहो, ठीक कह रहा हूं न ? मान, नाम, धन, ख्याति अगर सुरक्षित है इस जग में। हे गृहिणी मेरी, प्राप्त करूंगा मैं सब कुछ को !...”

बावन वर्ष की उम्र के रहने के बावजूद पटल बाबू उछल जैसे पड़े।

पत्नी ने कहा, “यह क्या हो रहा है ?”

“फिर मत करो, रानी। शिशिर भादुड़ी सत्तर साल की उम्र में चाणक्य की भूमिका में कितने जोर से उछलते थे, यह बात याद है ? आज मैंने फिर से जवानी हासिल की है।”

“तुम हमेशा ख्याली पुलाव पकाते रहते हो। यही वजह है कि अब तक तुम कुछ भी नहीं कर पाए।”

“होगा-होगा। सब कुछ होगा। अच्छी बात है। आज तीसरे पहर थोड़ी-सी चाय पिऊंगा और उसके साथ अदरक का रस, नहीं तो गला ठीक से...”



दूसरे दिन मेट्रोपोलिटन की घड़ी में जब आठ बजकर सात मिनट हो रहे थे, पटल बाबू एमप्लेनेड पहुंचे। वहां में बेंटिक स्ट्रीट। मिशनरो के मोड से फैंराडे हाउस में पहुंचने में और दस मिनट लगे।

दफ्तर के गेट के सामने बंहेद तैयारिया हो रही हैं। तीन-चार गाड़ियां हैं। उनमें में एक खासी बड़ी है—लगभग बस की तरह—उसकी छत पर सगे मामान रये हुए हैं। सड़क के ठीक किनारे फुटपाथ पर एक तिपाये

काले रंग के यन्त्र की जैसी कोई चीज है। उसके गिदं कई व्यक्ति व्यस्तता के साथ चहल-कदमी कर रहे हैं। गेट के ठीक मुहाने पर, एक लोहे के तिपाये डण्डे के ऊपर लोहे का एक दूसरा डण्डा आड़ा-आड़ी सुलाया हुआ है और उसके किनारे मधुमक्खी के छत्ते की जैसी कोई चीज लटक रही है। इसके अलावा तीसरे व्यक्ति इधर-उधर खड़े हैं। पटल बाबू ने देखा, उन लोगो के बीच गैर बगाली भी हैं, किन्तु उन आदमियों को कौन-सा काम करना है, इस बात का वे अनुमान नहीं लगा सके।

नरेश बाबू कहां हैं ? सिवा उनके पटल बाबू को कोई पहचानता नहीं है।

पटल बाबू घड़कते कलेजे से दफ्तर के फाटक की ओर चल पड़े।

वैशाख का महीना। खादी का बन्द गले का कोट बड़ा ही भारी लग रहा था। पटल बाबू को अपने गले के चारों तरफ पसीने की बूंदों का अनुभव हुआ।

“अतुल बाबू, इधर आइए।”

अतुल बाबू ? पटल बाबू ने मुड़कर देखा। दफ्तर के वरामदे के एक खम्भे के पास खड़े होकर नरेश बाबू उन्हीं को पुकार रहे हैं। भले आदमी ने गलत नाम से पुकारा है। ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है। एक ही दिन का परिचय है। पटल बाबू ने आगे बढ़कर नमस्कार किया और बोले, “लगता है, मेरा नाम आपने ठीक-ठीक नहीं लिखा है। नाम है शीतलकांत राय। लोग अलबत्ता पटल बाबू के नाम से ही मुझे जानते हैं। वियेटर में भी इसी नाम से जानते थे।”

“ओ, आप तो समय के बड़े ही पाबन्द हैं।”

पटल बाबू मुगकराये।

“नौ वर्ष तक हूदमन क्रिम्बरली में मैंने काम किया है। एक दिन भी लेट नहीं हुआ था। नॉट ए सिगल डे।”

“ठीक है। आप एक काम करें। वहा छाह में जाकर थोड़ी देर प्रतीक्षा कीजिए। मैं इधर का काम आगे बढ़ा लूँ।”

तिपाये यन्त्र के पास में एक आदमी ने पुकारा, “नरेश !”

“सर ?”

“वे क्या हम लोगो के आदमी हैं ?”

“हां, सर। आप ही... यानी घरके का जो मामला है...”

“अच्छा। ठीक है। अभी जगह क्लियर करो। शॉर्ट लेना है।”

पटल बाबू दफ्तर के पाग ही पाग की एक दुजान के छाजन के तने पाकर खड़े हो गए। क्रिम्बरली का काम उन्हीं... नहीं देगा था।

उनके लिए सब कुछ नया जैसा है। थियेटर से इसको कोई समानता नहीं। यहां के आदमी कितनी मेहनत कर रहे हैं! उस वजनदार यंत्र को अपनी पीठ पर लादे एक इक्कीस-बाइस वर्ष का नौजवान इधर से उधर रख रहा है। यंत्र का वजन कम-से-कम बीस-पच्चीस सेर होगा ही।

परन्तु उनका संवाद कहां है? अब क्यादा वक्त नहीं है। फिर भी पटल बाबू को यह मालूम नहीं है कि उन्हें क्या कहना है।

अचानक पटल बाबू को घबराहट महसूस होने लगी। वे आगे बढ़कर जाएं? वह रहे नरेश बाबू! एक बार जाकर उनसे पूछ लेना क्या उचित नहीं होगा? पार्ट चाहे छोटा हो या बड़ा, अच्छी तरह से करने के लिए उन्हें तैयारी करनी ही है। नहीं तो इतने-इतने लोगों के बीच भूल होने से उन्हें अजीब स्थिति में पड़ना होगा। बीस बरसों से उन्होंने अभिनय नहीं किया है।

पटल बाबू आगे बढ़ रहे थे, तभी जोरों की एक आवाज सुनकर वे ठिठककर खड़े हो गए।

“साइलेन्स !”

उसके बाद नरेश बाबू की आवाज सुनाई पड़ी, “अब शॉट लिया जाएगा। आप लोग कृपया चुपचाप रहें। बातचीत मत करें, अपनी जगह से हटें नहीं, कैमरे की ओर बढ़ें नहीं।”

उसके बाद पहले वाले आदमी की आवाज फिर से सुनाई पड़ी, “साइलेन्स ! टेकिंग !” अबकी पटल बाबू की आंखें उस आदमी पर पड़ी। मध्यवयस्क, मोटा-सोटा वह आदमी तिपाये यंत्र के सामने ही खड़ा है। गले के एक चैन में दूरबीन जैसी कोई चीज लटक रही है। वही क्या डायरेक्टर है? कितने आश्चर्य की बात है कि उन्होंने डायरेक्टर तक का नाम नहीं पूछा।

अबकी एक-एक कर बहुत-मी तेज आवाजें पटल बाबू के कानों में आईं, “स्टार्ट साउण्ड ! रनिंग ! एक्शन !”

‘एक्शन’ कहते ही पटल बाबू ने देखा, चौराहे से एक गाड़ी आकर दफ्तर के सामने रुकी। चेहरे पर गुलाबी रंग लेपा हुआ, सूट पहने एक युवक गाड़ी का दरवाजा खोलकर लगभग पछाड़ खाते हुए बाहर निकला और जल्दी-जल्दी दफ्तर के फाटक के पास जाकर खड़ा हो गया। दूसरे ही क्षण पटल बाबू ने विल्नाहट सुनी, “कट !” और तभी निस्तब्धता को भेदकर जनता का कोलाहल गूंज उठा।

पटल बाबू के पास ही एक आदमी खड़ा था। उसने झुककर पटल बाबू से पूछा, “उस युवक को पहचानते हैं?”

काले रंग के यन्त्र की जैसी कोई चीज है। उसके गिदं कई व्यक्ति व्यस्तता के साथ चहल-कदमी कर रहे हैं। गेट के ठीक मुहाने पर, एक लोहे के तिपाये डण्डे के ऊपर लोहे का एक दूसरा डण्डा आड़ा-आड़ी मुलाया हुआ है और उसके किनारे मधुमक्खी के छत की जैसी कोई चीज लटक रही है। इसके अलावा तीसरे व्यक्ति इधर-उधर खड़े हैं। पटल बाबू ने देखा, उन लोगों के बीच गैर बंगाली भी हैं, किन्तु उन आदमियों को कौन-सा काम करना है, इस बात का वे अनुमान नहीं लगा सके।

नरेश बाबू कहां हैं ? सिवा उनके पटल बाबू को कोई पहचानता नहीं है।

पटल बाबू घटकते कलेजे से दफ्तर के फाटक की ओर चल पड़े।

बैशाख का महीना। खादी का बन्द गले का कोट बड़ा ही भारी लग रहा था। पटल बाबू को अपने गले के चारों तरफ पसीने की बूंदों का अनुभव हुआ।

“अतुल बाबू, इधर आइए।”

अतुल बाबू ? पटल बाबू ने मुड़कर देखा। दफ्तर के वरामदे के एक खम्भे के पास खड़े होकर नरेश बाबू उन्हीं को पुकार रहे हैं। भले आदमी ने गलत नाम से पुकारा है। ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है। एक ही दिन का परिचय है। पटल बाबू ने आगे बढ़कर नमस्कार किया और बोले, “लगता है, मेरा नाम आपने ठीक-ठीक नहीं लिखा है। नाम है शीतलकांत राय। लोग अलबत्ता पटल बाबू के नाम से ही मुझे जानते हैं। वियेटर में भी इसी नाम से जानते थे।”

“ओ, आप तो समय के बड़े ही पाबन्द हैं।”

पटल बाबू मुमकराये।

“ती बर्य तक हडसन किम्बरली में मैंने काम किया है। एक दिन भी लेट नहीं हुआ था। नॉट ए सिगल डे।”

“ठीक है। आप एक काम करें। बहा छाह में जाकर थोड़ी देर प्रतीक्षा कीजिए। मैं इधर का काम आगे बढ़ा लू।”

तिपाये यन्त्र के पास से एक आदमी ने पुकारा, “नरेश !”

“सर ?”

“वे क्या हम लोगों के आदमी हैं ?”

“हां, सर। आप ही... यानी धक्के का जो मामला है...”

“अच्छा। ठीक है। अभी जगह क्लियर करो। शॉट लेना है।”

पटल बाबू दफ्तर के पास ही पान की एक दुकान के छाजन के तले जाकर खड़े हो गए। फिल्माने का काम उन्होंने पहले नहीं देखा था।



उनके लिए सब कुछ नया जैसा है। थियेटर से इसकी कोई समानता नहीं। यहां के आदमी कितनी मेहनत कर रहे हैं! उम वजनदार यंत्र को अपनी पीठ पर लादे एक इक्कीस-बाइस वर्ष का नौजवान इधर से उधर रख रहा है। यंत्र का वजन कम-से-कम बीस-पच्चीस सेर होगा ही।

परन्तु उनका संवाद कहां है? अब ज्यादा वक्त नहीं है। फिर भी पटल बाबू को यह मालूम नहीं है कि उन्हें क्या कहना है।

अचानक पटल बाबू को घबराहट महसूस होने लगी। वे आगे बढ़कर जाएं? वह रहे नरेश बाबू! एक बार जाकर उनसे पूछ लेना क्या उचित नहीं होगा? पार्ट चाहे छोटा हो या बड़ा, अच्छी तरह से करने के लिए उन्हें तैयारी करनी ही है। नहीं तो इतने-इतने लोगों के बीच भूल होने से उन्हें अजीब स्थिति में पड़ना होगा। बीस बरसों से उन्होंने अभिनय नहीं किया है।

पटल बाबू आगे बढ़ रहे थे, तभी जोरो की एक आवाज सुनकर वे ठिठककर खड़े हो गए।

“साइलेन्स।”

उसके बाद नरेश बाबू की आवाज सुनाई पड़ी, “अब शॉट लिया जाएगा। आप लोग कृपया चुपचाप रहें। बातचीत मत करें, अपनी जगह से हटें नहीं, कमरे की ओर बढ़ें नहीं।”

उसके बाद पहले वाले आदमी की आवाज फिर से सुनाई पड़ी, “साइलेन्स! टेकिंग!” अबकी पटल बाबू की आंखें उस आदमी पर पड़ी। मध्यवयस्क, मोटा-सोटा वह आदमी तिपाये यंत्र के सामने ही खड़ा है। गले के एक चेन में दूरबीन जैसी कोई चीज लटक रही है। वही क्या डायरेक्टर है? कितने आश्चर्य की बात है कि उन्होंने डायरेक्टर तक का नाम नहीं पूछा।

अबकी एक-एक कर बहुत-सी तेज आवाजें पटल बाबू के कानों में आईं, “स्टार्ट साउण्ड! रनिंग! एक्शन!”

‘एक्शन’ कहते ही पटल बाबू ने देखा, चौराहे से एक गाड़ी आकर दफ्तर के सामने रुकी। चेहरे पर गुलाबी रंग लेपा हुआ, सूट पहने एक युवक गाड़ी का दरवाजा खोलकर लगभग पछाड़ खाते हुए बाहर निकला और जल्दी-जल्दी दफ्तर के फाटक के पास जाकर खड़ा हो गया। दूमरे ही क्षण पटल बाबू ने बिल्नाहट सुनी, “कट!” और तभी निस्तब्धता को भेदकर जनता का कोलाहल गुंज उठा।

पटल बाबू के पास ही एक आदमी खड़ा था। उसने भुंककर पटल बाबू से पूछा, “उम युवक को पहचानते हैं?”

पटल बाबू ने कहा, "नहीं।"

यह बोला, "बचलकुमार है। इस युवक ने बड़ी ही जल्दी तरक्की की है। एक ही साय चार-चार फिल्मों में अभिनय कर रहा है।"

पटल बाबू बहुत कम मिनेमा देखा करते हैं, मगर बचलकुमार का नाम दो-चार बार सुन चुके हैं। कटि बाबू ने सम्भवतः एक दिन इसी युवक की प्रशंसा की थी। युवक ने बड़ा ही अच्छा मेकअप किया है। अगर उसे विलायती सूट के बदले धोती-चादर पहना दिया जाए और मयूर की पीठ पर सवार करा दिया जाए तो बिलकुल कार्तिक जैसा दीखेगा। काचरा-पाढा के मनोतोष उर्फ चिनु का चेहरा बहुत-कुछ ऐसा ही था। चिनु महिला का पाठ बड़ा ही अच्छा करता था।

पटल बाबू अपने पास के व्यक्ति की ओर भुंककर बुदबुदाए, "हायरक्टर का नाम क्या है, साहब?"

उम आदमी ने अचकचाकर कहा, "वरेन मल्लिक। एक-एक कर उनकी तीन तसवीरों ने हिट किया है।"

खुर। कुछ आवश्यक बातों की जानकारी प्राप्त ही गई। वरना अगर पत्नी पछती कि किसकी तसवीर में किस व्यक्ति के साथ अभिनय कर आए हों तो पटल बाबू को कठिनाई का सामना करना पड़ता।

नरेश मिट्टी की प्पाली में चाप लिए पटल बाबू की ओर आए।

"आइए सर, गने को ज़रा तर कर लीजिए। अभी-अभी आपकी पुकारा जाएगा।"

"मेरा संवाद अब भी दे देते तो..."

"संवाद? मेरे साथ आइए।"

नरेश तिपाये घन की ओर बढ़ा। उसके साथ पटल बाबू थे।

"ए शशांक!"

एक हाफ पेंट पहने युवक नरेश की ओर आया। नरेश ने उससे कहा,

"आप अपना संवाद माग रहे हैं। किसी कागज में लिखकर दे दो।

वही धक्का के बारे में..."

शशांक पटल बाबू की ओर आया।

"आइए, भाई साहब... ए ज्योति, ज़रा अपना कलम दो। भाई साहब को उनका संवाद दे दो।"

ज्योति ने अपनी जेब से कलम निकाल कर शशांक की ओर बढ़ाया। शशांक ने अपने हाथ की कापी से एक सादा पन्ना फाड़ लिया और कलम से उस पर कुछ लिखकर पटल बाबू को दिया।

पटल बाबू ने कागज ध्यान से देखा। उस पर लिखा था: 'आह!

आह !”

पटल बाबू का सर चकराने लगा। अगर कोट खोलकर रख दें तो अच्छा रहे। एकाएक तपिश धरदारत के बाहर ही गई है।

शाशांक ने कहा, “आप तो विनकुल गुमसुम हो गए भाई साहब ? क्या कठिन लग रहा है ?”

फिर क्या ये लोग मजाक कर रहे हैं ? तमाम बातें एक बहुत बड़ा परिहाम है ? उनके जैसे निरोह और निर्विवादी आदमी को बुलाकर इतने बड़े शहर के इतने बड़े रास्ते के बीच मजाक किया जा रहा है ? आदमी क्या इतना निष्ठुर हो सकता है ?

पटल बाबू ने धुम्के हुए स्वर में कहा, “बात क्या है, समझ मे नहीं आ रही।”

“क्यों ?”

“सिर्फ ‘आह’ ? और कोई बात नहीं ?”

शाशांक ने अचकचाकर कहा, “आप क्या कह रहे हैं भाई साहब ? मही क्या कम है ? यह तो रेगुलर स्पीकिंग पार्ट है। वरेन मलिक की तसवीर में स्पीकिंग पार्ट ‘आप कह क्या रहे हैं ! आप तो भाग्यशाली आदमी हैं, साहब ! जानते हैं, हम लोग की इस तसवीर में आज तक लगभग डेढ़ सौ आदमी पाटे कर चुके हैं। उन्हें एक भी शब्द कहने का मौका नहीं मिला। वे सिर्फ कमरे के सामने से चहलकदमी करके चले गए हैं। बहुतों को चहलकदमी करने का भी मौका न मिला, वे सिर्फ कमरे के सामने मात्र खड़े रहे हैं। किसी-किसी का चेहरा दिखाई तक न पड़ा है। आज भी देखिए—जो लोग लैप-पोस्ट के पास खड़े हैं, वे आज के दृश्य में हैं, लेकिन उनमें से किसी को कुछ बोलना नहीं है। यहाँ तक कि हम लोगों के जो नायक हैं—चंचलकुमार—उनका भी आज कोई डायलॉग नहीं है। मात्र आपको ही बोलना है।”

अब ज्योति नामक युवक ने पटल बाबू के कंधे पर हाथ रखकर कहा, “सुनिए, भाई साहब, बात समझ लीजिए। चंचलकुमार इस दफ्तर के सबसे बड़े कर्मचारी हैं। सीन में हम लोग यही दिखा रहे हैं कि दफ्तर में कैशबॉक्स तोड़ने की खबर पाकर वे हतभ्रम होकर दौड़ते हुए दफ्तर के अन्दर जा रहे हैं। ठीक उसी वक्त सामने पड़ जाते हैं आप यानी एक राहगीर। घबका लगता है। घबका लगने पर आप ‘आह’ कहते हैं और चंचलकुमार आपकी ओर बिना ध्यान दिये दफ्तर में घुस जाते हैं। आपको अनदेखा करने के कारण उसकी मानसिक भावना प्रस्फुटित हो उठती है। यह बात कितनी महत्वपूर्ण है, आप सोचकर देखें।”

राशांक ने आगे बढ़कर कहा, "मुन लिया न ! अब ज़रा उस तरफ जाइए । इधर भीड़ लगाने से काम में असुविधा होगी । अब एक शॉट और है, उसके बाद आपको बुलाया जाएगा ।"

पटल बाबू आहिस्ता-आहिस्ता पान की दुकान की ओर हट गए । छावनी के नीचे पहुँचने के बाद उन्होंने कागज़ की ओर तिरछी निगाहों से देखा । फिर यह देखकर कि कोई उनकी ओर देख रहा है या नहीं, उन्होंने कागज़ को मोड़-माड़कर नाली की ओर फेंक दिया ।

"आह !"

पटल बाबू के कलेजे से एक उसांस बाहर निकल आई ।

केवल एक ही बात—बात भी नहीं, शब्द : आह !

गरमी असह्य लग रही है । देह का कोट एक मन भारी लग रहा है । अब खड़ा रहना नहीं हो सकेगा; पैर अवश होते जा रहे हैं ।

पटल बाबू आगे बढ़कर पान की दुकान की दूसरी तरफ दपतर के दरवाजे की सीढ़ी पर बैठ गए । साढे नौ बज रहे हैं । रविवार की सुबह कराली ब्राबू के मकान में शगमा संगीत हुआ करता है । पटल बाबू वहाँ नियमित रूप से जाकर सुना करते हैं । उन्हें अच्छा लगता है । वही चले जाए क्या ? जाने से हानि ही क्या है ? इन बेकार और नीच आदमियों के संसर्ग में रविवार का प्रातःकाल बरबाद करने से लाभ ही क्या है ? साथ ही साथ अपमान का बोझ भी ढोना होगा ।

"साइलेन्स !"

घटत ! तुम्हारा साइलेन्स जहन्नुम में जाए ! जितना काम नहीं है, उससे बत्तीस गुना अधिक दिखावट और ढोंग कर रहे हो ! इससे तो थियेटर का काम...

थियेटर...थियेटर ..

बहुत दिनों की एक घुघली-सी स्मृति पटल बाबू के मन में तैरने लगी । एक गभीर, संयत परन्तु सुरीले कठस्वर के द्वारा कहे गए कुछ मूल्यवान् उपदेश... "एक बात ध्यान में रखना पटल । तुम्हें चाहे जितना ही छोटा पार्ट क्यों न दिया जाए, यह जान लो कि इसमें अपमान की कोई बात नहीं है । कलाकार की हैसियत से तुम्हारा कर्तव्य यह है कि उस छोटे-से पार्ट से भी तुम रस की अन्तिम बुद निचोड़कर उसे सार्यक बना दो । थियेटर का काम है दस आदमी का मिल-जुलकर काम करना । सभी की सफलता पर नाटक की सफलता निर्भर करती है ।"

पकड़ाशी जी ने पटल बाबू को यही उपदेश दिया था । गगन पकड़ाशी ने । वे पटल बाबू के नाट्य गुरु थे । गगन पकड़ाशी पहुँचे हुए अभिनेता थे,

पर उनमें दंभ का लेश भी न था। वे प्रथितुल्य व्यक्ति थे और कलाकारों में सर्वश्रेष्ठ कलाकार।

पकड़ाशी जो और एक बात कहा करते थे : "नाटक का एक-एक शब्द वृक्ष का एक एक फल हुआ करता है। हर कोई उस फल के समीप नहीं पहुँच पाता है। जो पहुँच भी जाते हैं वे भी संभवतः उनका छिलका उतारना नहीं जानते। असली काम है तुम्हारा—अभिनेता का। तुम्हें जानना है कि किस तरह उस फल को तोड़कर उसका छिलका उतारा जाए और उससे रस निचोड़कर लोगों के बीच परोसा जाए।"

गगन पकड़ाशी की बातें याद आते ही पटल बाबू का मस्तक अपने आप झुक गया।

उनके आज के पार्ट में क्या वास्तव में कुछ नहीं है? एक ही शब्द उन्हें बोलना है : 'आह'। किन्तु एक ही शब्द को ही क्या अनदेखा कर दिया जाए?

आह, आह, आह, आह, आह—पटल बाबू अलग-अलग स्वरों में इस शब्द को दुहराने लगे। दुहराते-दुहराते उन्होंने धीरे-धीरे एक आश्चर्यजनक वस्तु का आविष्कार किया। इस 'आह' शब्द को ही अलग-अलग स्वरों में कहने से मनुष्य के मन की अलग-अलग स्थितियाँ व्यक्त होती हैं। चिकोटी काटने से आदमी जिस तरह आह कहता है, गरमी के दिनों में शवंत पीने से उस तरह का आह नहीं कहता। ये दो 'आह' उच्चारण बिलकुल अलग-अलग कोटि के हैं। फिर अचानक कान को अगर सहलाया जाए तो एक दूसरी ही तरह की आह निकलती है। इसके अलावा और कितनी ही तरह की आह है—सवी सांस की आह, तिरस्कार की आह, अभिमान की आह, द्रुत स्वर में बोली गई आह, विलंबित स्वर में कही गई आ-ह, चिल्लाकर कही गई आह, धीमे स्वर में बोली गई आह। फिर 'आ' को धीमे स्वर में कहकर 'ह' को जोरो से कहना। पटल बाबू को लगा, वे इस एक शब्द को लेकर एक संपूर्ण शब्दकोश निरूपित सकते हैं।

वे इतने निरुत्साह क्यों हो रहे थे? यह एक शब्द ही जैसे सोने की खान है। बड़े-बड़े अभिनेता इस एक शब्द से ही दाखी मार ले सकते हैं।

"साइलेन्स!"

डायरेक्टर खोरों से चिल्लाया। पटल बाबू ने देखा, ज्योति उनके इर्द-गिर्द खड़ी भीड़ को हटा रहा है। ज्योति से एक बात कहनी है। पटल बाबू तेज कदमों से उसके पास चले गए।

"मेरा काम होने में अब कितनी देर है, भाई?"

आप इतना धवरा क्यों रहे हैं, भाई साहब? इन मामलों

रखने की जरूरत पड़ती है। आधा घंटा और इन्तजार कीजिए।”

“जरूर-जरूर। मैं इन्तजार करूंगा ही। मैं अगल-बगल ही रहूंगा।”

“यहां मे चले मत जाइएगा।”

ज्योति चला गया।

“स्टार्ट साउण्ड।”

पटल बाबू दबे पांवों रास्ता पार कर दूसरी दिशा की एक गली के अन्दर चले गए। अच्छा ही हुआ। कुछ वक़्त मिल गया है। जब ये लोग रिहर्संस वगैरह की परवा नहीं करते, तो वे खुद अपने पार्ट का थोड़ा-बहुत अभ्यास क्यों न कर लें। गली निर्जन है। एक तो ऐसा मुहल्ला है जहां दफ्तर ही दफ्तर हैं। यहां रहने वालों की संख्या कम है और फिर आज रविवार है। जो भी आदमी ये वे फैंराडे हाउस की तरफ तमाशा देखने चले गए हैं।

पटल बाबू खंखारकर आज के खास दृश्य के खास 'आह' शब्द को रटने लगे। इसके साथ ही वे काच की एक खिडकी में अपनी छाया देखते हुए इसका अभ्यास करने लगे कि अचानक धक्का लगने पर चेहरा किस तरह विकृत हो सकता है, हाथ किनना टेढ़ा होकर ऊपर की तरफ कितना उठ सकता है, उंगलियां कितनी अलग हो सकती हैं और पावों की क्या हालत हो सकती है।

ठीक आधे घंटे के बाद पटल बाबू की बुलाहट हुई। अब उनके मन में निरुत्साह का कोई भाव नहीं है। उनके मन में उद्विग्नता भी दूर हो गई है। रह गई है तो केवल एक दबी हुई उत्तेजना और रोमांच। पचीस वर्ष पहले मंच पर अभिनय करने के समय, एक बड़े दृश्य में उतरने के पहले, जिस भाव का उन्हें अनुभव होता था, वही भाव रह गया है।

डायरेक्टर वरेन मल्लिक ने पटल बाबू को अपने पास बुलाकर कहा, “बात आपकी समझ में आ गई है?”

“जी हां।”

“ठीक है। मैं पहले कहूंगा : स्टार्ट साउण्ड। उसके उत्तर में अन्दर से साउण्ड रेकार्डिस्ट कहेगा : रनिंग। यह कहते ही कैमरा चलना शुरू कर देगा। उसके बाद मैं कहूंगा : एक्शन। यह कहते ही आप उस खर्मे के पास से आना शुरू करेंगे। और नायक इस गाड़ी के दरवाजे से उस दफ्तर के फ़ाटक की ओर जाएगा। इस बात का अन्दाज़ लगा लीजिए कि फ़ुटपाथ के यही इसी जगह टकराहट होती है। नायक आपको अनदेखा कर दफ्तर में घुस जाएगा और आप ऊब के साथ आह कहकर फिर से चलना शुरू करेंगे।”







उनका आज का काम सचमुच अच्छा हुआ है। इतने दिनों तक बेकार रहने के बावजूद उनके अन्दर का कलाकार भोंधरा नहीं हुआ है। गगन पकड़ाशो आज उन्हें देखते तो सचमुच बड़े ही खुश होते। किन्तु यह बात क्या इन लोगों की समझ में आई है। डायरेक्टर वरेन मल्लिक यह बात समझ पा रहे हैं? मामूली इस काम को निर्दोष भाव से करने के लिए उनमें जो ललक है और जो परिश्रम किया है, उसका सम्मान ये लोग कर पाएँगे? उनमें यह सामर्थ्य है? शायद ये लोग आदमी बुलाकर काम कराते हैं और पैसा चुका कर मुक्त हो जाते हैं। रुपया ! कितना रुपया ! कितना रुपया ? पाँच, दस, पचीस ? उनको निश्चय ही रुपए का अभाव है परन्तु : आज जो आनन्द मिला है, उसके सामने पाच रुपए हैं ही क्या ? ...

दस मिनट के बाद जब नरेश पटल बाबू को खोजते हुए पान की दुकान पर पहुँचे तो वे मिले ही नहीं। यह क्या, वे क्या रुपया वगैर लिए चले गए ?

वरेन मल्लिक ने पुकारा, "घुप निकल आई है ! साइलेन्स ! साइलेन्स ! ... ऐ नरेश, चले आओ, भीड़ संभालो !"

## नीलकोठी का आतंक

मेरा नाम है अनिच्छ बॉस । उम्र उनतीस वर्ष । अभी तक मैंने शादी नहीं की है । पिछले आठ बरसों से मैं कलकत्ते के एक व्यवसायिक कार्यालय में नौकरी कर रहा हूँ । जितनी तनखा मिलती है उससे मेरा खर्च मजे से चल जाता है । मैं सरदार शंकर रोड में एक फ्लैट किराये पर लेकर रह रहा हूँ — दो मजिले पर दो कमरे हैं, दक्खिन का हिस्सा धुला हुआ है । दो वर्ष पहले एक एम्बेसेडर गाड़ी खरीदी है । उसे मैं खुद ही चलाता हूँ । दफ्तर के बाहर थोड़ा-बहुत साहित्यिक काम किया करता हूँ । मेरी तीनों कहानियाँ बंगला की मासिक पत्रिका में छप चुकी हैं, जाने मुने व्यक्तियों से प्रशंसा भी प्राप्त हुई है । लेकिन इतनी बात मुझे मालूम है कि केवल लिखकर निर्वाह करना मेरे वश की बात नहीं है । पिछले कई महीने से कुछ भी लिख न पाया हूँ, तब हाँ कितानों काफ़ी संख्या में पढ़ गया हूँ । सभी पुस्तकें बंगाल की नील की खेती से सम्बन्धित हैं । इस विषय में मुझे एक अधिकारी कहा जा सकता है । कब अफ़ेजो ने आकर हमारे देश में नील की खेती की शुरुआत की, हमारे गांवों के निवासियों पर उन्होंने कितना अत्याचार किया, किस तरह नील-विद्रोह हुआ और अन्त में किस तरह जर्मनी के द्वारा कृत्रिम उपायों से नील तैयार किए जाने के फलस्वरूप इस देश से नील की खेती विदा हो गई—यह सब मेरी ज़बान पर है । जिस जानलेवा अनुभवों के कारण मेरे मन में नील से सम्बन्धित कुतूहल पैदा हुआ, उसे बताने के लिए ही आज लिखने बैठा हूँ ।

यहाँ पहले अपने बचपन की बातें बताना जरूरी है ।

मेरे पिताजी मुनेर के नामी डॉक्टर थे । वही मेरा जन्म हुआ और वही मेरी प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा । मेरे एक भाई मुझ से पांच बरस बड़े हैं । उन्होंने विलायत जाकर डॉक्टरी की परीक्षा पास की और अभी लंदन के पास ही गोल्डसं ग्रीन नामक स्थान के अस्पताल में काम कर रहे हैं । देश वापस आने के प्रति उनमें कोई आग्रह नहीं दीखता है । जब मेरी उम्र सोलह वर्ष थी, मेरे पिताजी का देहान्त हो गया । उसके कुछ महीने बाद मैं अपनी माँ के साथ अपने बड़े मामा के घर कलकत्ता चला आया । मामा के घर पर ही रहकर मैंने सेन्ट जिवियर्स से बी० ए० पास किया । उसके

बाद कुछ दिनों तक मेरे मन में साहित्यिक बनने की इच्छा रही, परन्तु मां के धमकाने पर नौकरी के लिए कोशिश करनी पड़ी। मामा की पैरवी में ही नौकरी मिली, तब हां उमका मुझे भी कुछ श्रेय है। छात्र की हैसियत से मेरा रेकार्ड अच्छा रहा है, मैं फटाफट अंग्रेजी बोल सकता हूँ। इसके अलावा मुझमें आत्मनिर्भरता और चुस्ती है। इन दो चीजों ने विश्व विद्यालय में निश्चय ही मेरी सहायता की है।

मुग़ेर के अपने वचन की बातें कहूँ तो मेरे व्यवित्त्य के एक पहलू को समझने में सहायता मिलेगी। कलकत्ते में लगातार ज्यादा दिनों तक रहने पर मैं थकावट महसूस करने लगता हूँ। यहां इतने आदमियों की भीड़-भाड़, ट्रामों की घर्घराहट, शोरगुल और जीवन-यापन की समस्याएँ हैं। बीच-बीच में इच्छा होती है, इन सब चीजों से छुटकारा पाकर बाहर चला जाऊँ। अपना मकान खरीदने के बाद कई बार ऐसा कर भी चुका हूँ। छुट्टियों में कभी डायमंड हारबर, कभी पोर्टकनिंग और कभी दमदम के रास्ते से हमनावाद तक घूम-फिर आया हूँ। हर बार अकेले ही गया हूँ, क्योंकि इस तरह की आउटिंग के प्रति उत्साह दिखाने वाला कोई आदमी मुझे नहीं मिला है।

इससे यह समझ में आ जाएगा कि कलकत्ता शहर में मेरे नाममात्र के भी मित्र नहीं है। इसीलिए प्रमोद का पत्र पाकर मेरा मन प्रसन्नता से भर गया। प्रमोद मुग़ेर में मेरा सहपाठी रह चुका है। जब मैं कलकत्ता चला आया तो लगभग चार बरसों तक हमारे बीच पत्राचार चलता रहा। उसके बाद शायद मैंने ही पत्र लिखना बन्द कर दिया था। एक दिन ज्योंही मैं दफ़्तर से वापस आया, मेरे नौकर गुहदास ने मुझे एक पत्र दिया और बताया कि मामा जी के घर से आदमी आया था और यह पत्र दे गया है। लिफाफे पर की लिखावट पर नज़र पड़ते ही मैं समझ गया कि यह प्रमोद का ही पत्र है। उसने दुमका से लिखा है : जगल-विभाग में काम कर रहा हूँ...क्वार्टर मिला है...सात दिनों की छुट्टी लेकर चले आओ...

छुट्टियाँ बाकी थी, अतः मैं जितनी जल्दी हो सकता है, दफ़्तर के कामों को सहेजकर पिछले 27 अप्रैल को (तारीख़ आजीवन याद रहेगी।) सरो-मामान बाध कर और कलकत्ते की झुंझुंको दरकिनार कर दुमका के लिए रवाना हो गया।

प्रमोद ने अवश्य ही यह बात नहीं लिखी थी कि मैं मोटर से दुमका जाऊँ। बंसा विचार मैंने ही किया था। दो सौ मील का पथ था। ज्यादा में ज्यादा पांच घंटे लगते। सोचा, दस बजते न बजते खाना खाकर निकल पड़ूंगा और सूर्यास्त के पहले ही पहुंच जाऊंगा।

काम की धुल्लूआत ही में एक बाधा उपस्थित हो गई। रमोई ठीक समय पर पक चुकी थी, मगर चावल खाकर ज्यो ही मूह में पान डालने जा रहा था कि पिताजी के पुराने मित्र मोहित चाचा आ गए। एक तो वे यों ही दबग आदमी हैं और उस पर दस बरसों के बाद मुलाकात हुई थी। जबान खोलकर यह नहीं कह सका कि मैं जल्दीवाजी में हूँ। उन्हें चाय पिलानी पड़ी, फिर एक घंटे तक उनके सुख-दुःख की कहानी सुननी पड़ी।

मोहित चाचा को विदा कर और गाड़ी पर असबाब लादकर जैसे ही गाड़ी पर चढ़ने जा रहा हू कि मेरे एकमजिले के किराएदार भोला बाबू अपने चार बर्ष के लडके का हाथ घामे घर की ओर लौटते हुए दीख पड़े। मुझ पर नज़र पड़ते ही बोल उठे, “अकेले-अकेले कहा जा रहे हैं ?”

मेरा जवाब सुनकर उन्होंने उद्विग्नता के साथ कहा, “इतनी दूर मोटर से अकेले जाइएगा ? कम से कम इस ट्रिप के लिए आपको किसी ड्राइवर का इन्तज़ाम करना चाहिए था।”

मैंने कहा, “चालक की हैसियत से मैं एक होशियार आदमी हूँ। मेरे जतनो के कारण गाड़ी भी करीब-करीब नई है, इसलिए चिन्ता की कोई बात नहीं है।” उन्होंने ‘वेस्ट आफ लक’ कहा और अपने लडके का हाथ घामे घर के अन्दर चले गए।

गाड़ी में बँठकर स्टार्ट करने के पहले मैंने अपनी कलाई-धड़ी की ओर देखा। पीने ग्यारह बज चुके थे।

मैं हायडा होकर नहीं, वाली ब्रिज का रास्ता पकड़कर चला, फिर भी चंदन नगर पहुँचने में डेढ़ घंटे का समय लग गया। तीस मील की ही इस दूरी को तय करने में इतना ऊबाऊ और अरोमाचकारी रास्ता मिलता है कि उत्साह ठंडा पड़ जाता है। किन्तु उसके बाद ही शहर को पीछे छोड़कर गाड़ी जब मैदान से होकर गुज़रती है तो वह रास्ता जादू की तरह काम करता है। मन तब कहता है। इसी के लिए आया हूँ। इतने दिनों तक कहाँ था चिमनी के घुएँ से वर्जित यह मसृण आकाश ! कहाँ थी मिट्टी की सुगन्ध से मिली हुई मन को माहनेवाली यह मीठी वायु।

डेढ़ बजे जब वर्धमान के आसपास पहुँचा, मुझे भूख महसूस हुई। साथ में सतरा था, पलास्क में गरम चाय थी, मगर मन कुछ और ही चाह रहा था। सड़क के किनारे ही स्टेशन है। गाड़ी रोककर एक रेम्तरा में गया। वहाँ मैंने दो टोस्ट, एक आमलेट खाए और एक कप कॉफी पी। उसके बाद मैं पुनः रवाना हुआ। अब भी मुझे एक सौ तीस मील की दूरी तय करनी है।

वर्धमान से पचीस मील की दूरी पर पानागढ़ है। वहाँ से ग्रैंड ट्रंक रोड छोड़कर इलाम बाजार का रास्ता पकड़ना है। इलाम बाजार से सिउड़ी जाना होगा, मिउड़ी से मसान जोड़ और उसके बाद दुमका।

पानागढ़ के मिजेटी कैंप नज़र आने लगा था कि उसी वक़्त मेरी गाड़ी के पीछे की तरफ से बलून फटने की जैसी आवाज़ आई और तभी मेरी गाड़ी एक किनारे थोड़ी-सी झुक गई। कारण सहज ही समझ में आ गया।

गाड़ी से उतरकर मैंने सामने की ओर देखा। शहर अब भी कई मील दूर था। कहीं आमपास ही गाड़ी मरम्मत हो जाए, इसकी उम्मीद मुझे छोड़नी पड़ी। मेरे साथ स्टेपनी थी। जैक से गाड़ी उठाकर, फटे टायर को खोलकर उसकी जगह नया टायर लगाना मेरी सामर्थ्य के बाहर की बात नहीं थी। फिर भी ऐसी स्थिति में मेहनत करने की इच्छा नहीं हो रही थी। ग्रैंड ट्रंक रोड के बीच खड़ा होकर टायर लगाऊँ, मेरी बगल में सरसराती हुई गाड़ियाँ निकल जाएँ और वे मुझे हास्यास्पद स्थिति में देखें—यह बात मुझे कतई अच्छी न लग रही थी। लेकिन अब दूसरा कौन-सा उपाय है? दस मिनट तक इधर-उधर चहल-कदमी करने के बाद मैंने भगवान का नाम लिया और काम शुरू कर दिया।

नया टायर लगाकर और फटे टायर को कैरियर में रखकर जब खड़ा हुआ तो कभीज पसीने से तर हो चुकी थी। घड़ी में देखा, डार्क बज चुके थे। वातावरण में एक उमस का भाव था। एकाध घंटा पहले अच्छी हवा चल रही थी, हवा के झोंके से बमबारी हिलती-डुलती जैसी दीख रही थी। अभी चारों तरफ एक ठहराव जैसा भाव है। गाड़ी पर चढ़ते हुए पश्चिम के आकाश के नीचे, दूर के पेड़-पौधों के शिखरों पर नील छोटे रंग का आभास मिला। बादल छाए हैं। आधी के बादल है? काल वैशाखी? सोचने से कोई लाभ नहीं है। स्पीडो मीटर की सुई को और आगे बढ़ाना होगा। पलास्क खोलकर मैंने गरम चाय पी और फिर से रवाना हो गया।

इलाम बाजार पार करते न करते आंधी का झोंका आ गया। घर में बैठकर जिम चीज का प्रमत्नता के साथ उपभोग कर चुका हूँ, जिमके साथ ताल-मेल बिठाकर रवीन्द्रनाथ की कविता की आवृत्ति कर चुका हूँ, उनके संगीत को गा चुका हूँ—वही चीज कोलातार की मडक पर चलती हुई गाड़ी में कितनी विभीषिकाओं को सृष्टि कर सकती है, उसकी मैंने तक न की थी। और, बेकार की चीजें मैं कभी वरदासत नहीं कर पाता

'मुझे वह प्रकृति की शैतानी जैसी लगती है। असहाय आदमी से निष्ठुर मजाककर उसे बदतर स्थिति में डालने का यह कौसा खेल है ! बिजली चमक रही थी और बादलों के दमामे पर चोटें पड़ रही थी। कभी-कभी लग रहा था, मेरी इस निरीह एम्बेसेडर गाड़ी को लक्ष्य बनाकर बिजली के तीर छोड़े जा रहे हैं और अगर बादल ज़रा सावधानी से काम करे तो लक्ष्य घेघ हो ही जाएगा।

इस दुर्योग के दौरान जब सिउड़ी पारकर मैं मसान जोड़ की सड़क पर पहुंचा हू कि तभी एकाएक विस्फोट की जैसी आवाज हुई। उसे किसी भी हालत में बचपाठ नहीं बहा जा सकता। समझ गया, मेरी गाड़ी का एक दूसरा टायर नाकाम हो चुका है।

मैंने उम्मीद छोड़ दी। मूसलाधार बारिस शुरू हो गई है। घड़ो साढ़े पांच बजा रही है। पिछले बीस मील तक स्पीडोमीटर की सुई को पन्द्रह से बीस के बीच रखना पड़ा है। वरना अब तक मसान जोड़ के पार पहुंच जाता। कहां आ पहुंचा हू? सामने की ओर देखने पर बात समझ में नहीं आती है। शीशे पर जैसे भरना बह रहा हो। वाइपर सप-सप आवाज कर रहा है, मगर उसे काम के बदले खेल ही कहा जा सकता है। नियमतः अप्रैल महीने में अब भी सूर्य का प्रकाश रहना चाहिए था, मगर भाव देखने से लगता है कि रात हो चुकी है।

अपनी दाहिनी ओर के दरवाजे को ज़रा अलग कर मैंने बाहर की ओर ताका। जो कुछ दीख पड़ा, उससे लगा, आसपास चाहे घनी बस्ती न हो मगर दो-चार पक्के मकान पेड़-पौधों के पीछे खरूर हैं। गाड़ी से उतरकर ज़रा इधर-उधर घूमकर देख आऊ, इसका उपाय नहीं है। तब हां, न देखने पर भी जो समझ में आता है वह यह कि एकाघ मील के दरमियान बाजार या दुकान नामक चीज नहीं है।

मेरे पास अब दूसरा टायर भी नहीं है।

पन्द्रह मिनटों तक गाड़ी में बैठे रहने के बाद मन में एक सवाल पैदा हुआ - इतनी देर में न तो कोई गाड़ी और न ही कोई आदमी मेरी गाड़ी के पास से गुज़रा। फिर क्या मैं गलत रास्ते पर चला आया हूँ? मेरे साथ सड़क का नक्शा है। सिउड़ी तक मैं ठीक ही आया था। मगर उसके बाद अगर गलत रास्ते पर मुड़ गया होऊँ तो? इस मूसलाधार वृष्टि में ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है।

अगर गलती ही हो गई हो तो यह कोई अफ्रीका या अमेरिका का जंगल नहीं है कि मैं दिग्भ्रमित हो जाऊँ। चाहे मैं जहाँ कहीं भी पहुंच गया हूँ, बीरभूम के अन्तर्गत ही हूँ और शांति निकेतन के पचासेक मील दूरी के बीच

ही हूँ। बारिश यमते ही सारी मुश्किलें आसान हो जाएंगी—यहां तक कि एकाध मील की दूरी में ही गाड़ी भरभरमत करनेवाली कोई दुकान भी मिल जा सकती है।

जेब से विल्स सिगरेट का पैकेट और दियासलाई निकालकर मैंने मिगरेट सुलगाई। भोला बाबू की बातें याद आ गईं। वे अवश्य ही भुवत-भोगी रह चुके हैं अन्यथा इतना सही उपदेश देते ही क्यों? भविष्य में...

‘वै-वै-वै-वै!’

मुझे तन्द्रा जैसी आ गई थी, हॉर्न की आवाज सुनकर चौकन्ना होकर बैठ गया। बारिश थोड़ी कम हुई है मगर गहरा अंधेरा फैल गया है।

‘वै-वै-वै-वै!’

मैंने पीछे की तरफ मुड़कर देखा। एक लॉरी आकर खड़ी हो गई है। हॉर्न क्यों बजा रहा है? मैं क्या पूरी सड़क पर दखल जमाए हूँ?

मैं दरवाजा खोलकर नीचे उतरा। लॉरी की कोई गलती न थी। टायर फटने के वक़्त मेरी गाड़ी ज़रा मुड़कर करीब-करीब आधी सड़क को रोककर खड़ी है। लॉरी के पार होने का रास्ता बाकी नहीं बचा है।

“गाड़ी साइड में कीजिए।”

भायद मुझे असाहाय हालत में पाकर पंजाबी ड्राइवर उतरकर नीचे आया।

“क्या हुआ?—पंचर?”

मैंने फ्रांसीसी कायदे से कंधों को ज़रा उचका कर अपनी शोचनीय स्थिति की सूचना दी। “आप अगर ज़रा हाथ लगाएं तो इसे एक किनारे कर आपके जाने के लिए जगह बना दूं।” मैंने कहा।

अब लॉरी से पंजाबी का सहायक नीचे उतर पड़ा। हम तीनों ने ठेल-ठालकर स्टीमरिंग को घुमाकर, गाड़ी को एक किनारे कर दिया। उसके बाद पूछनाछ करने पर पता चला कि यह दुमका जानेवाली सड़क नहीं है। मैं गलत रास्ते पर आ गया हूँ। तब हां, दुमका जानेवाली सड़क तीन मील से ज्यादा दूर नहीं है। आसपास गाड़ी भरभरमत करनेवाली कोई दुकान नहीं है।

लॉरी चली गई। जब उसकी घंघराहट ख़त्म हो गई, सन्नाटा रेंगने लगा और मेरी समझ में आ गया कि मैं घोर संकट के बीच फस गया हूँ।

आज रात दुमका पढ़च सकूँ, इसकी कतई संभावना नहीं है। यह रात किस तरह गुजरेगी, इसका कोई पता नहीं।

आसपास के डबरे में मेडकों ने कोरस सगीत गाना शुरू कर दिया है। कोई दूसरा वक़्त होता तो मिट्टी की सौंधी गंध से मन मचल उठता, लेकिन

ऐसी स्थिति में ऐसा क्यों होने लगा ?

मैं फिर गाड़ी के अन्दर चला गया। मगर इससे फायदा ही क्या है ? हाथ-पैर पसारकर आराम किया जा सके, एम्बेसेडर गाड़ी इसके लिए बिलकुल अनुपयुक्त होती है।

और एक सिगरेट जलाने ही जा रहा था कि अचानक बगल की खिड़की से एक हलकी जैसी रोशनी आकर स्टीयरिंग ह्वील पर पड़ी। मैंने फिर से दरवाजे को खोलकर गरदन बढ़ाकर बाहर की ओर ताका। पेड़ों की फाक से रोशनी का एक चौकोर टुकड़ा दीख रहा है। लगता है, खिड़की है। घुएं का कारण आग होती है और किरासन तेल की रोशनी का कारण आदमी हुआ करता है। आसपास कोई मकान है और उममे आदमी है।

मैं टार्च लेकर गाड़ी से उतरा। रोशनी ज्यादा दूर से नहीं आ रही थी। मेरे लिए यही उचित है कि आगे बढ़कर खोज-पड़ताल करूँ। एक रास्ता भी है। संकरा रास्ता। शायद वह रास्ता रोशनी की तरफ से उधर ही आता है जिसे रास्ते पर मैं हूँ। रास्ते के दोनों किनारे पेड़-पौधों की भरमार है और नीचे की तरफ झाड़-झंझाड़ है।

कोई परवा नहीं। मैं गाड़ी के दरवाजे का ताला बन्दकर खाना हो गया।

खाई-खंदको से यथासम्भव बचता हुआ, कीचड़ और पानी से होता हुआ जब एक इमली के पार पहुँचा तो वह मकान दीख पड़ा। उसे मकान कहना गलत ही होगा। एक या डेढ़ इंच की गयनी पर तीन की एक चाल है। अघखुले दरवाजे से कमरे के अन्दर मैंने एक जलती हुई लालटेन और उसके इर्द-गिर्द घुएं की लकीरें देखी।

एक छोट भी वहाँ दिखाई पड़ी।

“कोई है ?”

एक मध्यवयस्क नाटे कद के मूछोंवाले आदमी ने बाहर निकलकर टॉर्च की रोशनी की तरफ भौंह सिकोड़कर ताका। मैंने रोशनी नीचे झुका दी।

“कहाँ से आ रहे हैं बाबूसाहब ?”

अपनी दुर्घटना का संक्षेप में ब्यौरा देते हुए मैंने कहा, “यहाँ कहीं रात गुजारने का कोई इन्तजाम है। जितना भी पैसा लगे, दूंगा।”

डाक बंगले में ?

“डाक बंगले में ? वह कहाँ है ?”

यह प्रश्न मेरे मन में आते ही मुझे अपनी बेवकूफी का पता चला।

अभी तक सिर्फ लालटेन और टार्च की रोशनी की तरफ मेरी नजर रहने के कारण मैंने यह नहीं देखा था कि आसपास क्या-क्या चीजें हैं। अब



ज्योंही मैंने टॉच को मोड़कर अपनी बाईं ओर किया, एक खासा बड़े एक मजिले पुराने मकान पर मेरी दृष्टि पड़ी। उस मकान की तरफ इशारा करते हुए मैंने पूछा,

“यही डाक बंगला है ?”

“हां बाबू। लेकिन बिस्तर वगैरह नहीं है। वहां खाना भी नहीं मिलेगा।”

“बिस्तर मेरे साथ है। खाठ है न ?”

“है।”

“देख रहा हूं तुमने अपने घर में चूल्हा जला रखा है। तुम खुद जरूर ही खाना खाओगे ?”

वह हस पड़ा। उसके हाथों से सेंकी हुई मोटी रोटी और उसकी पत्ती के द्वारा बनाई गई उड़द की दाल में मेरा काम चल सकेगा ? मैंने कहा, “अच्छी तरह चल जाएगा। मैं हर तरह की रोटी खाने का अभ्यस्त हूँ और उड़द की दाल खाना तो मैं बेहद पसन्द करता हूँ।”

किसी जमाने में यह क्या रहा होगा, पता नहीं किंतु अब इसका नाम डाक बंगला ही है। तब ही, अंग्रेजों के जमाने का मकान है। कमरे का आकार बड़ा है और छत काफी ऊंचाई पर है। असबाब के नाम पर निवार की एक पुरानी खाट, एक किनारे एक मेज और उसके साथ एक टूटे हथके की कुर्सी है।

चौकीदार मेरे लिए एक लालटेन जलाकर मेज पर रखा गया। मैंने पूछा, “तुम्हारा नाम क्या है ?”

“सुखनराम, बाबूजी।”

“इस बंगले में कोई आदमी आता है या पहला व्यक्ति मैं ही हूँ ?”

“अरे राम-राम ! बहुत सारे आदमी आकर यहा ठहर चुके है। किसी ने कभी ऐसी बात नहीं कही है।”

इस बात से मैंने बहुत-कुछ राहत की सांस ली। चाहे भूत-प्रेत पर मैं विश्वास करू या न करू, किन्तु कम से कम यह तो जानता हूँ कि अगर इस डाक बंगले में भूत रहता है तो वह हमेशा ही रहेगा और अगर न रहता है तो कभी नहीं रहेगा। मैंने पूछा, “यह कितने दिनों का पुराना मकान है ?”

सुखनराम मेरा बिस्तर खोलते हुए बोला, “पहले यह नील कोठी थी। निकट ही नील की एक फेक्टरी भी थी। उसकी अब भी एक चिमनी खड़ी है। बाकी तमाम चिमनियां टूट गई हैं।”

मुझे इस बात का पता था कि किसी जमाने में इस इलाके में नील की खेती की जाती थी। बचपन में मैंने मुंगेर के वासपास भी नील की कोठियां

देखी थी ।

सुखनराम के द्वारा बनाई गई रोटियाँ और उड़द की दाल खाकर जब मैं निवार की खाट पर बिस्तर बिछाकर लेटा तो रात के साढ़े दम बज रहे थे । प्रमोद को मैंने तार भेजा था कि आज तीसरे पहर पहुँचूँगा । वह जरूर ही चिन्तित होगा । लेकिन अब इसके बारे में सोचने से कोई लाभ नहीं । ठहरने के लिए जगह मिल गई है और सो भी आसानी से । यह कम सौभाग्य की बात नहीं है । भविष्य में भोला बाबू के उपदेश का फलान करता रहूँगा । मुझे अच्छी सीख मिल चुकी है । तब हा, यह बात सही है कि यो ही सीखने की अपेक्षा ठेस खाकर सीखना कही अच्छा होता है ।

मैंने पास के वायरूम में लालटेन रख दी है । दरवाजे की फाँक से जितनी रोशनी आ रही है, वह पर्याप्त है । कमरे में ज्यादा रोशनी रहे तो मुझे नींद नहीं आती । गाड़ी से तमाम असबाबों को निकालकर उन्हें लॉक अप कर दिया है । यह बात मैं बेझिझक कह सकता हूँ कि आजकल कलकत्ते की सड़को पर गाड़ी छोड़कर आना जितना विपत्तिजनक है, गावों की सड़को पर सभ्यतः उससे कम विपत्ति की आशंका रहती है ।

बारिश की आवाज थम चुकी है । मेढको और झींगुरों के समवेत स्वर से रात मुखर हो उठी है । शहर का जीवन मुझसे इतनी दूर और इतने पीछे सरक गया है कि वह मुझे प्रागैतिहासिक पर्व जैसा लग रहा है । नीलकोठी ! ... दीन बघु मित्र के 'नील दर्पण' नाटक की याद आ गई । जिन दिनों मैं कॉलेज में पढ़ता था, अभिनय देखा था ... कर्नवालिस स्ट्रीट के किसी पेशेवर थियेटर में ...

एकाएक मेरी नींद टूट गई । कितनी देर के बाद टूटी, नहीं जानता । दरवाजे से चरमराने की जैसी आवाज आ रही है । यह बात मेरी समझ में आ जाती है कि बाहर से कुत्ता या मियार की तरह का कोई जानवर दरवाजे को नाखून से खरोच रहा है । कुछ मिनटों के बाद आवाज थम जाती है । फिर एक खामोशी रँगने लगती है ।

मैं अपनी आँखें बन्द करता हूँ । कुत्ते के भौंकने की आवाज से मेरी नींद बिलकुल उचट जाती है ।

बगाल के गावों के लावारिस कुत्तों की जैसी यह आवाज नहीं है । यह विलायती हाउण्ड की आवाज है । इस आवाज से मैं अपरिचित नहीं हूँ । मुंगेर में हम लोगों के मकान के दो मकान बाद मार्टिन साहब का मकान था, जहाँ से रात में ऐसी ही आवाज आया करती थी । इस इलाके में इस

तरह का कुत्ता कौन पालता है ? एक बार इच्छा हुई, उठकर जाऊँ और दरवाजा खोलकर देख लूँ। क्योंकि कुत्ते के भौंकने की आवाज डाक बंगले के बहुत ही निकट में आ रही है। इसके बाद लगा, सिर्फ एक कुत्ते के भौंकने से भायापन्ची करणा बेमानी है। उसमें तो अच्छा यही है कि एक बार फिर से सोने की कोशिश करूँ। रात के कितने बज रहे हैं ?

खिड़की से हलकी चांदनी आ रही है। लेटी हुई हालत में अपने बाएँ हाथ को चेहरे के सामने लाते ही मेरी छाती धड़क उठी।

मेरी कलाई से घड़ी गायब थी।

ऑटोमेटिक घड़ी जितना ही पहने हुए रहे, वह उतनी ही अच्छी रहती है, यही सोचकर मैं सोने के समय भी उसे कलाई से उतार कर नहीं रखता हूँ।

घड़ी कहाँ गई ? अन्ततः मैं क्या डाकुओं के डेरे पर पहुँच गया हूँ ? फिर मेरी गाड़ी का क्या होगा ?

तकिये के पास टटोलने पर टॉच नहीं मिला। मैं हड़बडाता हुआ बिस्तर से उठा। फर्श पर घुटने टेक कर मैंने खाट के नीचे की ओर देखा और अपने सूटकेस को भी गायब पाया।

मेरा दिमाग चकराने लगा। इसका कोई न कोई निदान ढूँढ़ना होगा। "चौकीदार ! " मैंने पुकारा।

कुछ भी जवाब न मिला।

बराबदे पर जाने के लिए ज्यों ही दरवाजे की ओर बढ़ा, अर्गला को मैंने उसी हालत में पाया, जिस हालत में उसे बन्द करके लेटा था। खिड़कियों में भी मलखें हैं। फिर चोर किधर से आया ?

दरवाजे की अर्गला खोलने के समय अपने हाथों पर आखें जाते ही मेरे मन में एक संदेह पैदा हुआ।

मेरे हाथों में दीवार का चूना लग गया है या पाउडर किस्म की कोई दूसरी चीज ? मेरे हाथ ऐसे सफेद-सफेद क्यों लग रहे हैं ?

मेरा माथा चकराने लगा। दरवाजा खोलकर मैं बाहर निकल आया। "छोकड़ा—र ! "

मुझे अपनी ही आवाज पहचानी जैसी नहीं लगी। उच्चारण भी नहीं। चाहे मैं मिशनरी स्कूल में पढ़ा हुआ क्यों न होऊँ। निखालिस अंग्रेजों की तरह मैं बंगला का कभी उच्चारण नहीं करता।

चौकीदार कहाँ है ? उसका घर कहाँ चला गया ? डाक बंगले के सामने मैदान फैला है। दूर तक घुघला जैसा मकान दीख रहा है, उसके पास चिमनी जैसा एक खंभा। चारों तरफ अस्वाभाविक सन्नाटा तैर

रहा है।

मेरा परिवेश बदल गया है।

मैं स्वयं भी बदल गया हूँ।

पसीने से लथपथ होकर मैं कमरे के अन्दर चला आया। मेरी आँखें अंधेरे से अभ्यस्त हो गई हैं। अब कमरे की हर चीज देख रहा हूँ। खाट है, परन्तु उस पर मच्छरदानी नहीं, हालांकि मैं मच्छरदानी लगाकर सोया था। जो तकिया मौजूद है, वह भी मेरा नहीं है। मेरा तकिया साधारण जैसा था, इस पर फूल-पत्तियों का बोर्डर है। खाट की दाहिनी ओर, दीवार के सामने वही मेज है, वही कुर्सी, किन्तु उनमें पुरानेपन का कोई चिह्न नहीं है। धुंधली रोशनी में भी उनकी वार्निश की हुई लकड़ी चमक रही है। मेज पर लालटेन नहीं, फूल-पत्तियों के शेडवाला किरोसिन लैंप है।

कमरे में और भी जो चीजें हैं, वे एक-एक कर दीख पड़ती हैं। एक कोने में दो टुक हैं। दीवार पर एक अलगनी है, जिसमें एक कोट और एक अजीब ही तरह की अपरिचित टोपी तथा एक चाबुक टंगे हैं। अलगनी के नीचे घुटनों तक का एक जोड़ा जूता है, जिन्हे गैलॉशस कहा जाता है।

चीजों को छोड़कर मैंने एक बार और अपने आपकी तरफ दृष्टि दौड़ाई। इसके पहले सिर्फ रेशमी कमीज पर मेरी दृष्टि गई थी। अब देखा, उसके नीचे पतली चुस्त पैट है, उसके नीचे भोजा। पैरो में जूते नहीं हैं। हैं। हाँ, खाट के नीचे एक जोड़ा चमड़े का काला बूट रखा हुआ है।

अपने दाहिने हाथ से अपने चेहरे को छूकर देखने पर मुझे पता चला, कि न केवल मेरी देह के रंग में परिवर्तन आया है, बल्कि मेरे चेहरे में भी परिवर्तन आ गया है। इतनी नुकीली नाक, पतले होठ और पतले जबड़े मेरे नहीं थे। अपने सिर पर हाथ रखने पर पता चला कि उस पर घुंघराले बाल हैं जो मेरे कंधे तक फैले हैं। कान के पास से जुल्फें करीब-करीब जबड़े तक उतर आई हैं।

अपना चेहरा देखने के बाद मेरे मन को तीव्र कुतूहल के साथ-साथ विस्मय और आतंक ने धर दबाया। लेकिन आइना कहा है ?

मैं अपनी सांस रोककर दोड़ता हुआ बाथरूम के पास पहुंचा और दरवाजे को जोरो से टेलता हुआ अन्दर चला गया।

इसके पहले वहाँ सिवा एक बालटी के और कुछ नहीं था। अब फ्रॉग के एक कोने में टॉन का एक बाथटब, उसके पास चौकी और एनोमेल का मग दीख पड़े। मैं जिस चीज की तलाश कर रहा था, वह मेरे सामने ही है—लकड़ी की सिंगार-मेज पर आदमकद आईना। मुझे इस बात का पता है कि मैं आईने के सामने खड़ा हूँ। किन्तु उसमें जो चेहरा दीख रहा

है, वह मेरा चेहरा नहीं है। किसी वीभत्स बाजीगरी के चलते मैं उन्नीसवीं सदी का एक अंग्रेज सह्य हो गया हूँ—वैसा अंग्रेज जिसकी देह का रंग बिलकुल गोरा है, बाल मुनहले, आँखें कटोली और उन आँखों में यातना के साथ कठोरता का भाव अजीब प्रकार में मिला हुआ है। इस अंग्रेज की कितनी उम्र है ? तीस से ज्यादा न होगी। मगर देखने से लगता है, कि अस्वस्थता या अतिरिक्त परिश्रम के कारण असमय ही चेहरे पर बुढ़ापे की छाप पड़ गई है।

और भी अधिक निकट जाकर मैंने अपने चेहरे को गौर से देखा। देखते-देखते मेरे भीतर से एक गहरी उसांस निकलकर शून्य में फैल गई।

उफ़ !

यह आवाज भी मेरी नहीं है। यह उसांस भी मेरी नहीं, उस अंग्रेज की भावनाओं को व्यक्त कर रही है।

इसके बाद जो कुछ घटित हुआ उससे यह समझ में आया कि न केवल मेरा कठस्वर, बल्कि मेरे हाथ, पैर—सब कुछ किसी अन्य व्यक्ति के अधीन क्रियाशील हैं। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि मैं जो अनिच्छित बोल हूँ और मैं बदल गया हूँ, इसका मुझे बोध है। हालांकि मैं यह नहीं जानता कि यह परिवर्तन स्थाई है या अस्थायी, इस स्थिति से अपनी स्थिति में लौटने का कोई उपाय है या नहीं।

मैं बाथरूम से शयन-कक्ष में लौट आया।

मेरी दृष्टि लिखने की मेज पर पड़ी। लैंप अब भी जल रही है। लैंप के नीचे चमड़े की जिल्द की एक कॉपी है। उसके पास दवात के अन्दर डाली हुई सरकड़े की कलम है।

मैं आगे बढ़कर मेज की ओर गया। कॉपी के खुले पन्ने पर कुछ भी लिखा न था। किसी अदृश्य शक्ति ने मुझे कुरसी पर बिठाकर दवात से कलम मेरे हाथ में घमा दी। मेरा हाथ बायीं ओर के सफेद पृष्ठ की ओर बढ़ गया। कमरे की निस्तब्धता को भेदती हुई सरकड़े की कलम सर-सर आवाज करती हुई लिखने लगी :

27 अप्रैल, 1868

कान के पास फिर से उस शैतान मच्छर की भनभनाहट शुरू हो गई है। अन्ततः एक मामूली कीड़े से मुझे जंमे दबग अंग्रेज को पराजित होना पड़ेगा ? ईश्वर का यह कैसा विधान है ? एरिक भाग गया है। पार्सी और टोनी भी इसके पहले भाग चुके हैं। शायद मुझ में उनसे भी अधिक पैसे का लोभ है। यही वजह है कि मलेरिया के आक्रमण के बावजूद मैं नील के मोह

से मुक्त नहीं हो पा रहा हूँ। नहीं, बात इतनी ही नहीं है। डायरी में असत्य लिखना पाप है। एक दूसरा भी कारण है। मेरे देश के निवासी मुझे भली-भाँति पहचानते हैं। जब मैं वहाँ था तो मैंने कितने ही बुरे काम किए हैं। वे इन बातों को भुला नहीं बैठे हैं। इसीलिए मुझे मे इंग्लैंड लौट जाने की हिम्मत नहीं है। मुझे यही रहना होगा और यही मरना होगा। मेरी और अपने तीन वर्ष के शिशु टोरी की कब्रों के पास ही मुझे स्थान मिलेगा। यहाँ के नेटिवों पर मैंने इतना अत्याचार किया है कि मेरे मरने पर यहाँ कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिलेगा जो मेरे लिए आंसू बहाए। एकमात्र मीर जान ही है जो हो सकता है, आंसू बहाए। मेरा विश्वसनीय आज्ञाकारी बेयरा मीरजान ! और रेक्स ? असली चिन्ता तो मुझे रेक्स के लिए ही है। हाय रे स्वामीभक्त कुत्ता ! मेरे मरने के बाद ये लोग तुम्हें जिन्दा न रहने देंगे। या तो ढेलों से या लाठी की चोट से ये लोग तुम्हें मार डालेंगे। काश, तेरे लिए कुछ इन्तजाम करने के बाद ही मेरी मृत्यु होती ! ...

इसके बाद मैं लिख नहीं सका। मेरा हाथ धरधरा रहा है। मेरा नहीं, बल्कि डायरी लिखने वाले का हाथ।

मैंने कलम रख दी।

इसके बाद मेरा दाहिना हाथ मेज से सरककर मेरी गोद के पास आया और दाहिनी ओर चला गया।

यह दराज का हत्या है।

हाथ से खींचते ही दराज खुल गई।

अन्दर एक पिनकुशन है, पीतल का एक पेपरवेट, पाइप और कुछ कागजात।

दराज थोड़ा और खुली। लोहे की कोई चीज चमक उठी। पिस्तौल। उस पर हाथी के दात का काम किया हुआ है।

मेरे हाथ ने पिस्तौल को बाहर निकाला। मेरे हाथ की धरधराहट रुक गई है।

बाहर सियार भौंक रहे हैं। सियारों के प्रत्युत्तर में ही हाउण्ड ने भौंकना शुरू कर दिया है—भांव-भाव ...

मैं कुरसी से उठकर दरवाजों की ओर गया और फिर उसे खोलकर बाहर चला आया।

सामने मैदान में चादनी फँली हुई है।

डाक बगले के बरामदे से करीब बीस हाथ की दूर पर धूसर रंग का एक विशाल ग्रंहाउण्ड घास पर खड़ा है। मेरे बाहर आते ही उसने मेरी

ओर मुड़कर पंछ हिलाना शुरू कर दिया ।

“रेक्स !”

वही गंभीर अंग्रेज का कंठ स्वर । दूर की बसवारी और नील की फैंकटरी से आवाज प्रतिध्वनित होकर लौट आई— रेक्स ! ... रेक्स ! ...

रेक्स आगे बढ़ आया । उसकी पूछ हिल रही थी

वह जैसे ही घास पर से आकर बरामदे पर चढ़ने लगा कि मेरा दाहिना हाथ कमर तक बढ़ आया । पिस्तौल का मुंह कुत्ते की ओर था ।

रेक्स रुक गया । उसकी जलती आंखों में विस्मय का भाव था ।

मेरे दाहिने हाथ की तर्जनी ने पिस्तौल के बटन को दबा दिया ।

गोली छूटते ही आंखों के सामने चकाचौंध पैदा करने वाली रोशनी फैल गई । उसने साथ धुआ और चारों तरफ छितरे हुए बारूद की गंध ।

रेक्स के बदन के सामने का हिस्सा बरामदे के ऊपर और पीछे का हिस्सा घास पर लटका हुआ था ।

पिस्तौल की आवाज सुनकर दूर के पेड़-पौधों पर कौए कांव-कांव करने लगे । फैंकटरी की ओर से कुछ लोग डाक दगले की ओर आने लगे ।

कमरे के अन्दर आकर मैंने दरवाजे की अगला बन्द कर दी और खाट पर बैठ गया । बाहर लोगों का शोरगुल बढ़ रहा था ।

पिस्तौल की नली अपने कान के पास छुलाते ही वह गरम मालूम हुई । उसके बाद क्या हुआ, मैं नहीं जानता ।

दरवाजे पर दस्तक पड़ते ही मेरी नींद खुल गई ।

“चाय ले आया हू, बाबूजी !”

कमरे में दिन का प्रकाश फैला था । हमेशा की आदत के अनुसार मेरी दृष्टि बाएं हाथ की कलाई पर गई ।

छह बजकर तेरह मिनट हो रहे थे । घड़ी को आंखों के ओर करीब ले आया, क्योंकि इससे तारीख भी मालूम हो जाती है ।

अट्ठाईस अप्रैल ।

बाहर से मुखराम ने कहा, “आपकी गाड़ी ठीक हो गई है, बाबूजी ।”

धीर भूमि की नीलकोठी के साहब की मृत्यु शतवार्षिकी के अवसर पर मुझे जो अनुभव हुआ था, उस पर क्या कोई विश्वास करेगा ?

## फेलूदादा की जासूसी

हर रोज तीसरे पहर राजेन बाबू को माल की ओर आते देखता हूँ। उनके सिर के बाल पक गए हैं। रंग गोरा है। चेहरे पर मुसकराहट तैरती रहती है। नेपाल और तिब्बत की पुरानी वस्तुओं की जो दुकान है, यहाँ कुछ थोड़ा वक्त गुज़ार कर फिर बाहर बेंच पर आधा घंटा गुज़ारते हैं और जब शाम होने को आती है, वे अपने जला पहाड़ के मकान में लौट आते हैं। एक दिन मैं उनके पीछे-पीछे जाकर उनका घर देख आया हूँ। जब मैं फाटक के निकट पहुँचा, अचानक मेरी ओर मुड़कर बोले, "तुम कौन हो? मेरा पीछा क्यों कर रहे हो?" मैंने कहा, "मेरा नाम है तपेश्वरजन बोस।" फिर "यह लेमनजूस लो", यह कहकर उन्होंने सचमुच जेब से एक लेमन-जूस निकालकर मुझे दिया और कहा, "एक दिन सुबह मेरे घर पर आओ। मेरे पास अनेक मुखौटे हैं। तुम्हें दिखाऊंगा।"

वही राजेन बाबू इतनी मुसीबतों में फँस सकते हैं, इस पर कौन विश्वास करेगा?

फेलूदा को ज्योही मैंने यह बात बताई, वह झुंझला उठा।

"बधादा बडप्पन मत कर।" कौन किस मुसीबत में फँसेगा, यह क्या किसी आदमी को देखकर समझा जा सकता है?"

मैं स्वभाववश गुस्से में आ गया।

"वाह रे, राजेन बाबू जो अच्छे आदमी हैं, यह क्या देखने पर समझ

"अच्छा ठीक है। अब यह बता कि किस तरह की मुसीबत है। और तू तो निहायत बालक है, फिर तुझे विपत्ति की बात कैसे मालूम हुई?"

मैं निहायत बर्बाद नहीं हूँ, क्योंकि मेरी उम्र साढ़े तेरह वर्ष है। फेलूदा की उम्र मुझसे दूगुनी है।

सब कहें तो हज़ं ही क्या है! बात सचमुच मेरे जानने की नहीं थी। मैं माल की बेंच पर बैठ गया। चूँकि रविवार था और बंड बजने वाला था, इसीलिए मैं सुनने के लिए ही बैठ गया। मेरी बगल में तीन कौड़ी बाबू बैठ



चे जो राजेन बाबू का मकान किराये पर लेकर गरमी की छुट्टी बिताने आए थे। तीन कौड़ी बाबू 'आनन्द बाजार' पत्रिका पढ़ रहे थे और मैं भांक-भांककर फुटबॉल की खबरें देखने की कोशिशें कर रहा था। तभी राजेन बाबू हांफते हुए आगे और चेहरे पर उदासी लिए तीन कौड़ी बाबू की बगल में घम से बैठ गए। उसके बाद अपनी चादर से बदन का पसीना पोंछने लगे।

तीन कौड़ी बाबू ने अखबार रखकर पूछा, "क्या हुआ। चढ़ाई तयकर आए हैं क्या?"

राजेन बाबू ने आहिस्ता से कहा, "नहीं, साहब! एक इनक्रेडिबल बात है।"

'इनक्रेडिबल' शब्द से मैं परिचित था। फेलूदा इस शब्द को अकसर प्रयोग में लाता है। इसका अर्थ है : अविश्वसनीय।

तीन कौड़ी बाबू ने पूछा, "क्या बात है?"

"लीजिए, देखिए"

राजेन बाबू ने एक मुड़ा हुआ कागज़ जेब से निकालकर तीन कौड़ी बाबू के हाथ में थमाया। मैं समझ गया कि वह एक पत्र है।

मैंने अवश्य ही उस पत्र को नहीं पढ़ा था। बल्कि मैं विपरीत दिशा में अपना मुह धुमाकर गुनगुनाते हुए इस तरह का भाव प्रदर्शित कर रहा था जैसे बड़े-बुजुर्गों की बातों में मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है। मगर पत्र न पढ़ने के बावजूद मैंने तीन कौड़ी बाबू की बातें सुन ली थी।

"सचमुच इनक्रेडिबल है। आप पर किसे इतना आक्रोश हो सकता है कि आपको इस प्रकार घमकी भरा पत्र लिखे?"

राजेन बाबू ने कहा, "यही तो सोच रहा हूँ। सच कहने में हर्ज ही क्या, मैंने कभी किसी की हानि की हो, ऐसा याद नहीं है।"

तीन कौड़ी बाबू ने राजेन बाबू की ओर झुककर फुसफुमाते हुए कहा, "बाजार में इन बातों की चर्चा न करना ही बेहतर है। घर चलिए।"

दोनों वृद्धे उठकर खड़े हो गए।

फेलूदा घटना के वारे में सुनकर कुछ देर तक खामोश बैठा रहा। उसकी पेशानियो पर सलबटें थी। उसके बाद वह बोला, "फिर तेरे कहने का मतलब है कि एक बार महाराई से इसकी जांच-पड़ताल करनी चाहिए?"

"तुम तो रहस्यबनक घटना की सलाश में थे। तुमने कहा था, जासूसी किताने पढ़ते-पढ़ते तुम्हारी जासूसी बुद्धि तीक्ष्ण हो गई है।"

"बात तो सही है। उदाहरण के तौर पर तुम इस बात को ले सकते

हो—आज मैं माल नहीं गया हूँ, फिर भी मैं बता सकता हूँ कि तू किस दिशा की बेंच पर बैठा था।”

“किस दिशा में ?”

“राधा रेस्तरा की दाहिनी तरफ की बेंचों में से किसी बेंच पर।”

“अरे, क्या कहना है ! बात तुम्हारी समझ में कैसे आई ?”

“आज तीसरे पहर धूप थी। तेरा बायां गाल धूप से झुलस गया है मगर दाहिना नहीं झुलसा है। सिर्फ उधर की बेंच पर बैठने से ही पश्चिम की धूप गाल पर पड़ती है।”

“इनक्रेडिबल !”

“खैर ! अब बात यह है कि राजेन मजुमदार के घर पर एक बार जाना जरूरी है।”

“अब सतहत्तर कदम बाकी हैं।”

“और अगर न हो ?”

“होगा ही फेलूदा। मैंने पिछली बार गिना था।”

“और न होने पर मुक्के का मार सहनी होगी।”

“हां, मगर ज्यादा जोर से मत मारना। जोर से मारने से सिर का भेजा इधर से उधर हो जाता है।”

कितने आश्चर्य की बात कि सतहत्तर कदम चलने पर राजेन बाबू का घर नहीं आया। तेईस कदम और चलने के बाद उनके फाटक के सामने पहुंचा।

फेलूदा ने हलके से एक मुक्का जमाते हुए कहा, “पिछली बार लौटने के समय गिना था या आने के समय ?”

“लौटने के समय।”

“इडियेट ! लौटने के समय तो रास्ता ढलाव है। तू निश्चय ही लम्बा-लम्बा कदम रखते हुए लौटा होगा।”

“हां, यही बात होगी।”

“है ही। इसीलिए उस बार कदमों की सख्या कम थी और इस बार ज्यादा हुई। जवानी की उम्र में आदमी लम्बे-लम्बे कदम रखता है। लगन-ग दौड़ने के जैसा। और बुढ़ापा आने पर ढालू रास्ते पर बेक कसकर छोटे-छोटे कदम रखने पड़ते हैं। अगर ऐसा न करे तो मुह के बल गिर पड़े।”

पास ही कहीं किसी घर से रेडियो का गीत सुनाई पड़ रहा है फेलूदा को आगे बढ़कर कॉलिंग बेल दबाया।

“क्या कहोगे, यह सोच लिया है, फेलूदा ?”

“जो भी इच्छा होगी, कहूंगा। मगर तू मत बोलना। जितनी देर तक हम उनके साथ रहे, तू एक भी शब्द मत बोलना।”

“अगर कुछ पूछें तो भी नहीं ?”

“शटअप !”

नेपाली नौकर ने दरवाजा खोल दिया।

“अन्दर चले आइए।”

हम बँठक में पहुँचे। पुराने ढर्रे का बड़ा ही खूबसूरत लकड़ी का मकान है। मुना था, राजेन बाबू रिटायर्ड होकर दस वरसों से दार्जिलिंग में रह रहे हैं। वे कलकत्ते के नामी वकील रह चुके हैं।

कमरे में जितनी भी भेड़-कुरसियाँ थी, सभी बेंत की ही थी। जो चीजें सबसे अधिक ध्यान आकर्षित कर रही थी वे भी दात पीसते हुए मुखौटों की कतार, जिनकी आँखों में क्रोध का भाव था। इसके अलावा पुरानी ढाल, तलवार, फरसा, थालियाँ और गुलदस्ते बगैर रह। कपड़े पर रंगों से बनाई गई बुद्धदेव की तसवीर भी है। यह तसवीर कितनी पुरानी है, पता नहीं। मगर उसमें जो मुनहला रंग है वह अब भी झलमलाता रहता है।

हम दोनों बेंत की कुरसियों पर बँठ गए।

फेलूदा ने दीवारों पर निगाह दौड़ा कर कहा, “जितनी भी कांटियाँ हैं, नई है, जंग नहीं लगा है। संभवतः भले मानस का पुरानी चीजों का शौक ज्यादा पुराना नहीं है।

राजेन बाबू कमरे के अन्दर आए।

मैंने आश्चर्य के साथ देखा, फेलूदा ने उठकर उन्हें प्रणाम किया और कहा, “पहचान रहे हैं ? मैं जयकृष्ण मित्र का लड़का फेलू हूँ।”

शुरू में राजेन बाबू के माथे पर सन्वटें उभर आईं। उसके बाद सहज स्थिति में आकर हँसते हुए बोले, “बाह-बाह तुम कितने बड़े हो गए। यहाँ कब आए हो ? घर पर कुशल है न ? तुम्हारे पिताजी आए हैं ?”

फेलूदा उत्तर दिए जा रहे थे। मैं मन ही मन कह रहा था—यह कितना अन्याय है कि फेलूदा ने कभी यह नहीं बताया कि वह राजेन बाबू को पहचानना है।

अब की फेलूदा ने मेरा परिचय दिया। राजेन बाबू का चेहरा देखने से यह पता नहीं चला कि सात दिन पहले उन्होंने मुझे लेमन जूस देने का याद किया था।

फेलूदा ने कहा, “शार्चन यस्तुओं के प्रति आप बहुत ही शौक रखते

हैं।”

राजेन बाबू ने कहा, “हां। अब तो यह शोक नशे जैसा हो गया है।”

‘यह शोक कब से पैदा हुआ है?’

“लगभग छह महीने से। मगर इस बीच बहुत-कुछ इकट्ठा कर लिया है।”

फेलूदा ने अपने गले को खंखार कर अब मुझसे सुनी हुई बात बताई, “आपने मेरे पिता के मुकदमे में जिस तरह की सहायता की थी, उसके बदले इस मुसीबत में मैं अगर कुछ कर सकू तो...”

राजेन बाबू के मनोबल को देखने से पता चला कि सहायता मिलने पर उन्हें खुशी ही होगी। मगर वे कुछ बोलें कि इसके पहले ही तीन कौड़ी बाबू ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। उनके हाँफने का सिलसिला देखकर लगा, वे सभवतः घूम-फिरकर आए हैं। राजेन बाबू ने उनसे हमारा परिचय कराते हुए कहा, “मेरा अन्तरंग मित्र ज्ञानेश सेन एडवोकेट तीन कौड़ी बाबू का पड़ोसी है। यह सुनकर कि मैं मकान किराए पर लगाने जा रहा हूँ, ज्ञानेश ने ही इन्हे मेरे यहाँ आने को कहा। शुरू में उन्होंने होटल में ठहरने के बारे में सोचा था।”

तीन कौड़ी बाबू ने हसते हुए कहा, “मुझे अपने चुरट की सनक के कारण भय लग रहा था। यह भी हो सकता था कि राजेन बाबू चुरट की गंध बरदाश्त नहीं कर पाते हों। इसलिए यह बात मैंने अपने प्रथम पत्र में ही सूचित कर दी थी।”

फेलूदा ने कहा, “आप क्या हवा-पानी बदलने के खयाल से आए हैं?”

“हां। मगर हवा की कमी ही ज्यादातर महसूस हुई है। लोग रम्मीद करते हैं कि पहाड़ में कुछ और ज्यादा सरदी रहती होगी।”

फेलूदा अचानक पूछ बैठे, “शायद आपको संगीत का शौक है।”

तीन कौड़ी बाबू ने आश्चर्य में आकर हँसते हुए कहा, “यह बात तुम्हें कैसे मालूम हुई?”

“आप जब बातचीत कर रहे थे तो मैंने देखा, साठी पर रखी हुई आपके दाहिने हाथ की तर्जनी रेडियो के गीत पर ताल दे रही है।”

राजेन बाबू ने हसते हुए कहा, “तुमने विलकुल सही बात कही है। आप बहुत अच्छा श्यामा संगीत गाते हैं।”

फेलूदा ने कहा, “वह पत्र आपके पास है?”

राजेन बाबू ने कहा, “हां।”

राजेन बाबू ने कोट की बुक पॉकेट से पत्र निकाल कर फेलूदा को

दिया। अब उसे देखने का मौका मिला।

यह हाथ से लिखा हुआ पत्र नहीं है। अलग-अलग स्थानों में छपे बंगला के शब्दों को काटकर गोद से जोड़कर पत्र लिखा गया है। जो कुछ लिखा है, वह यह है : 'अपने अन्याय के लिए सजा भोगने के लिए तैयार रहो।'

फेलूदा ने पूछा, "यह पत्र क्या डाक से आया है?"

राजेन बाबू ने कहा, "हां। लोकल डाक से। दुःख की बात यही है कि लिफाफे को मैंने फेंक दिया। उम पर दार्जिलिंग का ही पोस्टमार्क था। पता भी छपे बंगला के शब्दों को काट-काटकर लिखा गया था।"

"आपको किसी पर सन्देह होता है?"

"क्या कहूं! याद नहीं आता है कि कभी मैंने किसी के साथ अन्याय या अत्याचार किया हो।"

"जो लोग आपके घर पर आते-जाते हो, उनका नाम बता सकते हैं?"

"बहुत ही आसान काम है। मैं लोगों से बहुत ही कम मिलता-जुलता हूं। जब कभी मेरी तबियत खराब होती है, डॉक्टर फणि मित्र आया करते हैं।..."

"वे किस तरह के आदमी हैं?"

"डॉक्टर के लिहाज से संभवतः साधारण कोटि का। मगर इससे मेरा कुछ आता-जाता नहीं है, क्योंकि मेरी बीमारी भी साधारण कोटि की है—जब से मैं दार्जिलिंग आया हूं, जुकाम या बुखार के अलावा मुझे कुछ भी न हुआ है।"

"चिकित्सा करने पर आपसे पैसा लेते हैं?"

"लेते हैं। इसके अलावा मुझे पैसे की कोई कमी नहीं है। व्यय ही अहसान क्यों लूं?"

"और कौन-कौन आते हैं?"

"आजकल घोपाल नामक एक व्यक्ति आते जाते हैं... यह देखो।"

"मैंने दरवाजे की ओर मुड़कर देखा। गोरे रंग मझने कद का एक आदमी सूट पहनें, मुसकराते हुए कमरे के अन्दर आ रहे थे।"

"लगा, मेरे नाम की चर्चा की जा रही है।"

राजेन बाबू बोले, "अभी-अभी आपका नाम लिया गया है। आपको भी मेरे जैसा ही पुरानी वस्तुओं का शौक है, मही बात मैं इस नौजवान से कहने जा रहा था। आपसे परिचय करा दूं..."

नमस्कार बगैरह के बाद मिस्टर घोपाल—पूरा नाम भयनी मोहन घोपाल—राजेन बाबू से बोले, "आपको आज दुकान पर नहीं देखा, इस-

लिए सोचा, एकबार मिल लू।”

राजेन बाबू ने कहा, “आज तबियत ठीक नहीं थी।”

यह घाठ में समझ गया कि राजेनबाबू मिस्टर घोपाल से पत्र की बाबत कुछ कहना नहीं चाहते हैं। मिस्टर घोपाल के आते ही फेलूदा ने पत्र को हथेली में छिपा लिया था।

घोपाल बोले, “आप अगर व्यस्त... दरअसल आपके तिब्बती घटे को एक बार में देखना चाहता था।”

राजेन बाबू बोले, “यह तो आसान काम है। मेरे निकट ही है।”

राजेन बाबू घंटा लाने के लिए बगल के कमरे में चले गए।

फेलूदा ने घोपाल से पूछा, “आप क्या यही रहते हैं?”

वे दीवार से एक फरसा उतार कर उसे देखते हुए बोले, “मैं किसी जगह में ज्यादा दिनों तक नहीं रहता हूँ। अपने कारोबार के चलते मुझे बहुत ही घूमना पड़ता है। मैं क्यूरिओ का सग्रह करता हूँ।”

घर लौटने के समय फेलूदा से पूछने पर पता चला था कि ‘क्यूरिओ’ का अर्थ है—दुष्प्राप्य पुरानी वस्तुएँ।

राजेन बाबू घटे को लेकर आए। देखने में वह एक अजीब जंसी वस्तु लग रही थी। उसके नीचे का हिस्सा चांदी का बना था, हथ्या ताबे और पीतल को मिलाकर बनाया गया था और ऊपरी हिस्से में लाल नील पत्थर जड़े थे।

अवनी बाबू ने अपनी आंखों को सिकोड़कर घटे को इधर-उधर घुमाकर बहुत देर तक देखा।

राजेन बाबू ने पूछा, “किस तरह का मालूम हो रहा है?”

“सचमुच आपने बाजी मार ली है। एकदम पुरानी वस्तु है।”

“आप जब कि कह रहे हैं, मेरे मन में किसी भी तरह का संदेह न रहा। दुकानदार का कहना है कि यह बिलकुल लामा के प्रासाद की वस्तु है।”

“इसमें आश्चर्य की कोई गुंजाइश नहीं है।... शायद आप इसे अपने आप से अलग नहीं करना चाहते हैं। यानी अच्छी कीमत मिलने पर भी?”

राजेन बाबू ने मुसकराकर अपनी गरदन मोड़ी और कहा, “जानते हैं, बात क्या है? शौक की चीज है। इसके प्रति प्रेम हो गया है। उसे बेचकर लाभ में रहूँ, या कह सकते हैं कि किसी भी कीमत पर बेचने के लिए तैयार होऊँ, मेरी ऐसी इच्छा नहीं है।”

अवनी बाबू ने घटे को लौटाते हुए कहा, “पलू। आशा है, आप कल बाहर निकलेंगे।”

राजेन बाबू ने कहा, "इच्छा तो है।"

अवनी बाबू के चले जाने के बाद फेलूदा ने राजेन बाबू से कहा, "कुछ दिनों तक बाहर मत निकला करें और सावधानी से रहा करें।"

"तुम ठीक ही कह रहे हो। लेकिन जानते हो, फठिनाई क्या है। उस पत्र की बातें इतनी अविश्वसनीय हैं कि इमे सिरियसली नहीं ले पा रहा हूँ। लगता है, यह कोई मजाक है—जिसे प्रैक्टिकल जोक कहा जाता है।"

"जितने दिनों तक इसके बारे में निश्चित नहीं हो जाते हैं, घर पर ही रहें। आपका नेपाली नौकर कितने दिनों से आपके साथ है?"

"शुरू से ही है। बिलकुल विश्वसनीय है।"

फेलूदा ने तीन कौड़ी बाबू की ओर मुड़कर कहा, "आप ज्यादातर घर पर ही रहा करते हैं।"

"सुबह-शाम जरा इधर-उधर टहलकर वापस चला आता हूँ—बस इतना ही। मगर विपत्ति अगर आ भी जाए तो मैं बूढ़ा आदमी ज्यादा से ज्यादा क्या कर सकता हूँ, मैं चौठस बरसों का हूँ। राजेन बाबू से एक वर्ष छोटा।"

राजेन बाबू बोले, "वे आबोहवा बदलने के खयाल से आए हैं। उन्हें घर में बन्दी बनाकर रखने की साजिश तुम लोग क्यों कर रहे हो? मैं रहूंगा, मेरा नौकर रहेगा, इतना ही काफी है। अगर तुम लोग चाहो तो सुबह-शाम पता लगाते रहना।"

"ठीक है, वैसा ही करेंगे।"

फेलूदा की देखा देखी में भी उठकर खड़ा हो गया।

हम लोग जहाँ बंटे थे, उसकी विपरीत दिशा में एक फायर प्लेस था। फायरप्लेस के ऊपर एक आला था और आले के ऊपर फ्रेमों में मढ़ी तीन तसवीरें थीं। फेलूदा उसी तरफ चले गए।

पहली तसवीर को दिखाते हुए राजेन बाबू बोले, "आप मेरी पत्नी हैं। विवाह होने के चार वर्ष बाद ही इनकी मृत्यु हो गई थी।"

दूसरी तसवीर मेरे हम उम्र एक बालक की थी। उसके बदन पर वेल्शेट का कोट था।

फेलूदा ने पूछा, "यह किसकी तसवीर है?"

राजेन बाबू ने कहकहा लगाते हुए कहा, "समय के प्रभाव से मनुष्य के चेहरे पर किस तरह का अजीब परिवर्तन आ सकता है, उसे ममझाने के लिए यह तसवीर है। यह मेरे ही बचपन का संस्करण है। उन दिनों मैं बाकुडा के मिशन स्कूल में पढ़ता था। मेरे पिता बाकुडा में मैजिस्ट्रेट थे।"

सचमुच राजेन बाबू का बचपन में खासा खूबसूरत चेहरा था।

“इतना ज़रूर है कि तसवीर देखकर भुलावे में मत आना। शैतान लड़के के नाम से तब मेरी बदनामी फैली हुई थी। न केवल शिक्षकों को, बल्कि छात्रों को भी मैं परेशान किया करता था। एक बार खेल-कूद के दिन सौ गज की दौड़ में सबसे अच्छे रनर को लगड़ी मारकर गिरा दिया था।”

तीसरी तसवीर फेलूदा के हम उम्र एक युवक की है। राजेन बाबू ने बताया, वह उनके एकलौते बेटे प्रवीण की तसवीर है।

“अभी वे कहां रह रहे हैं?”

राजेन बाबू ने गले को खखार कर कहा, “ठीक-ठीक मालूम नहीं।” बहुत दिनों से देश के बाहर रह रहा है। लगभग सोलह बरसों से।

“आपसे पत्राचार नहीं करते हैं?”

“नहीं।”

फेलूदा ने दरवाजे की ओर बढ़ते हुए कहा, “बड़ा ही इंटरेस्टिंग केस है।”

मैंने मन ही मन कहा, फेलूदा बिलकुल डिटेकटिव की तरह बातें कर रहा है।

बाहर गहरा अधेरा रंग रहा है। जलापहाड़ पर स्थिति मकानों में बतिया जल रही हैं। मैंने पहाड़ के नीचे की ओर देखा। रंगीन उपत्यका से कोहरा ऊपर की ओर उठ रहा है।

राजेन बाबू और तीन कौड़ी बाबू हम लोगों के साथ फाटक तरु आए। राजेन बाबू ने धीमे स्वर में फेलूदा से कहा, “तुम वच्चे हो, फिर भी तुमसे कह रहा हूँ। मैं बिलकुल नर्वस नहीं हूँ, ऐसा कहना ठीक नहीं होगा। इतने शांतिपूर्ण परिवेश में यह पत्र जैसे बिना मेघ का वज्रपात है।”

फेलूदा ने जोर से कहा, “आप चिन्ता मत करें। मैं इसका निदान ढूँढ निकालूंगा। आप निश्चिन्तता के साथ आराम करें।”

राजेन बाबू ‘गुड नाइट एंड थैंक यू’ कहकर चले गए।

अब तीन कौड़ी बाबू ने फेलूदा से कहा, “तुम्हारी—तुम्हें मैं तुम कह कर ही सम्बोधित कर रहा हूँ—तुम्हारी आविर्भाव की सामर्थ्य देखकर मैं सचमुच ही इम्प्रेसड हुआ हूँ। मैंने भी बहुत सी जासूमी पुस्तकें पढ़ी हैं। इस पत्र के मामले में हो सकता है, मैं तुम्हें थोड़ी बहुत मदद कर सकूँ।”

“सच?”

“छपे हुए कागज के टुकड़ों को काट-काटकर यह जो पत्र लिखा गया है, इससे कौन-सी बात समझ में आती है?”

फेलूदा कुछ देर तक सोचता रहा, फिर बोला, “नम्बर एक—कागजों



को संभवतः ब्लेड से काटा गया है, कैंची से नहीं।”

“वेरी गुड।”

“नम्बर दो—शब्दों को बहुत तरह की किताबों से लिया गया है, क्योंकि हरूफों और कागजों में अन्तर है।”

“वेरी गुड। उय पुस्तकों के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?”

पत्र के दो शब्द—‘सजा’ और ‘तैयार’ लगता है अखबार से काटे गए हैं।”

“आनन्द बाजार से”

“यह बात है?”

“येस। वैसा टाइप ‘आनन्द बाजार’ में ही उपयोग में लाया जाता है। और बाकी शब्दों में से एक भी शब्द किसी प्राचीन पुस्तक से नहीं लिया गया है, क्योंकि जिन हरूफों में वे छपे हैं, वे पन्द्रह-बीस बरसों के ही हैं।... जिस गोद से चिपकाया गया है, उसके बारे में तुम्हारी क्या धारण है?”

“उसकी गंध ग्रीपेक्स गोंद की तरह है।”

“बिलकुल सही पता लगाया है।”

“लेकिन पता लगाने के मामले में आप मुझसे कोई पीछे नहीं हैं।”

तीन कौड़ी बाबू ने हंसते हुए कहा, “मगर मैं जब तुम्हारी उम्र का था तब डिटेक्टिव शब्द का अर्थ जानता था या नहीं, इस पर मुझे संदेह है।”

घर लौटते वक़्त फेलूदा ने कहा, “यह मैं नहीं जानता हूँ कि राजेन बाबू के रहस्य के उद्घाटन में सफल हो पाऊंगा या नहीं। लेकिन इस सिल-सिले में तीन कौड़ी बाबू से परिचित होने का मौका मिल गया।

मैंने कहा, “फिर वही इस मामले की खोज-पड़ताल क्यों नहीं करते? तुम नाहक ही सर खपा रहे हो?”

“अहा, बगल के हरूफों की बातें जानने से ही क्या तमाम बातें जान लेंगे?”

फेलूदा की बातें सुनने में अच्छी ही लगी। जैसी उनकी बुद्धि है, वैसी बुद्धि तीन कौड़ी बाबू की नहीं है। बीच-बीच में तीन कौड़ी बाबू भले ही सहायता करें, किन्तु असली काम फेलूदा ही करेगा।

“अपराधी कौन है, फेलूदा?”

“अपरा...”

फेलूदा ‘अपराधी’ शब्द उच्चारण करते-करते बीच ही में रुक गया। देखा, उनकी दृष्टि एक व्यक्ति का पीछा कर रही है।

“उस आदमी को देखा?”

“कहां! चेहरा देख नहीं सका।”

“लैम्प की रोशनी पडी और लगा”... फेलूदा फिर कहते-कहते रुक गए।”

“तुम्हारी समझ में क्या आया फेलूदा ?”

“शायद यह मेरी आंखों का भ्रम है। चलो, जल्दी-जल्दी चलो, मूख लगी है।”

फेलूदा मेरा मौसेरा भाई है। पिताजी के साथ वह और मैं दार्जिलिंग घूमने-फिरने के खयाल से आए हैं और शहर के निचले हिस्से में सैनटोरियम में ठहरे हैं। सैनटोरियम बगालियों से भरा है। पिताजी वहां हम उम्र मित्रों को जुटाकर ताश खेलने और गपशप करने में समय व्यतीत करते हैं। फेलूदा और मैं कहां जाते हैं, क्या करते हैं, इस बात पर पिताजी मायापच्ची नहीं करते।

आज सबेरे सोकर उठने में मुझे षोड़ी देर हो गई। उठने पर देखा, पिताजी तो हैं मगर फेलूदा का बिस्तर खाली पड़ा है। क्या बात है ?

पिताजी से पूछा तो उन्होंने कहा, “वह जब से यहां आया है, कंचन-जघा देखने नहीं गया है। आज खुला हुआ दिन देखकर संभवतः तड़के ही निकल गया है।”

मैंने मन-ही-मन अन्दाज लगाया था कि फेलूदा ने जाच-पड़ताल का काम शुरू कर दिया है। यह सोचते ही मुझे गुस्सा हो आया। बात ऐसी हुई थी कि फेलूदा मुझे नजर अन्दाज कर कोई काम नहीं करेगा।

बहरहाल मैंने भी मुह-हाथ धोकर चाय पी और बाहर निकल गया। लेडनला रोड में टैंकसी के पड़ाव के पास पहुंचने पर फेलूदा से मुलाकात हो गई। मैंने कहा, “वाह जी वाह, तुम मुझे छोड़कर चले आये।”

“बदन टूट रहा था, इसीलिए डॉक्टर के पास गया था।”

“कणि डॉक्टर के पास ?”

“देख रहा हू, तेरी भी बुद्धि इन दिनों जोर मार रही है।”

“दिखा चुके।”

“विजिट करने का चार रुपया लिया और दवा का नाम लिख दिया है।”

“अच्छे डॉक्टर हैं ?”

“धीमारी नहीं है, फिर भी जाच करके दवा दी है। अब समझ सकते हो कि कसा डॉक्टर है उसके बाद उनके मकान की जो हालत देखी, उससे

यह नहीं लगा कि उसके पास ज्यादा पैसा है।”

“फिर चिट्ठी उन्होंने नहीं लिखी है।”

“क्यों ?”

“गरीबों में क्या इतनी हिम्मत हो सकती है ?”

“रुपयों की जरूरत पड़ने पर हो जाती है।”

“मगर चिट्ठी में रुपयों की मांग नहीं की गई है।”

“उस तरह खुलासा तौर पर कोई रुपयों की मांग करता है ?”

“फिर ?”

“राजेन बाबू की हालत कल कैसी मालूम हुई ?”

“लगा डरपोक जैसे है।”

“डरने से मन की बीमारी हो सकती है, इस बात का पता है ?”

“हो ही सकती है।”

“और मन की बीमारी से शरीर की बीमारी ?”

“वह भी शायद होती है।”

“येस। और शरीर अस्वस्थ होने से डॉक्टर बुलाना होगा, यह बात तैरे जैसा बेवकूफ भी समझ सकता है।”

फेलूदा की बुद्धि देखकर मेरी सांस जैसे बन्द हो गई। अगर फणि डॉक्टर ने इतना सोच समझकर पत्र लिखा हो तो उसकी बुद्धि की दाद देनी चाहिए।

माल की ओर जाते हुए जब हम फव्वारे के आस-पास पहुंचे तो फेलूदा ने कहा, “क्यूरियों के सम्बन्ध में एक तरह की क्युरिओसिटी हो रही है।”

‘क्युरिओ’ का अर्थ मैं पहले ही सीख चुका था और ‘क्युरिओसिटी’ का अर्थ जो कौतूहल होता है, यह स्कूल में ही सीख चुका था।

हम लोगों के ठीक सामने ही नेपाल क्युरिओ शॉप है। राजेन बाबू और भवनी दाबू यही आया करते हैं।

फेलूदा सीधे अन्दर घुस गया।

दुकानदार सलेटी रंग का कोट पहने था। उसके गले में मफलर था और माथे पर सुनहली नक्काशी की टोपी। फेलूदा को देखकर वह मुसकराता हुआ सामने आया। दुकान का अंदरूनी हिस्सा पुरानी वस्तुओं से सचाखच भरा है।

वहां रोशनो नहीं है और एक सड़ी जैसी बदबू निकल रही है।

फेलूदा ने चारों ओर निगाह दौड़ाते हुए गम्भीर स्वर में कहा, “पुराना उम्दा किस्म का थांका है ?”

“बगल के कमरे में आइए। तमाम अच्छी चीजें बिक चुकी हैं। तब

हां, कुछ नया माल आने वाला है।”

बगल के कमरे में जाते समय मैंने फेलूदा के कान के पास मुह सटाकर पूछा, “थाका किस चीज को कहते हैं?”

फेलूदा ने दांत पीसते हुए कहा, “देखोगे ही।”

“बगल का कमरा और भी छोटा है—जिसको भुग्गी कह सकते हैं।”

दुकानदार ने दीवार पर झूलती हुई रेशमी कपड़े के ऊपर कढ़ी बुद्ध की एक तस्वीर को दिखाते हुए कहा, “बस, यही एक अच्छी चीज है। तब हां, ज़रा डेमेज्ड है।”

इसी को थाका कहते हैं? यह चीज तो राजेन बाबू के घर में काफी तादाद में है।

फेलूदा ने एक जानकार की तरह थाका को गौर से देखते हुए ऊपर से नीचे की ओर तीन बार अपनी आंखें दौड़ाई और उसके बाद कहा,, “इसकी उम्र सत्तर साल से ज्यादा मालूम नहीं होती है। मैं कम-से-कम तीन सौ साल पुरानी चीज चाहता हूँ।”

दुकानदार ने कहा, “आज तीसरे पहर हमारा एक पेटो माल आ रहा है। उसमें बेहतरीन थाका मिलेगा।”

“आज ही आ रहा है?”

“हां, आज ही।”

“यह समाचार फिर राजेन बाबू को जनाना चाहिए।”

“मिस्टर मजूमदार को? उन्हें मालूम है ही। मेरे जो दो-चार नियमित ग्राहक हैं, वे लोग सभी देखने के लिए तीसरे पहर आ रहे हैं।”

“अवनी बाबू को भी सूचना मिल गई है? मिस्टर घोपाल को?”

“हां।”

“आपके और कौन-कौन बड़े ग्राहक हैं?”

“और हैं मिस्टर गिलमोर—चाय के बगोचे के मैनेजर। सप्ताह में दो दिन चाय के बगीचे से आते हैं। इसके अलावा मिस्टर नौलखा है। फिलहाल वे सिक्कम में हैं।”

“और कोई दूसरा बंगाली?”

“नहीं सर।”

“अच्छा, देखू, अगर तीसरे पहर आ सका।”

“उसके बाद मेरी ओर मुड़कर बोला, “तोपसा, तुम्हें एक मुलौटा चाहिए न?”

हालांकि मेरा असली नाम तोपसा नहीं है, फिर भी फेलूदा ने तपेश से यही नाम बना लिया है।

मुखौटे का लोभ क्या संभाला जा सकता है ? फेलूदा ने स्वयं चुनकर मेरे लिए एक अदद खरीद दिया और कहा, "यही सबसे ज्यादा हरेनडस है। कही ठीक कह रहा हूँ न ?"

फेलूदा का कहना है कि 'हरेनडस' नामक कोई शब्द नहीं है। 'ट्रिमन्डस' का अर्थ होता है -- भीषण और हॉरिबल का घीभत्स। इन दोनों शब्दों को एक साथ समझने के लिए कोई-कोई 'हरेनडस' शब्द का उपयोग करते हैं। मुखौटे के सम्बन्ध में यह शब्द बिलकुल सही उतरता है, इसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं।

दुकान से निकलने के बाद फेलूदा मेरा हाथ घामे कुछ कहने जा रहा था मगर वह एकाएक चुप हो गया। इस बार भी मैंने फेलूदा को एक व्यक्ति की ओर ताकते हुए पाया। शायद कल रात फेलूदा जिस आदमी को देख रहा था, वही आदमी है। उसकी उम्र मेरे पिता के बराबर होगी, यानी चालीस-बयालीस। रंग गोरा है और आँखों पर काला चश्मा। वह जो सूट पहने है, देखने पर वह कीमती मालूम होता है। माल के बीच खड़ा होकर वह पाइप सुलगा रहा था। देखने पर वह पहचाना-पहचाना जैसा लगा, मगर मैंने उसे कहां देखा है, ठीक-ठीक समझ में नहीं आया।

फेलूदा सीधे उस आदमी की ओर चला गया और उसकी बगल में खड़ा होकर निश्चालिस साहवी तरीके से उच्चारण करता हुआ बोला, "एक्सक्यूज् मी, आप मिस्टर चैंटर्जी हैं ?"

उस आदमी ने पाइप को अपने दांत से काटते हुए गम्भीर स्वर में कहा, "नो, आइ ऐम नॉट।"<sup>1</sup>

फेलूदा ने आवाक होने का बहाना करते हुए कहा, "स्ट्रेंज ! आप सेंट्रल होटल में ठहरे हुए हैं न ?"

उस आदमी ने तनिक मुसकराकर अवज्ञा के स्वर में कहा, "नहीं। माउन्ट एवरेस्ट में ठहरा हूँ। एंड आर डोट हेव ए टिवन ब्रदर।"<sup>2</sup>

यह कहकर वह आदमी तेज कदमों से ऑवज़रवेटरी हिल की ओर चला गया। जाने के वक्त देखा, उसके पास भूरे कागज में मुड़ा हुआ एक पैकेट है और कागज पर लिखा है : 'नेपाल क्यूरिओ शॉप'।

मैंने धीमे स्वर में कहा, "फेलूदा उन्होंने भी मुखौटा खरीदा है क्या ?"

"खरीद सकते हैं। मुखौटे पर हमारा कोई एकाधिकार नहीं है।"<sup>3</sup> चल, कैबेट्स में जाकर कॉफी पी आएं।"

1. मैं नहीं हूँ।

2. मेरे कोई जुड़वा भाई नहीं है।

कैवर्टर्स की ओर जाते-जाते फेलूदा ने कहा, "इस आदमी को तू पहचान रहा है ?"

मैने कहा, "जब तुम्हीने न पहचाना तो मैं कैसे पहचानूं ?" तब हां, पहचाना-पहचाना जैसा लग रहा था।"

"मैने नही पहचाना ?"

"वाह-जी-वाह। कहां पहचान सके ? तुमने उनका नाम गलत बताया।"

"काश, तुझ मे थोड़ी-सी भी अक्ल होती ! गलत नाम इसलिए बताया था कि होटल का नाम मालूम हो जाए। यह बात भी तेरी समझ मे नहीं आयी ? उस आदमी का असली नाम क्या है, जानते हो ?"

"क्या ?"

"प्रवीण मजुमदार।"

"ओ हां-हा ! तुमने ठीक-ही कहा है। राजेन बाबू का लडका है न ? जिसकी तसवीर आले पर है ? इतनी बात जरूर है कि उम्र अब काफी बढ़ चुकी है।"

मिर्फ चहरा ही नहीं मिलता है—तूने उसके गाल पर के मासे को अवश्य ही देखा होगा। असली बात है कि उसके कपड़े-लत्ते विलायती है। सूट लदन का है, टाई गेरिस की, जूता इटली का—यहां तक कि रुमाल भी विलायती है। अभी-अभी विलायत से लौटा है, इसमे कोई सन्देह नहीं।"

"भगर राजेन बाबू को यह पता नहीं है कि उनका लडका यहां है ?"

"बाप यहा है—यह बात लडके को मालूम है कि नहीं, इसका पता लगाना जरूरी है।"

रहस्य, आहिस्ता-आहिस्ता घना होता जा रहा है, यह सोचता हुआ मैं कैवर्टर्स पहुंचा।

कैवर्टर्स की छत पर बैठने की जो जगह है, वह मुझे बहुत ही अच्छी लगती है। चारो ओर दार्जिलिंग शहर और उसके नीचे बाजार बहुत ही खूबसूरत दीखते हैं।

छत पर जाने के बाद देखा, हाथ में चूस्ट घामे तीन कौड़ी बाबू कोने की मेज पर बैठे हैं और काँफी पी रहे हैं। फेलूदा पर नजर पड़ते ही उन्होंने हाथ से इशारा कर हमे अपनी मेज पर बुला लिया।

हम लोग तीन कौड़ी बाबू की दोनो ओर टीन की कुरमियों पर बैठ गए।

तीन कौड़ी बाबू ने फेलूदा से कहा, "जामूसी में तुम्हारी दधता देखकर

मैं बड़ा ही खुश हूँ। मैं तुम दोनों को हॉट चॉकलेट खिलाऊंगा। कहो, आपसि तो नहीं है न ?”

हॉट चॉकलेट का नाम सुनते ही मेरी जीभ से लार टपकने लगी।

तीन कौड़ी बाबू ने चुटकी वजा कर घेयरा को पुकारा।

घेयरा जब ऑर्डर लेकर चला गया, तीन कौड़ी बाबू ने अपनी जेब से एक किताब निकालकर फेलूदा को दी और कहा, “लो। मेरे पास इसकी एक एक्सट्रा कॉपी थी। यह मेरी हाल की पुस्तक है। तुम्हें दे रहा हूँ।”

पुस्तक की जिल्द पर नजर पड़ते ही फेलूदा के चेहरे पर आश्चर्य का भाव तैरने लगा।

“मेरी किताब का मतलब ? आपकी लिखी हुई किताब ? आप ही ‘गुप्तचर’ के नाम से लिखा करते हैं ?”

तीन कौड़ी बाबू अधमूंदी आंखों से मुसकरा दिए और अपना सिर हिलाकर उन्होंने हामी भरी।

फेलूदा के आश्चर्य का भाव और भी अधिक गहरा हो गया।

। “यह बात है ! आपके तमाम उपन्यास मैं पढ़ चुका हूँ। बंगला में आपके उपन्यासों के अलावा किसी का भी जासूसी उपन्यास मुझे अच्छा नहीं लगता है।”

“थैंक यू, थैंक यू ! जानते हो, बात क्या है ? दिमाग में एक प्लॉट लिए यहां लिखने के खयाल से ही आया था। अब देख रहा हूँ, यथार्थ जीवन के रहस्यों के पीछे ही भाषा खपाते-खपाते समय निकल गया।”

“मेरा भाग्य सममुच बहुत ही अच्छा है। आपसे इसी बहाने जान-पहचान हो गई।”

“दु ख की बात यही है कि मेरी छुट्टी की अवधि सचमुच बीतने वाला है। मैं कल सबेरे जा रहा हूँ। आशा है, जाने के पहले तुम लोगों की थोड़ी-बहुत सहायता कर जाऊंगा।”

अब फेलूदा ने उत्तेजनापूर्ण समाचार तीन कौड़ी बाबू को बताया।

“आज राजेन बाबू के लड़के पर नजर पड़ी है।”

“क्या कह रहे हो जी ?”

“दस मिनट पहले की बात है।”

“ठीक कह रहे हो ? ठीक से पहचाना था न ?”

“मैं रुपये में चौदह आना तो श्योर हूँ। माउंट एवरेस्ट होटल में जाकर पूछताछ करने पर बाकी दो आना भी पूरा हो जाएगा।”

तीन कौड़ी बाबू ने सहसा एक लम्बी सांस ली।

“राजेन बाबू से उनके लड़के के बारे में सुन चुके हो ?”

“कल जो कुछ बताया था, उससे ज्यादा नहीं।”

“मैंने बहुत-कुछ सुना है। वह कम उम्र में ही बुरे रास्ते पर चला गया था। बाप की सड़कची से रुपया चुराया था और पकड़ा गया था। राजेन बाबू ने उसे त्याज्य पुत्र घोषित कर दिया था और घर से निकल जाने को कहा था। इसीलिए वह चला भी गया था। उस समय उसकी उम्र चौबीस वर्ष रही होगी। बिलकुल लापता हो गया। राजेन बाबू ने बहुत खोज-पड़ताल की थी, क्योंकि बाद में उन्हें पश्चात्ताप होने लगा था। लेकिन लड़के ने न कोई समाचार भेजा और न यही के बारे में किसी प्रकार की खोज-खबर ली। राजेन बाबू के एक मित्र ने उसे विलायत में देखा था। यह दस-बारह वर्ष पहले की बात है।”

“तब क्या राजेन बाबू को यह पता नहीं है कि उनका लड़का यहाँ है?”

“नहीं। मुझे लगता है कि उन्हें सूचना न देना ही अच्छा रहेगा। एक तो उस पत्र का धक्का और उस पर...”

तीन कौड़ी बाबू एकाएक चुप हो गए। उसके बाद फेलूदा की ओर मुड़कर बोले, “भेरी अक्ल गुम हो गई है। मुझे जामूसी उपन्यास लिखना बन्द कर देना चाहिए।”

फेलूदा ने हसते हुए कहा, “कहीं आप यह तो नहीं सोच रहे हैं कि प्रवीण मजुमदार ने ही वह पत्र लिखा है?”

“इंगूकटली। मगर...”

तीन कौड़ी बाबू अनमने जैसे हो गए।

वेयरा ने ज्योही हॉट चॉकलेट लाकर मेज पर रखा, तीन कौड़ी बाबू चौकन्ने हो उठे। फेलूदा की ओर मुड़कर बोले, “फणि मित्तिर कैसा आदमी मालूम हुआ?”

फेलूदा ने अचकचा कर कहा, “आपको कैसे मालूम हुआ कि मैं वहाँ गया था।”

“तुम्हारे जाने के थोड़ी देर बाद मैं भी गया था।”

“मुझे आपने रास्ते में देखा होगा?”

“नहीं।”

“फिर?”

डॉक्टर के कमरे के फर्श पर एक बुझा हुआ सिगरेट देखकर मैंने पूछा कि किमने पिया है। डॉक्टर धूम्रपान नहीं करते। तब फणि बाबू ने ब्योरा दिया। उससे तुम्हारे बारे में खयाल हुआ, हालांकि मैंने तुम्हें कभी सिगरेट पीते नहीं देखा था। मगर अभी तुम्हारी उंगलियों में पीसा रंग देखकर समझ में आया कि तुम सिगरेट पीते हो!”



फेलूदा ने तीन कौड़ी बाबू की बुद्धि की प्रशंसा करते हुए कहा, "आपको भी फणि मिस्त्र पर पत्र के विषय में सन्देह हुआ था ?"

"क्यों नहीं होगा ? उसे देखकर उसके प्रति अश्रद्धा नहीं जगती है ?"

"जगती है। पता नहीं, राजेन बाबू उसे प्रथम क्यों देते हैं।"

"यह बात तुम्हें मालूम नहीं है ? दार्जिलिंग आने के कुछ दिनों के बाद राजेन बाबू का घर्म की ओर झुकाव हुआ। तब फणि बाबू ने ही उन्हें गुरु का पता बताया था। एक ही गुरु के शिष्य रहने के नाते उन दोनों में भाई-भाई का रिश्ता है।"

फेलूदा ने पूछा, "फणि मिस्त्र से बातचीत करने के बाद आप किस नतीजे पर पहुँचे ?"

"बातचीत करना तो बहाना मात्र था। असल में पुस्तकों की आलमारी को मैं सरसरी निगाह से देख रहा था।"

"इसलिए कि बंगल, उपन्यास है या नहीं ?"

"तुम ठीक ही कह रहे हो।"

"मैंने भी देखा है। नहीं के बरबर है। और जो हैं, वे बहुत ही पुराने हैं।"

"ठीक ही कह रहे हो।"

"लेकिन फणि डॉक्टर दूसरे आदमी की पुस्तक से भी शब्दों को काटकर पत्र तैयार कर सकता है।"

"ऐसा कर सकता है। तब हाँ, देखने पर वह आदमी बड़ा ही आलसी प्रतीत हुआ। इस काम के लिए वह इतनी कोशिशें करेगा, इस बात पर मुझे विश्वास नहीं हुआ।"

फेलूदा ने कहा, "अबनी घोपाल के बारे में आपकी क्या धारणा है ?"

"मेरा विश्वास है कि वह सरल आदमी नहीं है। बाहरी तौर पर बड़ा ही चालाक है। और पुरानी कलाओं से उसे कोई मतलब नहीं है। उसका असली लालच है रुपये के प्रति। अभी वह पैसा खर्च कर चीजें खरीद रहा है, बाद में विदेशियों के हाथ में बेचकर पाँच गुना लाभ कमाएगा।"

"आपको लगता है कि वह कोई घमकी भरा पत्र लिख सकता है ?"

"उस पर अभी मैंने गहराई से सोचा नहीं है।"

"मैंने एक कारण की खोज की है।"

मैंने अवाक् होकर फेलूदा की ओर देखा। उसकी आँखों में एक चमक थी।

तीन कौड़ी बाबू ने पूछा, "कारण क्या हो सकता है ?"

फेलूदा ने धीमे स्वर में कहा, "जिस दुकान से वे लोग चीजें खरीदा

करते हैं, उसमे आज तीसरे पहर कुछ अच्छे और नए माल आ रहे हैं।”

अब तीन कौड़ी बाबू की आंखों में भी एक चमक तैरने लगी।

“समझ गया। घमकी भरा पत्र पाकर राजेन बाबू अपने मकान पर बंदी जैसे पड़े रहेंगे और इस बीच अबनी घोपाल दुकान में जाकर सब सूट-खसोट लेगा।”

“इंग्रजकटली।”

तीन कौड़ी बाबू चॉकलेट का पैसा चुका कर उठकर खड़े हो गए। हम दोनों भी उठकर खड़े हो गए।

उत्साह और उत्तेजना के कारण मेरी छाती धड़-धड़ कर रही थी। फिर अबनी घोपाल, प्रवीण मजुमदार और फणि मित्रि—इन तीनों पर सदेह किया जा सकता है।

माउंट एवरेस्ट होटल में जाकर पन्द्रह मिनटों के अन्दर ही फेलूदा ने खबर का पता लगा लिया। प्रवीण मजुमदार नामक एक व्यक्ति पिछले पांच दिनों से उस होटल के सोलह नम्बर कमरे में ठहरा हुआ है।

दोपहर में आकाश में बादल छा गए और चार बजे खोरो से बारिश होने लगी। आसमान की रंगत देखकर समझ में आ गया कि बारिश जल्दी घमने वाली नहीं है।

फेलूदा शाम को कॉपी-पेंसिल लेकर बँठ गए और किसी चीज का हिसाब लगाने लगे। मुझे जानने की बड़ी ही इच्छा हो रही थी, पर उससे पूछने का साहम न हुआ। अन्ततः मैं तीन कौड़ी बाबू की पुस्तक लेकर पढ़ने लगा। बड़ी ही रहस्य भरी रोमांचक कहानी है। पढ़ते-पढ़ते राजेन बाबू के पत्र से सम्बन्धित घटना मेरे ध्यान से उतर गई।

जब आठ बजे तो बारिश ने घमने का नाम लिया। किन्तु तब इतनी सरदी पड़ रही थी कि पिताजी ने हमें बाहर जाने नहीं दिया।

दूसरे दिन फेलूदा ने ठेल-ठेलकर मुझे नींद से जगाया, “नठ, उठ, ए तोपसा, उठ।”

मैं घड़फडा कर उठ बँठा। फेलूदा मेरे कानों से अपना मुह सटाकर दात पीसते हुए एक ही सांस में कह गया, “राजेन बाबू का नेपाली नौकर आया था। कह गया कि उन्होंने मुझे अभी तरन्त दुनाया है। बहुत खरूरी काम है। तू अगर जाना चाहता है तो....”

यह भला कोई कहने की बात है !

जब हम पन्द्रह ही मिनटों में राजेन बाबू के घर पर पहुंचे तो उन्हें चुम्के हुए चेहरे में छाट पर लेटे हुए पाया। फणि मजुमदार उनकी नग्न टटोलते हुए छाट की बगल में बँठे हैं और तीन कौड़ी बाबू ऐसी भयंकर

सरदों में भी पंखा भूल रहे हैं।

फणि बाबू जब नाड़ी की परीक्षा कर चुके, राजेन बाबू ने तकलीफ के साथ एक लम्बी साँस ली और बोले, "कल रात, बारह बजने के थोड़ी देर बाद मेरी नींद खुल गई और बिजली की रोशनी में अपने चेहरे के ठीक सामने ही आइ सॉ ए मास्कड फेस।<sup>1</sup>"

मास्कड फेस ! मुस्रोटा लगा चेहरा !

राजेन बाबू ने साम ली। देखा, फणि मित्तिर प्रेसक्रिपशन लिख रहा है।

राजेन बाबू बोले, "उस पर नजर पड़ने पर मैंने चिल्लाने की कोशिश की मगर मेरे गले से आवाज नहीं निकली।"

"आपकी कोई चीज चोरी हुई है?" फेलूदा ने पूछा।

राजेन बाबू बोले, "नहीं; तब हाँ, मेरा यह विश्वास है कि मेरे तकिये के नीचे से चाबियों का गुच्छा निकालने के लिए ही वह मेरी तरफ झुक गया। मेरी नींद खुल जाने के कारण खिड़की से कूदकर... उफ् हॉरिब्ल, हॉरिब्ल !

फणि डॉक्टर ने कहा, "आप उत्तेजित मत होइए। मैं नींद की दवा दे रहा हूँ। आपको कंपलीट रेस्ट की जरूरत है।"

फणि बाबू उठकर खड़े हो गए।

फेलूदा ने अचानक कहा, "फणि बाबू, कल रात आप रोगी देखने गए थे?" आपके क्रीट के पीछे कीचड़ के छीटे कैसे लग गए?"

फणि बाबू ने बिना धवराये कहा, "डॉक्टर का जीवन कैसा होता है, आप जानते ही हैं। दुखियों की सेवा के लिए जब अपना जीवन न्योछावर कर दिया है, पुकार जब कभी आए, निकलना ही होगा—चाहे आंधी हो या पानी बरसे या कि बर्फ ही गिरे।"

फणि बाबू अपनी फीस लेकर चले गए। राजेन बाबू अब सीधे होकर बैठ गए और बोले, "तुम लोगों के आ जाने से अपने आप को स्वस्थ महसूस कर रहा हूँ। मैं बहुत ही धवरा गया था। अब हम बैठक में जाकर बैठ सकते हैं।"

फेलूदा और तीन कौड़ी बाबू राजेन बाबू के हाथ धामकर उन्हें बैठक में से आए।

तीन कौड़ी बाबू ने कहा, "स्टेशन फोन किया था कि किसी तरह यह इन्तजाम हो जाए कि दो दिन बाद मैं रवाना हो सकूँ। रहस्य का पर्दाफास

1. मैंने एक मुस्रोटा लगा चेहरा देखा।

किए बगैर जाने की इच्छा नहीं हो रही है। लेकिन वहां से सूचना मिली कि अगर मैं इस टिकट को कैंसल कराता हू तो दम दिनों के पहले बुकिंग नहीं मिलेगी।”

यह सुनकर मुझे अच्छा ही लगा। मैं चाहता था कि फेलूदा अकेले ही जासूसी का काम करे। तीन कौड़ी बाबू ने फेलूदा का काम पहले ही बहुत-कुछ आसान कर दिया था।

राजेन बाबू बोले, “वात थी कि मेरा नौकर पहरा देगा, मगम मैंने खुद कल दम बजे उसको छुट्टी दे दी थी। उसके घर पर उसका बाप बहुत ही बीमार है, उसकी हालत मरने-मरने पर है।”

फेलूदा ने पूछा, “मुखड़ा कैंसा था, याद है?”

राजेन बाबू बोले, “बिलकुल साधारण नेपाली मुखौटा था। दार्जिलिंग शहर ही में अगर तलाशा जाए तो कम से कम तीन-चार सौ मिल जाएंगे। मेरे इसी कमरे में उस तरह के पाच मुखौटे हैं। वो रहा।”

राजेन बाबू ने जिस मुखौटे की ओर इशारा किया, फेलूदा ने मुझे कल वही चीज खरीद दी थी।”

तीन कौड़ी बाबू ने अब तक ज़पादा बातें नहीं की थी। अब वे बोले, “मेरी राय में अब पुलिस को सूचना भेजनी चाहिए। सुरक्षा भी अब ज़रूरी हो गई है। कल जो कुछ घटित हो चुका है, उसे भ्रजाक के तौर पर नहीं लिया जा सकता है। फेलू बाबू, तुम अपनी मरजी के मुताबिक खोज-पड़ताल जारी रख सकते हो। तुम्हें इसमें कोई अडचन नहीं डालने जा रहा है। लेकिन मैं हर चीज पर गौर करने के बाद कह सकता हूँ कि पुलिस की सहायता लेना ज़रूरी है। मैं बल्कि जा रहा हूँ और जाकर डायरी लिखा आऊंगा। लगता नहीं है कि जाने से कोई खतरा है। मगर राजेन बाबू, आप अपने घंटे को सावधानी से रखे रहिए।”

हम लोग जब उठने-उठने पर थे, फेलूदा ने राजेन बाबू से कहा, “तीन कौड़ी बाबू तो चले जा रहे हैं। इसका मानी यह कि आपका एक कमरा ताली होने जा रहा है। हम लोग अगर आज रात उस कमरे में आकर रहें तो आपको क्या कोई आपत्ति है?”

राजेन बाबू ने कहा, “बिलकुल नहीं। आपत्ति क्या हो सकती है? तुम मेरे अपने संगे जैसे हो। और सब कहने में हज़ं ही क्या, मैं जितना ही बूढ़ा होता जा रहा हूँ, मेरा साहस भी उमी अनुपात से कम होता जा रहा है। बचपन में जो शरारती होता है, बुढ़ापे में उसकी हिम्मत कम हो जाती है।”

तीन कौड़ी बाबू ने फेलूदा ने कहा कि वह उन्हें छोड़ने के लिए स्टेशन

तक जाएगा।

लौटने के बख्त जब हम नेपाल ब्युरिओ शॉप की बगल से जा रहे थे, तब हमारी आँखें दुकान के अन्दर गईं।

देखा, दो आदमी दुकान के अन्दर खड़े होकर माल देख रहे हैं और आपस में बातचीत कर रहे हैं। देखकर लगा, वे दोनों एक-दूसरे से बहुत दिनों से परिचित हैं।

एक तो थे अवनी घोपाल और दूसरा व्यक्ति प्रवीण मजुमदार था। मैंने फेलूदा की ओर ताका।

उसके चेहरे को देखकर ऐसा न लगा कि वह कोई आश्चर्यजनक चीज देख रहा हो।

हम साढ़े दस बजे तीन कौड़ी बाबू को 'गुडब्राइ' कहने स्टेशन पहुँचे। वे हम लोगों के पहुँचने के पाँच मिनट बाद पहुँचे। "चढ़ाई पर चढ़ते-चढ़ते पाँव दुखने लगे हैं, इसीलिए आहिस्ता-आहिस्ता चलकर आना पड़ा।" वास्तव में वे कुछ लंगडा जैसे रहे थे।

नीले रंग के फस्ट क्लास के डिब्बे पर चढ़कर तीन कौड़ी बाबू ने अपना अटँचीकेस खाला और भूरे रंग का एक पैकेट फेलूदा को दिया।

"इसे खरीदने में थोड़ा बख्त लगा। राजेन बाबू ब्युरिओ शॉप नहीं पहुँच सके थे, हालांकि कल सचमुच बहुत ही अच्छी चीजें आई थी। उनमें से एक मामूली जैसी चीज चुनकर मैं उनके लिए ले आया। तुम दोनों मेरी ओर से उनके प्रति शुभेच्छा प्रकट करना और उन्हें यह सामान दे देना।"

फेलूदा ने पैकेट को लेकर कहा, "आप अपना पता बगैर दिए यहाँ से जा रहे हैं। सोचा है, रहस्य का उद्घाटन हो जाए तो अपना सूचित करूँ।"

तीन कौड़ी बाबू ने कहा, "मेरे प्रकाशक का पता मेरी पुस्तक पर लिखा है। उसकी मारफत भेजोगे तो मुझे मिल जाएगा। गुडलक।"

ट्रेन रवाना हो गई। फेलूदा ने मुझसे कहा, "अगर तीन कौड़ी बाबू ने विदेश में जन्म लिया होता तो बहुत-बहुत नाम और पैसा कमाते। इतने सारे अच्छे उपन्यास बहुत ही कम लोगो ने लिखे हैं।"

फेलूदा राजेन बाबू से सम्बन्धित घटना को लेकर दिन भर अलग-अलग स्थानों का चक्कर काटते रहे। मैंने बहुत कहा, मगर वे मुझे अपने साथ नहीं ले गए। शाम के बख्त जब हम राजेन बाबू के घर की ओर जाने लगे तो मैंने फेलूदा से कहा, "कम से कम इतना तो बता दो कि तुम कहा-कहाँ में हो आए हो।"

"दो बार माउन्ट एवरेस्ट होटल", फेलूदा ने कहा, "एक बार फणि मित्रि के घर से, एक बार नेपाल ब्युरिओ शॉप से, एक बार लाइब्रेरी

और फिर कई स्थानों से हो आया हूँ।”

“ओ।”

“तू और कुछ जानना चाहता है?”

“अपराधी कौन मालूम हुआ?”

“अब भी कहने का वक़्त नहीं आया है।”

“किसी पर तुम्हें सन्देह हुआ है?”

“अच्छा जासूस होने के लिए हर किसी पर सदेह किया जाता है।”

“हर किसी का मतलब?”

“मसलन तुम पर!”

“मुझ पर?”

“जिसके पास ऐसा मुखौटा है, वही सदेह का पात्र है—कोई भी आदमी हो सकता है।”

“फिर तुम्ही को कैसे बख़्शा जा सकता है?”

“बेकार की बक-बक मतकर।”

“वाहजी, वाह, तुमने तो मुझे धुरु में बह बताया ही नहीं कि तुम राजेन बाबू को पहचानते हो। इसका मानी यह हुआ कि तुम सत्य को छिपा रहे हो। और अगर तुम चाहो तो मेरा मुखौटा उपयोग में ला सकते हो। वह तो तुम्हारी बगल में ही है।”

“शॉट थप!”

“राजेन बाबू इस वक़्त अच्छे दीखे। यह पूछने पर कि आप कैसे हैं, वे बोले, “दोपहर में काफी अच्छा महसूस कर रहा था। शाम ज्यों-ज्यों बढ़ती जा रही है, अशांति भी त्यों-त्यों बढ़ती जा रही है।”

फेलूदा ने तीन कौड़ी बाबू का दिया हुआ पैसेट राजेन बाबू को दे दिया। उसे खोलने के बाद बुद्ध देव का एक खासा खूबसूरत सिर बाहर निकल आया। उसे देखकर राजेन बाबू की आँखें छलछला आयी। वे रंधे स्वर में बोले, “बहुत ही अच्छी चीज़ है! बहुत ही अच्छी।”

फेलूदा ने पूछा, “पुलिस आई थी?”

“मत पूछो। आकर वेहद जिरह कर गयी। यह नहीं जानता हूँ कि कहा तक पता लगा पाएगी। तब हा, पहरा देने के लिए एक आदमी रहेगा। यही एक निश्चिन्तना की बात है। सच कहने में हज़ं ही क्या, तुम दोनों न भी आते तो काम चल जाता।”

फेलूदा ने कहा, “सैनटोरियम में बड़ा ही शोरगुल रहता है। यहाँ हो सकता है, आपके मामले पर शांति से सोचने का मौका मिले।”

राजेन बाबू ने हंसकर कहा, “मेरा भौकर बड़ी ही अच्छी रमोई पकता

है। आज मुर्गे का मांस बनाने को कहा है। सैनटोरियम में ऐसा खासा नहीं मिलेगा।”

हमारे ठहरने का कमरा हमें दिखाकर राजेन बाबू अपने कमरे में चले गए।

फेलूदा चट से खाट पर लेट गया। सिगरेट जलाकर शहतीर की ओर देखते हुए उसने घुएँ की पांच गुंजलकें बनाईं।

उसके बाद वह कुछ देर तक अधमुँदी आंखों से ताकता रहा। फिर उसने चुप्पी तोड़ी, “फणि मित्तिर कल सचमुच रोगी देखने गए थे। कोर्ट-रोड पर एक पैसे वाला पंजाबी ध्यापारी है। मैंने पता लगाया है। वे साढ़े ग्यारह बजे से साढ़े बारह बजे तक वही थे।”

“फिर फणि मित्तिर अपराधी नहीं है?”

फेलूदा ने धेरे सवाल का जवाब न देकर कहा, “सोलह बरसों तक इंग्लैंड में रहने के कारण प्रवीण मजुमदार बंगला भाषा करीब-करीब भूल चुका है।”

“फिर इस बात की सम्भावना नहीं है कि उसने पत्र भेजा हो।”

“और उसे पैसे की कोई कमी नहीं है। इसके अलावा दार्जिलिंग आकर उसने लेवंगे घुडदौड़ में काफी पैसा कमाया है।”

मैं सास रोकें बैठ रहा। फेलूदा और कुछ कहना चाहता है, यह मैं समझ रहा था।

आधी पी हुई जलती सिगरेट की कैरम की गोटी को स्ट्राइक करने की तरह कमरे से बाहर दस हाथ की दूरी पर फेंककर, फेलूदा ने कहा, “आज चाय के बगीचे के गिलमोर साहब दार्जिलिंग आए हैं। प्लांटारस क्लब में जाकर मैं उनसे मिल आया हूँ। लामा के प्रासाद का एक ही घंटा है और वह है गिलमोर साहब के पास। राजेन बाबू के पास जो है, वह नकली है। अपनी घोषाण को यह बात मालूम है।”

“फिर राजेन बाबू का घंटा वैसा मूल्यवान् नहीं है।”

“नहीं।... और कल रात एक पार्टी में वे प्रवीण मजुमदार के साथ रात नौ बजे से तीन बजे तक शराब पीते रहे और पीकर नदी में घूत हो गए थे।”

“ओ। और मुखौटा पहना हुआ आदमी बारह बजे के थोड़ी देर बाद ही आया था।”

“हां।”

“मेरी छाती का अन्दरूनी हिस्सा खाली-खाली जैसा महगूस हो रहा था।”

मैंने कहा, "फिर ?"

फेलूदा ने कुछ भी न कहा। उसने एक लम्बी [सांस ली और खाट से उठकर खड़ा हो गया। उसकी भौंहो मे इतना बल पड़ सकता है, वह बात मैं जानता ही न था।

कुछ सेकेंडो तक चुपचाप खड़ा रहने के बाद उसने न जाने क्या सोचा और बैठक की ओर चल दिया। जाते वकत मुझसे कह गया, "जरा अकेले रहना चाहता हू। डिस्टर्ब मत करना।"

अब मैं क्या करू! वह जहा लेटा था, वही मैं बिस्तर पर लेट गया।

शाम होने को है! कमरे की बत्ती जलाऊ, मन मे ऐसी इच्छा नहीं हुई। धुली हुई खिड़की से ऑबजरवेटरी हिल की तरफ के भकानो की रोशनी दीख रही है। तीसरे पर माल में एक तरह का शोरगुल मचा रहता है। वह शोरगुल अब शांत होता जा रहा है। घोड़े की टाप सुनाई पड रही है। उसकी आवाज दूर से निकट आती है और फिर शांत हो जाती है।

समय खिसकता जा रहा है। खिड़की से आती हुई शहर की रोशनी जैसे धुंधली होती जा रही है। अब कमरे मे और भी ज्यादा अंधेरा रंग रहा है। लगता है, नींद आ रही है।

पलकें एक-दूसरे से करीब-करीब जुड गई हैं। तभी लगता है, कमरे के अन्दर कोई घुस रहा है।

मुझे इतना डर लगता है कि मैं उस ओर ताकना बन्द कर देता हूं, जिस ओर से वह आदमी घुस रहा है। सांसो को रोके मैं खिड़की की ओर ताकने लगता हू।

लेकिन वह आदमी मेरी ही ओर आकर मेरे सामने खड़ा हो जाता है।

मानो, खिड़की के बाहर फैले शहर को ढंककर अंधेरा मेरे सामने आकर खड़ा हो गया हो।

फिर वह अंधेरा जैसी चीज झुककर मेरी ओर बढ़ आती हैं। अब उसका चेहरा मेरे चेहरे के सामने है—और उस चेहरे पर एक मुसौटा है।

मैं ज्यो ही चिल्लाना चाहता हूं कि अंधेरे का वह शरीर अपने एक हाथ को ऊपर उठाकर अपने चेहरे से मुसौटे को उतार देता है। मुसौटा उतारते ही मेरी दृष्टि फेलूदा पर जाती है।

"वयो जी, तू सो गया था ?"

"उफ... फेलूदा... तुम हो ?"

फेलूदा मेरी स्थिति का पता लगाकर एक कहकहा लगाने जा रहा था, परन्तु एकाएक उसका चेहरा गम्भीर हो गया। उसके बाद वह खाट की



बगल में बैठते हुए बोला, “राजेन बाबू के तमाम मुखौटों को पहनकर देखा था। तू इसे पहन कर तो देख।”

फेलूदा ने मुझे मुखौटा पहना दिया।

“कुछ अस्वाभाविक जैसा लग रहा है?”

“नहीं। बस, मेरे लिए यह कुछ बड़ा है, इतना ही।”

“और कुछ भी नहीं?”

“ज़रा...ज़रा गंध जैसी...”

“किस चीज़ की गंध?”

“चूस्ट की।”

फेलूदा ने मुखौटे को उतारकर कहा, “इम्जैकटली।”

मेरी छाती पुनः घड़कने लगी। मेरे मुँह से निकल गया, “ती—तीन कौड़ी बाबू?”

फेलूदा ने एक निश्वास लेकर कहा, “सबसे ज्यादा मौका उन्हें ही था।

बंगला उपन्यास, अखबार, ब्लेड, गोद—किसी चीज़ की कमी नहीं थी। और तूने ज़रूर ही ध्यान दिया होगा कि आज वे स्टेशन पर लंगड़ा रहे थे। शायद कल खिड़की से बाहर कूदने के कारण ही वैसा कर रहे थे। मगर जो असली रहस्य है, वह यह कि इसका क्या कारण हो सकता है? राजेन बाबू उनका काफी सम्मान करते थे। फिर किस वजह से, किस उद्देश्य से, उन्होंने यह पत्र लिखा था? शायद इसका उत्तर अब नहीं मिलेगा...कभी नहीं।”

रात में कोई दुर्घटना नहीं हुई।

सवेरे हम भोजन-कक्ष में राजेन बाबू के साथ चाय पी रहे थे। तभी नेपाली नौकर एक पत्र लेकर आया। इस बार भी वही नीले रंग का कागज़ था और लिफाफे पर दार्जिलिंग के डाकघर की मुहर।

राजेन बाबू ने उदास चेहरे और कांपते हाथों से पत्र को खोला और फेलूदा के हाथ में थमाकर बोले, “तुम्हीं पढ़ो। मुझे हिम्मत नहीं हो रही है।”

फेलूदा उस पत्र को लेकर जोर-जोर से पढ़ने लगा :

प्रिय राज,

कलकत्ते में शानेश से तुम्हारे मकान की खबर पाकर जब मैंने तुम्हें पत्र लिखा था, उस वक़्त मैं नहीं जानता था कि दरअसल तुम कौन हो। तुम्हारे घर पर आने के बाद जब तुम्हारे बचपन की तसवीर पर मेरी नज़र पड़ी

मैंने कहा, “फिर ?”

फेलूदा ने कुछ भी न कहा। उसने एक लम्बी [सांस ली और साट से उठकर खड़ा हो गया। उसकी भौंहों में इतना बल पड़ सकता है, वह बात मैं जानता ही न था।

कुछ सेकेंडो तक चुपचाप खड़ा रहने के बाद उसने न जाने क्या सोचा और बँठक की ओर चल दिया। जाते वक़्त मुझसे कह गया, “ज़रा अकेले रहना चाहता हूँ। डिस्टर्ब मत करना।”

अब मैं क्या करूँ! वह जहाँ लेटा था, वही मैं बिस्तर पर लेट गया।

शाम होने को है! कमरे की बत्ती जलाऊँ, मन में ऐसी इच्छा नहीं हुई। खुली हुई खिड़की से ऑबज़रवेटरी हिल की तरफ के मकानों की रोशनी दीख रही है। तीसरे पर माल में एक तरह का शोरगुल मचा रहता है। वह शोरगुल अब शांत होता जा रहा है। घोड़े की टाप सुनाई पड़ रही है। उसकी आवाज़ दूर से निकट आती है और फिर शांत हो जाती है।

समय खिसकता जा रहा है। खिड़की से आती हुई शहर की रोशनी जैसे धुँधली होती जा रही है। अब कमरे में और भी ज़्यादा अंधेरा रँग रहा है। लगता है, नींद आ रही है।

पलकें एक-दूसरे से करीब-करीब जुड़ गई हैं। तभी लगता है, कमरे के अन्दर कोई घुस रहा है।

मुझे इतना डर लगता है कि मैं उस ओर ताकना बन्द कर देता हूँ, जिस ओर से वह आदमी घुस रहा है। सांसों को रोके मैं खिड़की की ओर ताकने लगता हूँ।

लेकिन वह आदमी मेरी ही ओर आकर मेरे सामने खड़ा हो जाता है।

मानो, खिड़की के बाहर फँसे शहर को ढँककर अंधेरा मेरे सामने आकर खड़ा हो गया हो।

फिर वह अंधेरा जैसी चीज़ झुककर मेरी ओर बढ़ आती है। अब उसका चेहरा मेरे चेहरे के सामने है—और उस चेहरे पर एक मुसौटा है।

मैं ज्यों ही चिल्लाना चाहता हूँ कि अंधेरे का वह शरीर अपने एक हाथ को ऊपर उठाकर अपने चेहरे से मुसौटे को उतार देता है। मुसौटा उतारते ही मेरी दृष्टि फेलूदा पर जाती है।

“क्यों जी, तू सो गया था ?”

“उफ... फेलूदा... तुम हो ?”

फेलूदा मेरी स्थिति का पता लगाकर एक वहकहा लगाने जा रहा था, परन्तु एकाएक उसका चेहरा गम्भीर हो गया। उसके बाद वह साट की

बगल में बैठते हुए बोला, “राजेन बाबू के तमाम मुखौटों को पहनकर देखा था। तू इसे पहन कर तो देख।”

फेलूदा ने मुझे मुखौटा पहना दिया।

“कुछ अस्वाभाविक जैसा लग रहा है?”

“नहीं। बस, मेरे लिए यह कुछ बड़ा है, इतना ही।”

“और कुछ भी नहीं?”

“जरा...जरा गंध जैसी...”

“किस चीज की गंध?”

“बूहट की।”

फेलूदा ने मुखौटे को उतारकर कहा, “इज्जतकटली।”

मेरी छाती पुनः घड़कने लगी। मेरे मुँह से निकल गया, “ती—तीन कौड़ी बाबू?”

फेलूदा ने एक निश्वास लेकर कहा, “सबसे ज्यादा मौका उन्हे ही था।

बंगला उपन्यास, अखबार, ब्लेड, गोद—किसी चीज की कमी नहीं थी। और तूने जरूर ही ध्यान दिया होगा कि आज वे स्टेशन पर लंगड़ा रहे थे। शायद कल खिड़की से बाहर कूदने के कारण ही वँसा कर रहे थे। मगर जो असली रहस्य है, वह यह कि इसका क्या कारण हो सकता है? राजेन बाबू उनका काफी सम्मान करते थे। फिर किस वजह से, किस उद्देश्य से, उन्होंने यह पत्र लिखा था? शायद इसका उत्तर अब नहीं मिलेगा...कभी नहीं।”

रात में कोई दुर्घटना नहीं हुई।

सवेरे हम भोजन-कक्ष में राजेन बाबू के साथ चाय पी रहे थे। तभी नेपाली नौकर एक पत्र लेकर आया। इस बार भी वही नीले रंग का कागज था और लिफाफे पर दार्जिलिंग के डाकघर की मुहर।

राजेन बाबू ने उदास चेहरे और कांपते हाथों से पत्र को खोला और फेलूदा के हाथ में धमाकर बोले, “तुम्हीं पढ़ो। मुझे हिम्मत नहीं हो रही है।”

फेलूदा उस पत्र को लेकर जोर-जोर से पढ़ने लगा :

प्रिय राजू,

कलकत्ते में जाने से तुम्हारे भकान की खबर पाकर जब मैंने तुम्हें पत्र लिखा था, उस वक़्त मैं नहीं जानता था कि दरअसल तुम कौन हो। तुम्हारे घर पर आने के बाद जब तुम्हारे वधपत्र की तसवीर पर मेरी नज़र पड़ी

तो मुझे इस बात की जानकारी हासिल हुई कि तुम पचास वर्ष पूर्व बांकुड़ा मिशनरी स्कूल में मेरे सहपाठी रह चुके हो। तुम कोई दूसरे नहीं, बल्कि वही राजू हो।

इतने दिनों के बाद भी पुराना आक्रोश भड़क सकता है, यह बात मैं नहीं जानता था। अन्याय के साथ लगड़ी मारकर तुमने मुझे न केवल सौ गज के निश्चित पुरस्कार से वंचित किया था, बल्कि मुझे भरपूर घायल भी कर दिया था। तभी मेरे पिताजी की बदली हो गई और मैं तुमसे बदला नहीं ले सका। तुम्हें भी मेरे मानसिक और शारीरिक कष्टों की जानकारी प्राप्त नहीं हुई। पैरो में प्लास्टर लगवाकर मुझे तीन महीने तक अस्पताल में रहना पड़ा था।

यहां आने पर तुम्हारे जीवन की शांति ने मुझ में अशांति पैदा कर दी। इसीलिए कई दिनों तक तुम्हारे मन में बैचैती पैदाकर तुम्हें मैंने तुम्हारे पुराने अपराध के कारण सजा दी। शुभेच्छा के साथ।

तुम्हारा ही,  
तीन  
(तीन कौड़ी मुखोपाध्याय)

## कैलाश चौधरी का पत्थर

“देख तो, कांड कंसा छपा है।”

फेलूदा ने अपने मनोबैंग से एक विजिटिंग कांड निकालकर मुझे देखने के लिए दिया। देखा, उस पर अंग्रेजी में छपा है : प्रदोप सी० मिटर, प्राइवेट इनवेस्टिगेटर। समझ गया, अब फेलूदा अपनी जासूसी फैलाना चाहता है। और ऐसा वह क्यों न करे ! बादशाही अंगूठी के शतान को फेलूदा ने जिस प्रकार काबू में किया था, उस बात को वह गर्व से डके की चोट पर कह सकता है। उसके बदले उसने सिर्फ एक विजिटिंग कांड छपवाया है।

फेलूदा का नाम अपने आप फैल चुका था। मुझे मालूम है कि इस बीच उसे दो तीन सनसनीधेज घटनाओं के लिए जासूसी करने का ऑफर मिला था, मगर उनमें में कोई उसके मन के लायक न होने के कारण उसने सारे प्रस्ताव ठुकरा दिए थे।

फेलूदा ने कांड को बैंग के अन्दर रख दिया, फिर अपने पांवों को मेज पर फैलाकर कहा, “बड़े दिनों की छुट्टियों में थोड़ा दिमागी काम करना पड़ेगा।”

मैंने कहा, “क्या कोई नया रहस्य तुम्हारे हाथ लगा है ?”

फेलूदा की बातें सुनकर मैं भीषण उत्तेजना महसूस कर रहा था, पर बाहरी तौर पर मैंने इसे जाहिर नहीं होने दिया।

फेलूदा ने अपनी पैट की बगल वाली जेब से एक डब्बा निकाला और उससे थोड़ी-सी मद्रासी सुपारी निकालकर मुंह के अन्दर डालते हुए कहा, “लगता है, तुम बहुत ही उत्तेजित हो उठे हो।”

अयं ! यह बात फेलूदा की समझ में कैसे आ गई ?

फेलूदा ने खुद ही मेरे सवाल का जवाब दिया, “तू सोच रहा है कि मैं कैसे समझ गया। आदमी चाहे अपने मनोभाव को छिपाने की लाख चेष्टा क्यों न करे, अपने बाहरी छोटे से छोटे हाव-भाव के कारण भी वह पकड़ में आ जाता है। जब मैंने वह बात तुम्हसे कही थी, तू एक उबासी लेने जा रहा था। लेकिन मेरी बातें सुनकर तूने अपना मुंह थोड़ा-सा खोलकर ही बन्द कर दिया। तू अगर मेरी बातें सुनकर उत्तेजित नहीं हुआ होता तो

फिर तु स्वाभाविक तौर पर उबासी लेता, बीच ही में रुकता।”

फेलूदा के इस तरह के कारनामे सचमुच मुझे हैरत में डाल देते हैं। उनका कहना था, “अगर पर्यवेक्षण की क्षमता न हो तो जासूस बनना कोई मानी नहीं रखता। इस मामले में जो दो टूक बातें कहनी चाहिए, शॉलंक होम्स कह गया है। हमारा काम इतना ही है कि हम उनका अनुसरण करें।”

मैंने पूछा, “किस काम के चलते तुम्हें दिमागी मशक्कत करनी पड़ेगी, यही बताओ।”

फेलूदा ने कहा, “तुने कैलास चौधरी का नाम सुना है? श्याम पुकुर के कैलास चौधरी का?”

“नहीं, मैंने नहीं सुना है। कलकत्ते में इतने-इतने नामी आदमी हैं, उनमें से कितनों का नाम मैंने सुना है? और अभी मेरी उम्र सोलह वर्ष ही है।”

फेलूदा ने सिगरेट जलाकर कहा, “वे राजशाही के नामी जमींदार थे। कलकत्ते में उनका अपना मकान है। जब पाकिस्तान बना, वे यहां चले आए। कैलास बाबू वकालती करते हैं। इसके अलावा शिकारी होने के नाते उन्होंने नाम कमाया है। शिकार से संबंधित दो पुस्तकें भी लिखी हैं। यही कुछ दिन पहले की बात है, जलदापाड़ा के रिजर्व फॉरेस्ट में एक हाथी पागल होकर ऊधम मचा रहा था। वे वहां गए और उसे मार आए। अखबारों में उनका नाम छपा था।”

“मगर तुम्हें दिमागी मशक्कत क्यों करनी पड़ रही है? उनके जीवन में कोई रहस्य है क्या?”

फेलूदा ने कोई जवाब न देकर अपने कोट के बुक पॉकेट से एक चिट्ठी निकाली और मेरी तरफ बढ़ा दिया।

“पढ़कर देख ले।”

मैंने चिट्ठी को खोलकर देखा। उसमें लिखा था :

सिवा भी,

श्री प्रदीप चंद्र मित्र

महोदय, बिहार

अमृत बाजार पत्रिका में आपका स्वीपन देवकर भेजे तब किया कि आपको चिट्ठी लिखूं। आप उपरोक्त पते पर आकर मुझसे मिलने का कष्ट करें तो आभारी हूंगा। मिलने पर ही कारण बताऊंगा। मैं यह पत्र आपको एक्सप्रेस डेलिवरी से भेज रहा हूँ, अतः यह आपको कल ही मिल जाएगा।

में परसों यानी शनिवार को दस बजे आपकी प्रतीक्षा करूंगा।

भवदीय,  
कैलाशचन्द्र चौधरी

चिट्ठी पढ़ने के बाद मैं बोला, “शनिवार दस बजे का मतलब है आज ही, और एक घंटे के बाद।

फेलूदा ने कहा, “देख रहा हूँ, तुम्हें इम्प्रूवमेंट हो रहा है। तारीख तुम्हें ठीक से याद रहती है।”

इस बीच मेरे मन में एक संदेह पैदा हो चुका है। मैंने पूछा, “तुम्हें ही बुलाया है तो ऐसे में और कोई दूरमरा तुम्हारे साथ...”

फेलूदा ने चिट्ठी मेरे हाथ से लेकर उसे सावधानी से मोड़ा और उसके बाद जेब में रखता हुआ बोला, “चूँकि तेरी उम्र कम है, इसलिए तुम्हें साथ ले जा सकता हूँ। क्योंकि तेरे बड़े-बड़े के तौर पर नहीं लेंगे और तेरे सामने बोलने में उन्हें आपत्ति नहीं होगी। और अगर वे आपत्ति करें तो तू बगल के कमरे में मेरा इन्तज़ार करना, उस बीच हम बातचीत खत्म कर लेंगे।”

मेरा कलेजा घटघटाने लगा है। सोच रहा था, छुट्टियों में क्या करूँ। अब लगता है कि छुट्टियाँ मजे में गुज़र जाएंगी।

जब दस बजने में पाँच मिनट बाकी थे, हम ट्राम से कर्नवालिस स्ट्रीट और श्यामपुकुर स्ट्रीट के मोड़ पर पहुँचे। रास्ते में फेलूदा एक बार ट्राम से नीचे उतरा था और उसने दासगुप्त एंड कम्पनी से कैलास चौधरी द्वारा लिखी गई शिकार की पुस्तक खरीद ली थी। पुस्तक का नाम था : ‘शिकार का नशा’। रास्ते में उसने पुस्तक को उलट-पलट कर देखा। ट्राम से उतरते समय उसे कंधे से लटकती भ्रोली में रखकर बोला, “पता नहीं, ऐसे हिम्मतवर आदमी को जासूस की ज़रूरत क्यों पड़ गई है।”

इक्यावन नम्बर श्यामपुकुर स्ट्रीट, पुराने ज़माने का एक गेटवाला मकान है, जिसे अट्टालिका कहा जाता है। सामने की तरफ के बगीचे, फव्वारे और प्रस्तर मूर्ति को पार करने के बाद जब हमने दरवाज़े पर के कॉलिंग बेल को दबाया, आधे मिनट के दरमियान ही हमें पैरों की आहूट सुनाई दी। दरवाज़ा खुलने पर हमारी नज़र एक भले आदमी पर पड़ी। उनको देखकर मुझे लगा कि यह कैलास बाबू नहीं हो सकते हैं, क्योंकि शेर का शिकार करने वाले आदमी का चेहरा इतना असहाय नहीं हो सकता है। वे मझले कद के मोटे-सोटे, गोरे रंग के आदमी हैं। उम्र तीस से ज्यादा नहीं होगी। आँखों से सरलता और बचपने का भाव टपक रहा

है। देखा, उनके हाथ में एक मैगनिफाइंग ग्लास है।

“आप लोग किससे मिलना चाहते हैं?” उनकी आवाज औरतों की तरह ही महीन और कोमल हैं।

फेलूदा ने कार्ड निकालकर उन्हें दिया और कहा, “कैलास बाबू से मेरा एपॉयंटमेंट निश्चित हुआ है। उन्होंने मुझे पत्र लिखा था।”

उन्होंने कार्ड पर सरमरी दृष्टि डाली और बोले, “अन्दर चलिए।”

दरवाजे से घुमकर हमने सीढ़ियां तय कीं और एक दफ्तरनुमा कमरे के अन्दर पहुँचे। उन्होंने हमसे इन्तज़ार करने को कहा।

“आप लोग ज़रा बैठ जाए, मैं मामाजी को सूचना दे आता हूँ।”

एक बहुत ही पुरानी काले रंग की मेज़ के सामने हम हथे वाली कुर्सियों पर बैठ गए। कमरे के तीनों ओर अलमारियों में पुस्तकें भरी थीं। सामने की मेज़ पर निगाह पड़ते ही मैंने एक मजेदार चीज़ देखी। तीन अदद स्टैम्प एलबम एक के ऊपर एक स्तूपाकार रखे हुए हैं और एक एनबम खली हुई हालत में पड़ी है, जिसमें स्टैम्पों की कतारें हैं। बहुत से सेलोफ़ोन में कुछ स्टैम्प अलग से भी रखे हुए हैं। इसके अलावा स्टैम्प जमा करने वालों की ज़रूरत आने वाली बहुत-सी चीज़ें हैं—जैसे हिज़, चमचा, कंटलॉग इत्यादि। अब समझ में आया कि वह सज़्जन अपने हाथ वाले मैगनिफाइंग ग्लास को इसी काम के लिए उपयोग में लाते हैं और वे ही हैं इन स्टैम्पों के संप्रहर्ता।

फेलूदा भी उन्हीं चीज़ों की ओर ताक रहा था। मगर इसकी बावत हम दोनों में कोई बातचीत हो कि इसके पूर्व ही वह सज़्जन लौट आए थे। उन्होंने कहा, “आप लोग बैठक में घुस कर बैठिए, मामाजी अभी-अभी आ चले।”

बैठक में हमारे सिर के ऊपर बड़े-बड़े झाड़-फानूस लटके थे। हम वहाँ सफ़ेद गिलाफ से ढके एक बड़े सोफ़े पर बैठ गए। कमरे के चारों तरफ पुरानी घनाढ्यता की छाप थी। एक बार मैं अपने पिताजी के साथ बेलाघाट के मलिकों के घर पर गया था। वहाँ भी इसी तरह का असबाब, पेंटिंग, मूर्तियाँ और गुलदस्ते देखे थे। इसके अलावा उस कमरे के फर्श पर रॉयल बेंगल टाइगर की एक खास थी और दीवार पर चार हरिणों, दो चीतों और एक भैंसे के सिर थे।

लगभग दस मिनट बैठने के बाद एक मध्यवयस्क परन्तु जवान जैसे सज़्जन ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। उनका रंग गोरा था, नाक के नीचे पतली मूँछें, देह पर रेंसमी पंजाबी, पाजामा और ड्रेसिंग गाउन।

हम दोनों ने सड़ें होकर उन्हें नमस्कार किया। मुझ पर नज़र पड़ते



ही उनकी भीहों पर बल पड़ गए। फेलूदा ने कहा, “वह मेरा चचेरा भाई है।”

वे हम लोगों की बगल के सोफे पर बैठकर बोले, “आप दोनों क्या साथ-साथ जासूसी करते हैं?”

फेलूदा ने हसकर कहा, “जी नहीं। पर इसे घटना चक्र ही कह सकते हैं कि मेरे जितने भी केस रह चुके हैं, तपेश मेरे साथ था। वह कभी किसी परेशानी में नहीं डालता है।”

“ठीक है।” अवनीश, तुम जा सकते हो। इन लोगों के लिए नाश्ते का इन्तजाम करो।”

स्टैप-संग्रह करने वाले सज्जन दरवाजों के सामने खड़े थे। अपने मामा जी का आदेश सुनकर वे चले गए। कैलास चौधरी ने फेलूदा की ओर ताकते हुए कहा, “आप कुछ अन्यथा मत लें। मेरी चिट्ठी क्या आप अपने साथ ले आए हैं?”

फेलूदा ने मुसकराकर कहा, “मैं प्रदोष मित्र हूं या नहीं, आप इसी की सबूत चाहते हैं न? यह रही आपकी चिट्ठी।”

फेलूदा ने अपनी जेब से कैलास बाबू की चिट्ठी निकालकर उनके हाथ में रख दी। उन्होंने उसे एक बार सरमरी निगाहों से देखा और ‘थैंक्यू’ कहकर फेलूदा को वापस कर दिया।

“इतनी सावधानी बरतनी ही चाहिए। खैर! शायद आप जानते होंगे कि मैं एक शिकारी की हैसियत से प्रसिद्ध हूँ।”

फेलूदा ने कहा, “जी हां।”

कमरे की दीवार पर के जानवरो के मस्तकों की ओर उगली से इशारा करते हुए वे बोले, “इन सबों का शिकार मैंने ही किया है। जब मैं सत्रह साल का था, मैंने बन्दूक चलाना सीखा। उसके पहले एयरगन से चिड़ियों का शिकार करता था। आमने-सामने की लड़ाई में कभी जानवर मुझे मात नहीं कर सका है। लेकिन... जो दुश्मन अदृश्य और अज्ञात रहता है, वह मुझे बड़ा ही परेशान कर मारता है।”

वे फिर चुप हो गए। मेरा कलेजा पुनः घडकने लगा। मुझे यह मालूम है कि अभी वे रहस्य की बातें बताएंगे, मगर वे इतने तीर-तरीके से धीरे-धीरे असली बातों की ओर जा रहे हैं कि सस्पेंस बढ़ता जा रहा है।

कैलास बाबू ने फिर मे कहना शुरू किया, “आपकी उम्र इतनी कम हो सकती है, यह मालूम नहीं था। आपकी उम्र कितनी है?”

फेलूदा ने कहा, “बट्ठाईस।”

“आप पर मैं जिस काम का भार सौंपने जा रहा हूँ, वह आपके लिए

कितना मुमकिन है, पता नहीं। इस-मामले में मैं पुलिस की सहायता नहीं लेना चाहता, क्योंकि इसके पहले एक मामले में सहायता मागने पर मैं घोखा खा चुका हूँ। पुलिस अक्सर असली काम के बजाय बेकार के काम करने लगती है। और यह बात भी सही है कि युवको को मैं अथद्धा की दृष्टि में नहीं देखा करता हूँ मुझे इस बात पर विश्वास है कि कच्ची उम्र में अगर बुद्धि परिपक्व हो तो वह बहुत ही जोरदार हुआ करती है।”

अब कैलास बाबू को चुप रहने का मौका देकर फेलूदा गला खंखार कर बोला, “घटना क्या है अगर वही बताए...”

कैलास बाबू ने इस बात का जवाब न देकर अपनी जेब से एक मुड़ा हुआ कागज निकाला और उसे फेलूदा को देते हुए बोले, “देखिए, इसे पढ़ कर आपकी समझ में क्या बात आती है।”

फेलूदा ने जैसे ही उस कागज को खोला, मैंने झुककर उस पर सरसरी निगाह दौड़ाई। उसमें अंग्रेजी में जो कुछ लिखा था, उसका अर्थ यह है :

‘पाप का भार मत बढ़ाओ। जिस चीज पर तुम्हारा अधिकार नहीं है, उसे तुम आगामी सोमवार को तीसरे पहर चार बजे के पहले ही विक्टोरिया मेमोरियल के दक्षिणी फाटक से बीस हाथ अन्दर, रास्ते की बाईं ओर लिलि के फूलों की पहली कतार के पहले पौधे के नीचे रख जाना। आदेश की अगर अवहेलना करोगे या पुलिस की सहायता लोगे तो इसका नतीजा ठीक नहीं होगा—अपने अनेकानेक शिकारों की तरह तुम भी शिकार में परिणित हो जाओगे। यह बात गांठ में बांधकर रख लो।’

आपकी समझ में क्या बात आती है ?” कैलास बाबू ने गम्भीर स्वर में पूछा।”

फेलूदा कुछ देर तक उस पत्र को ध्यान में देखता रहा, उसके बाद बोला, “हाथ की लिखावट बिगाड़ी गई है, क्योंकि एक ही अक्षर को दो-तीन स्थानों में दो-तीन तरह से लिखा गया है। और नए पंढ के पहले पन्नों पर पत्र लिखा गया है।”

“यह आपने कैसे मालूम किया ?”

पंढ के कागज पर लिखने में उसके बाद के पन्ने पर, पहले की लिखावट की कुछ छाप रह जाती है। यह पन्ना बिलकुल चिकना है।”

“वेरी गुड ! और कुछ ?”

“इसको देखकर और कुछ कहना असंभव है यह पत्र ढाक में मिला था ?”

“हां। पाक स्ट्रीट के ढाकघर की मुहर लगी है। यह पत्र मुझे तीन

दिन पहले मिला है। आज शनिवार है, 20 तारीख।”

फ लूदा ने चिट्ठी लौटाते हुए कहा, “अब मैं आपसे कुछ सवाल करना चाहता हूँ, क्योंकि आपके बारे में सिवा आपकी कहानियों से सम्बन्धित बातों क मुझे कुछ मालूम नहीं है।”

“ठीक है। पूछिए। मुँह में मिठाई डालते हुए पूछिए।”

नीकर चांदी के प्लेट में रसगुल्ला और इमरती रख गया था। फ लूदा को खाने के लिए कहना नहीं पड़ता है। उसने चट से एक पूरे रसगुल्ले को मुँह के अन्दर डालकर कहा, “चिट्ठी में जिस वस्तु का उल्लेख है, वह क्या है?”

कैलास बाबू ने कहा, “बात क्या है बताता हूँ। जिस चीज पर मेरा अधिकार न हो, वैसे कौन-सी चीज मेरे पास है, मैं खुद यह नहीं जानता हूँ। इस घर में जितनी भी चीजें हैं उन्हें या तो मैंने खुद खरीदा है या वे मेरी पत्निका संपत्ति हैं। उनके बीच ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसे बसूलने के लिए मुझे कोई इस तरह का पत्र लिख सकता हो। तब हाँ, मेरे पास एक ऐसी चीज है जिसे आप कीमती और लालच पैदा करने वाली चीज कह सकते हैं।”

“वह चीज क्या है?”

“एक पत्थर।”

“पत्थर?”

“कीमती पत्थर।”

“आपने खरीदा है?”

“नहीं, खरीदा नहीं है।”

“फिर क्या वह पत्निका संपत्ति है?”

“नहीं। यह पत्थर मुझे मध्य प्रदेश के चांदा के पास एक जंगल में मिला था। एक शेर का पीछा करते हुए हम लोग तीन-चार आदमी एक जंगल में घुस रहे थे। आखिर में वह शेर मारा गया। निकट ही एक बहुत पुराने जीर्ण और परित्यक्त देवमंदिर में एक देवता के कपाल पर यह पत्थर जटा हुआ था। संभवतः इसके बारे में हम लोगों से पहले किसी को पता नहीं था।”

“उस पत्थर को आपने ही क्या सबसे पहले देखा था?”

“मन्दिर पर सबकी निगाह गई थी, पर पत्थर को पहले मैंने ही देखा था।”

“उस वार आपके साथ कौन-कौन थे?”

“राइट नामक एक अमेरिकी नौजवान, किशोरीलाल नामक एक

किनासा मुमकिन है, पना नहीं। इग मामने में मैं पुनिम की महायता नहीं सेना थाहता, क्योंकि इग यहने एग मामने में महायता मागने पर मैं घोसा गा चुका हू। पुनिम अगगर अगनी काम के सहाय बेसार के काम करने समगो है। और यह बात भी मही है कि युवकों को मैं अघडा की दृष्टि में नहीं देगा करना हू। मुझे इग बात पर विश्वास है कि कबो उम्र में अगगर बुद्धि परिपक्व हो तो यह बहुत ही जोरदार हूभा करनी है।”

अब कंलास बाबू को पूरा रहने का मोका देकर फेलूदा पना गगार कर बोला, “घटना क्या है अगर यही बताएँ :”

कंलास बाबू ने इग बात का जवाब न देकर अपनी जेब में एक मुद्रा हुआ कागज निकाला और उसे फेलूदा को देने हुए बोले, “देगिए, इसे पड कर आपकी समझ में क्या बात आती है।”

फेलूदा ने जैसे ही उग कागज को सोना, मैंने झुंझकर उम पर मरमरी निगाह दोड़ाई। उगमें अघेड़ी में जो कुछ लिखा था, उगना अर्थ यह है :

‘पाप का भार मत बढ़ाओ। जिन चीज पर तुम्हारा अधिकार नहीं है, उसे तुम आगामी सोमवार को तीसरे पहर चार बजे के पहले ही बिक्टोरिया मेमोरियल के दक्षिणी फाटक में बीस हाथ अन्दर, रास्ते की बाईं ओर लिलि के फूलों की पहली कतार के पहले पौधे के नीचे रख जाना। आदेश की अगर अवहेलना करोगे या पुनिम की सहायता सोगे तो इमका नतीजा ठीक नहीं होगा—अपने अनेकानेक शिकारों की तरह तुम भी शिकार में परिणित हो जाओगे। यह बात गाठ में बाधकर रख लो।’

आपकी समझ में क्या बात आती है ?” कंलास बाबू ने गम्भीर स्वर में पूछा।”

फेलूदा कुछ देर तक उस पत्र को ध्यान से देखता रहा, उसके बाद बोला, “हाथ की लिखावट बिगाड़ी गई है, क्योंकि एक ही अक्षर को दो-तीन स्थानों में दो-तीन तरह से लिखा गया है। और नए पैड के पहले पन्नों पर पत्र लिखा गया है।”

“यह आपने कैसे मालूम किया ?”

पैड के कागज पर लिखने में उसके बाद के पन्ने पर, पहले की लिखावट की कुछ छाप रह जाती है। यह पन्ना बिलकुल चिकना है।”

“वेरी गुड ! और कुछ ?”

“इसको देखकर और कुछ कहना असंभव है यह पत्र डाक में मिला था ?”

“हां। पाक स्ट्रीट के डाकघर की मुहर लगी है। यह पत्र मुझे तीन

दिन पहले मिला है। आज शनिवार है, 20 तारीख।”

फेलूदा ने चिट्ठी लीटाते हुए कहा, “अब मैं आपसे कुछ सवाल करना चाहता हूँ, क्योंकि आपके बारे में सिवा आपकी कहानियों से सम्बन्धित बातों के मुझे कुछ मालूम नहीं है।”

“ठीक है। पूछिए। मुंह में मिठाई डालते हुए पूछिए।”

नौकर चांदी के प्लेट में रसगुल्ला और इमरती रख गया था। फेलूदा को खाने के लिए कहना नहीं पड़ता है। उसने चट से एक पूरे रसगुल्ले को मुंह के अन्दर डालकर कहा, “चिट्ठी में जिस वस्तु का उल्लेख है, वह क्या है?”

कैलास बाबू ने कहा, “बात क्या है बताता हूँ। जिस चीज पर मेरा अधिकार न हो, वही कौन-सी चीज मेरे पास है, मैं खुद यह नहीं जानता हूँ। इस घर में जितनी भी चीजें हैं उन्हें या तो मैंने खुद खरीदा है या वे मेरी पैतृक संपत्ति हैं। उनके बीच ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसे बसूलने के लिए मुझे कोई इस तरह का पत्र लिख सकता हो। तब हाँ, मेरे पास एक ऐसी चीज है जिसे आप कीमती और लालच पैदा करने वाली चीज कह सकते हैं।”

“वह चीज क्या है?”

“एक पत्थर।”

“पत्थर?”

“कीमती पत्थर।”

“आपने खरीदा है?”

“नहीं, खरीदा नहीं है।”

“फिर क्या वह पैतृक संपत्ति है?”

“नहीं। यह पत्थर मुझे मध्य प्रदेश के चांदा के पास एक जंगल में मिला था। एक शेर का पीछा करते हुए हम लोग तीन-चार आदमी एक जंगल में घुस रहे थे। आखिर में वह शेर मारा गया। निकट ही एक बहुत पुराने जीर्ण और परिह्यक्त देवमंदिर में एक देवता के कपाल पर यह पत्थर जटा हुआ था। संभवतः इसके बारे में हम लोगों से पहले किसी को पता नहीं था।”

“उस पत्थर को आपने ही क्या सबसे पहले देखा था?”

“मन्दिर पर सबकी निगाह गई थी, पर पत्थर को पहले मैंने ही देखा था।”

“उस बार आपके साथ कौन-कौन थे?”

“राइट नामक एक अमेरिकी नौजवान, किशोरीलाल नामक एक

कितना मुमकिन है, पता नहीं। इस मामले में मैं पुलिस की सहायता नहीं लेना चाहता, क्योंकि इसके पहले एक मामले में सहायता मागने पर मैं घोखा खा चुका हूँ। पुलिस अक्सर असली काम के बजाय बेकार के काम करने लगती है। और यह बात भी सही है कि युवको को मैं अश्रद्धा की दृष्टि में नहीं देखा करता हूँ, मुझे इस बात पर विश्वास है कि कच्ची उम्र में अगर बुद्धि परिपक्व हो तो वह बहुत ही जोरदार हुआ करती है।”

अब कैलास बाबू को चुप रहने का मौका देकर फेलूदा गला खंसार कर बोला, “घटना क्या है अगर वही बताए...”

कैलास बाबू ने इस बात का जवाब न देकर अपनी जेब से एक मुड़ा हुआ कागज़ निकाला और उसे फेलूदा को देते हुए बोले, “देखिए, इसे पढ़ कर आपकी समझ में क्या बात आती है।”

फेलूदा ने जैसे ही उस कागज़ को खोला, मैंने झुककर उस पर सरसरी निगाह दौड़ाई। उसमें अंग्रेज़ी में जो कुछ लिखा था, उसका अर्थ यह है :

‘पाप का भार मत बढ़ाओ। जिस चीज़ पर तुम्हारा अधिकार नहीं है, उसे तुम आगामी सोमवार को तीसरे पहर चार बजे के पहले ही विक्टोरिया मेमोरियल के दक्षिणी फाटक से बीस हाथ अन्दर, रास्ते की बाईं ओर लिलि के फूलों की पहली कतार के पहले पौधे के नीचे रख जाना। आदेश की अगर अवहेलना करोगे या पुलिस की सहायता लोगे तो इसका नतीजा ठीक नहीं होगा—अपने अनेकानेक शिकारों की तरह तुम भी शिकार में परिणित हो जाओगे। यह बात गाठ में बांधकर रख लो।’

आपकी समझ में क्या बात आती है ?” कैलास बाबू ने गम्भीर स्वर में पूछा।”

फेलूदा कुछ देर तक उस पत्र को ध्यान से देखता रहा, उसके बाद बोला, “हाथ की लिखावट बिगाड़ी गई है, क्योंकि एक ही अक्षर को दो-तीन स्थानों में दो-तीन तरह से लिखा गया है। और नए पंङ के पहले पन्नों पर पत्र लिखा गया है।”

“यह आपने कैसे मालूम किया ?”

पंङ के कागज़ पर लिखने में उसके बाद के पन्ने पर, पहले की लिखावट की कुछ छाप रह जाती है। यह पन्ना बिल्कुल चिकना है।”

“बेरी गुड ! और कुछ ?”

“इसको देखकर और कुछ कहना असंभव है यह पत्र डाक से मिला था ?”

“हां। पार्क स्ट्रीट के डाकघर की मुहर लगी है। यह पत्र मुझे तीन

दिन पहले मिला है। आज शनिवार है, 20 सारीख।”

फल्गुदा ने चिट्ठी लौटाते हुए कहा, “अब मैं आपसे कुछ सवाल करना चाहता हूँ, क्योंकि आपके बारे में सिवा आपकी कहानियों से सम्बन्धित बातों के मुझे कुछ मालूम नहीं है।”

“ठीक है। पूछिए। मुझे में मिठाई डालते हुए पूछिए।”

नोकर चांदी के प्लेट में रसगुल्ला और इमरती रख गया था। फल्गुदा को खाने के लिए कहना नहीं पड़ता है। उसने चट से एक पूरे रसगुल्ले को मुह के अन्दर डालकर कहा, “चिट्ठी में जिस वस्तु का उल्लेख है, वह क्या है?”

कैलास बाबू ने कहा, “बात क्या है बताता हूँ। जिस चीज पर मेरा अधिकार न हो, वैसे कौन-सी चीज मेरे पास है, मैं छुद मह नहीं जानता हूँ। इस घर में जितनी भी चीजें हैं उन्हें या तो मैंने खुद खरीदा है या वे मेरी पत्निक संपत्ति हैं। उनके बीच ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसे बसूलने के लिए मुझे कोई इस तरह का पत्र लिख सकता हो। तब हाँ, मेरे पास एक ऐसी चीज है जिसे आप कीमती और लालच पैदा करने वाली चीज कह सकते हैं।”

“वह चीज क्या है?”

“एक पत्थर।”

“पत्थर?”

“कीमती पत्थर।”

“आपने खरीदा है?”

“नहीं, खरीदा नहीं है।”

“फिर क्या वह पत्निक संपत्ति है?”

“नहीं। यह पत्थर मुझे मध्य प्रदेश के चांदा के पास एक जंगल में मिला था। एक शेर का पीछा करते हुए हम लोग तीन-चार आदमी एक जंगल में घुस रहे थे। आखिर में वह शेर मारा गया। निकट ही एक बहुत पुराने जोर्ण और परित्यक्त देवमंदिर में एक देवता के कपाल पर यह पत्थर जड़ा हुआ था। संभवत इसके बारे में हम लोगों से पहले किसी को पता नहीं था।”

“उस पत्थर को आपने ही क्या सबसे पहले देखा था?”

“मन्दिर पर सबकी निगाह गई थी, पर पत्थर को पहले मैंने ही देखा था।”

“उस बार आपके साथ कौन-कौन थे?”

“राइट नामक एक अमेरिकी नौजवान, किशोरीलाल नामक एक

पंजाबी और मेरा भाई केदार ।”

“आपके भाई भी शिकार किया करते हैं ?”

“करता था, अब करता है या नहीं, पता नहीं, घाट बरसो से वह विदेश में है ।”

“विदेश का मतलब ?”

“स्विट्जरलैंड में । घड़ी का कारोबार करता है ।”

“जब आपको पत्थर मिला था, आप लोगों में उसके लिए छीना-झपटी नहीं हुई थी ?”

“नहीं । क्योंकि उसकी कितनी कीमत हो सकती है, उसके जानकारी मुझे तब हासिल हुई जब मैंने कलकत्ता छोड़ने के बाद उसे जोहरी को दिखाया ।”

“उसके बाद इस समाचार का पता किस-किस को चला था ?”

“मैंने ज्यादा आदमियों से नहीं कहा था । यो भी मेरे सगे-सम्बन्धी ज्यादा नहीं हैं । मैंने अपने दो-चार वकील मित्रों से कहा था और शायद मेरे भानजे अवनीश को यह बात मालूम है ।”

“वह पत्थर आपके घर ही में है ?”

“हां, मेरे कमरे में ही है ।”

“इतनी कीमती चीज को आपने बैंक में क्यों नहीं रखा ?”

“एक बार रखा था । जिस दिन मैंने रखा, उसके दूसरे दिन मोटर-दुर्घटना हुई और मैं मरते-मरते बचा । उसके बाद मेरे मन में यह धारणा बैठ गई कि उसे अगर अपने पास नहीं रखूंगा तो मेरे दुर्भाग्य के दिन आ जाएंगे । यही वजह है कि बैंक से ले आया ।”

“हूं...”

फेलूदा का खाना खत्म हो चुका है । उसकी भौंहों की ओर तकाने पर मेरी समझ में यह बात आई कि उसने सोचना शुरू कर दिया है । उसने पानी पीकर रूमाल से अपना मुंह पोछा और बोला, “आपके घर में कौन-कौन हैं ?”

“मैं हूँ, मेरा भानजा अवनीश है और मेरे तीन पुराने नौकर हैं । इसके अलावा मेरे पिताजी भी हैं, मगर वे दिनकुल नाकाम हो गए हैं । एक नौकर हमेशा उनके लिए तैनात रहता है ।”

“अवनीश बाबू कौन-सा काम करते हैं ?”

“कुछ खास नहीं । टाक-टिकटों का संग्रह करने का उसे नशा है । उसका कहना है कि वह टाक-टिकटों की एक दुकान खोलेगा ।”

फेलूदा ने कुछ देर तक सोचा, फिर मन ही मन कुछ हिसाब लगाते



हुए कहा, आप क्या यही चाहते हैं कि मैं पत्र लिखने वाले का पता लगा दूँ ?”

कैलास वावू जोर से हस पड़े और उसके बाद बोले, “आप समझ ही सकते हैं कि इस उम्र में किसी को इस तरह की अशांति कही अच्छी लग सकती है ! और न केवल चिट्ठी लिखी है बल्कि कल रात टेलीफोन भी किया था। अंग्रेजी में उसी बात को दुहरा गया। उसकी आवाज पहचान में नहीं आई। जानते हैं, क्या कहा ?” अगर मैं निर्धारित स्थान में निर्धारित अवधि के बीच उस चीज को नहीं रख आऊंगा तो वह मेरे घर पर आकर मुझे घायल कर जाएगा। फिर भी मैं इस पत्थर को अपने से अलग करने के लिए राजी नहीं हूँ। इसके अलावा उस व्यक्ति का पत्थर पर कोई न्यायसंगत अधिकार भी नहीं है। हालांकि वह मुझे धमकिया दे रहा है। इससे यह बात समझ में आती है कि वह कोई बदनाम आदमी है। अतः उसे सजा मिलनी ही चाहिए। यह कैसे हो सकता है, इसी पर आप सोचकर तय करें।”

“उपाय तो एक ही है—वाईस तारीख को शाम के चक्कर दिक्कटरिया मेमोरियल के पास छिपकर बैठे रहना। उसे आना ही है।”

“वह खुद नहीं भी आ सकता है।”

“उससे कोई हानि नहीं होने जा रही है। जो भी आकर लिली के पीछे के पास चक्कर काटे, वह अगर असली आदमी न भी हो तो, उसे पकड़ने से असली आदमी के बारे में पता चलना मुश्किल नहीं है।”

“मगर आप असली बात समझ नहीं रहे हैं। वह खतरनाक आदमी भी हो सकता है। जब वह देखेगा कि लिली के पीछे के नीचे पत्थर नहीं है, तब वह क्या रुख अख्तियार करेगा—कहा नहीं जा सकता। उसके बजाय वाईस तारीख के पहले—यानी आज या कल के बीच—अगर यह मालूम हो जाए कि वह आदमी कौन है, तो बहुत ही अच्छा रहे। “इस चिट्ठी और कल के उम टेलीफोन से कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।”

फेल्दाने ने सोफे से उठकर टहलना शुरू कर दिया है। वह बोला, “चिट्ठी में लिखा है, जासूस की सहायता लेने से उसका नतीजा भला नहीं होगा। चाहे मैं कुछ करूँ या न करूँ, मगर आपने बयोंकि मुझे बुलाया है, इसलिए आप पर विपत्ति आने की आशंका है। आप बल्कि इस पर सोच कर देख लें कि आपको हमारी सहायता चाहिए या नहीं।”

सरदी रहने के बावजूद कैलास वावू ने अपने माथे पर छलक आए पसीने की बूंदों को पोछा और बोले, “आपको और आपके भाई को देखकर कोई यह नहीं सोचेगा कि आप लोगों का जासूसी से कोई रिश्ता है। यही

एक सुविधा हैं। चाहे लोगों को आपका नाम मालूम हो, पर वे क्या आपके चेहरे से परिचित है? ऐसा लगता नहीं है। इसलिए उम मामले में मुझे कोई डर नहीं है। आप अगर राज़ी हैं तो इस काम को स्वीकार लें। मैं आपको उचित मेहनताना दूंगा।”

“थैंक यू। तब हाँ, जाने के पहले एक बार उस पत्थर को देखना चाहता हूँ।”

‘ज़रूर-ज़रूर।’

कैलास बाबू का पत्थर उनके शयन कक्ष की अलमारियों में रहता है। हम लोगो ने उनके पीछे-पीछे चलकर पत्थर की बनी सीढ़िया तय की और दो मजिले पर पहुँचे। सीढ़िया एक लम्बे अंधेरे बरामदे में जाकर खत्म हुई हैं। उसके दोनो ओर पकितबद्ध लगभग दस-बारह कमरे हैं। बहुत से कमरों में ताले लगे हैं। चारों तरफ एक निस्तब्धता रँग रही है। वहाँ किसी आदमी के न रहने के कारण थोड़ी-सी आवाज़ होती है तो उसकी प्रतिध्वनि गूँजने लगती है।

बरामदे के अन्तिम हिस्से पर दाहिनी तरफ का जो कमरा है, वह कैलास बाबू का शयन-कक्ष है। हम लोग जब बरामदे के बीचोबीच पहुँचे, देखा, बगल के एक कमरे का दरवाज़ा अघसुला है और उसके अन्दर से एक बहुत ही बूढ़ा आदमी गरदन बढ़ाए, मटमैली आँसों से हमारी ओर ताक रहा है। उसे देखते ही मुझमें एक भय समा गया। कैलास बाबू बोले, “आप ही मेरे पिताजी हैं। उनका दिमाग ठीक नहीं है। हर वक्त इधर-उधर से भाँकते रहते हैं।”

जब हम उनके निकट पहुँचे, बूढ़े की आँसों पर दृष्टि जाते ही मेरा खून पानी हो गया। वे उसी भयावह दृष्टि से कैलास बाबू की ओर ताक रहे थे।

अपने पिता के कमरे को पार कर जब कुछ दूर गए तो कैलास बाबू बोले, “मेरे बाबू जी को सभी पर गुस्सा है। उनकी धारणा है, सभी उनकी अवहेलना करते हैं। दरअसल उनकी देखरेख में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं बरती जाती है।”

कैलास बाबू के कमरे में एक ऊँचा जैसा पलंग देखा। पलंग के सिरहाने कमरे के कोने में आलमारी थी। उसे खोलकर उन्होंने दराज़ से एक नीले रंग का मखमली बक्सा निकाला और बोले, “सन्तराम दास की दुकान से यह बक्सा इसलिए खरीदा था कि इसमें पत्थर रख।”

बक्सा खोलकर उससे नील और हरे रंग से मिलाजुला सीधी के आकार का एक झलमलाता पत्थर निकालकर फेलूदा के हाथ में दिया और

और बोले, "इसे ब्लू बेरिल कहते हैं। ब्राजील देश में मिलता है। हिन्दुस्तान में यह काफी तादाद में नहीं है। कम से कम इतने बड़े आकार के काफी तादाद में नहीं मिलते, यह मैं निःसन्देह कह सकता हूँ।"

फैलूदा ने पत्यर को हाथ में लेकर उलट-पुलट कर देखा और फिर यापस कर दिया। कैलास बाबू ने अपनी जेब से मनीबैंग निकाला। उसके बाद मनीबैंग से दस रुपये के पांच नोट निकालकर फैलूदा की ओर बढ़ाते हुए बोले, "यह बतौर पेशगी है। काम हो जाए तो बाकी पैसा चुका दूंगा।"

'पैक यू' कहकर फैलूदा ने नोटों को अपनी जेब के हवाले किया। अपनी आंखों के सामने मीने उसे पहली बार रुपया कमाते हुए देखा। सीढियों से नीचे उतरते वक़्त फैलूदा बोला, "आपको वह चिट्ठी मुझे सौंपनी होगी। मैं अपनीस बाबू से दो-चार बातें करना चाहता हूँ।"

हम जब नीचे पहुंचे, ठीक उसी समय बँठक में टेलीफोन की घंटी टनटना उठी। कैलास बाबू ने आगे बढ़कर टेलीफोन उठाया।

"हैलो !"

उसके बाद कोई शब्द सुनाई नहीं पड़ा। हम ज्यों ही बँठक के अन्दर पहुंचे, कैलास बाबू को बुझे हुए चेहरे में पाया। उन्होंने टेलीफोन रखकर कहा, "वही आदमी फिर धमकिया दे रहा था।"

"क्या कह रहा था ?"

"अब किसी तरह का सन्देह नहीं रहने दिया।"

"इसका मतलब ?"

"कहा : मैं क्या चाहता हूँ दायद समझ ही रहे होंगे। चांदा के जगल के मंदिर में जो चीज मिली थी, वही चाहता हूँ।"

"और क्या कहा ?"

"और कुछ भी नहीं।"

"आवाज पहचान में आई ?"

"नहीं। तब हां, इतना कह सकता हूँ कि आवाज सुनने में अच्छी नहीं लगती है। आप बल्कि एक बार और इस पर सोचकर देखें।"

फैलूदा ने मुस्कराकर कहा, "मैंने सोच लिया है।"

कैलास बाबू में अलग होकर जब हम अयनीश बाबू के कमरे में गए, उन्हें मेज पर रखी किसी वस्तु को मैगनिफाइंग ग्लास से मनोयोगपूर्वक परीक्षा करते हुए पाया। हमलोग जैसे ही अन्दर गये, वे मेज पर हाथ रखकर खड़े हो गए।

"आइए, आइए !"

फेलूदा ने कहा, "आप डाक-टिकटों के बड़े ही शौकीन मालूम होते हैं।"

अवनीश बाबू की आंखों में एक चमक तैरने लगी। "जी हां, मुझे बस इसी का नशा है। कह सकते हैं, यही मेरा ध्यान-योग-तप है।"

"आप किमी खास देश को लेकर स्पेशलाइज कर रहे हैं या तमाम दुनिया की टिकटें जमा करते हैं।"

"पहले तमाम दुनिया की टिकटें जमा किया करता था, मगर कुछ दिनों से हिन्दुस्तान की टिकटों पर स्पेशलाइज कर रहा हूँ। हमारे इस मकान के दफ्तर में इतनी आश्चर्यजनक और पुरानी टिकटें हैं कि कह नहीं सकता। इतना जरूर है कि ज्यादातर हिन्दुस्तान की हैं। पिछले दो महीनों से हज़ारों पुरानी चिट्ठियों के बड्डों की छानबीनकर मैंने टिकटें जमा की हैं।"

"कुछ अच्छी चीज़ें मिली हैं?"

"अच्छी?" वे कुरसी छोड़कर खड़े हो गए। "आपको बताऊँ तो बात आपकी समझ में आएगी? आपको इस चीज़ में दिलचस्पी है?"

फेलूदा ने मुस्कराकर कहा, "किसी खास उम्र में सभी का उधर झुकाव रहता है। केप आफ गुड होप की एक पेनी, मॉरीशस की दो पेनी और ब्रिटिश गायना की सन् 1856 की विख्यात टिकटों को पाने का सपना मैं भी देख चुका हूँ। दस वर्ष पहले उन चीज़ों की कीमत लगभग लाख रुपये थी। अब और भी ज्यादा हो गई है।"

अवनीश बाबू उत्तेजित होकर करीब-करीब उछल पड़े।

"फिर साहब, आपकी समझ में बात आ जाएगी। आपको दिखाता हूँ। देखिए।"

उन्होंने अपने हाथ के नीचे से एक छोटा-सा रंगीन कागज़ निकालकर फेलूदा को दिया। देखा, लिफाफे से अलग की गई हुई एक टिकट है, जिसका रंग करीब-करीब उड़ चुका है।

"आपने क्या देखा?" अवनीश बाबू ने पूछा।

"फेलूदा ने कहा, "एकाध सौ साल पुरानी हिन्दुस्तानी टिकट है। इस पर विक्टोरिया की तस्वीर है। इस टिकट को पहले ही देख चुका हूँ।"

"देख चुके हैं न? अब इस ग्लास से देखिए।"

फेलूदा ने मैगनिफाइंग ग्लास को अपनी आंखों से लगाया।

"अब क्या दीख रहा है?" उनकी आवाज़ में दबी उत्तेजना का भाव था।

"इसमें छपाई की गलती है।"

“इग्जैकटली।”

“अग्रेजी से जो पोस्टेज शब्द लिखा है, उसमें जो की जगह सी छप गया है।”

अवनीश बाबू ने अपनी टिकट वापस लेते हुए कहा, “इसके परिणाम स्वरूप इसकी कीमत कितनी ठहरती है, जानते हैं?”

“कितनी?”

“बोस हजार रुपया।”

“क्या कह रहे हैं आप!”

“मैंने बिलायत से पत्राचार कर पता लगाया है। स्टैम्प के कैंटलॉग में इस गलती का उल्लेख नहीं है। मैंने ही पहले-पहल इसे ढूँढकर निकाला है।”

फेलूदाने कहा, “बधाइयाँ! मगर आपसे टिकट से अलावा दूसरे मुद्दे पर भी बातचीत करना चाहता था।”

“कहिए।”

“आपके मामा जी—कैलास बाबू—के पास एक कीमती पत्थर है, यह बात आप जानते हैं?”

अवनीश बाबू कुछ सेकेंडों तक जैसे सोचते रहे। उसके बाद बोले, “ओह, हाँ-हाँ। सुना था। कीमती है या नहीं, यह नहीं जानता—तब हाँ, एक बार उन्होंने कहा था कि ‘लकी’ पत्थर है। आप अन्याया न लें। मेरे दिमाग में अभी डाक की टिकटों के अलावा और कुछ नहीं है।”

“आप इस मकान में कितने दिनों से रह रहे हैं?”

“जब से मेरे पिताजी का देहान्त हुआ है, तभी से। लगभग पाँच बरसों से।”

“मामा से आपका मनमुटाव तो नहीं है?”

“आप किस मामाजी की बात कह रहे हैं? मेरे एक मामाजी तो विदेश में हैं।”

“मैं कैलास बाबू की बात कह रहा था।”

“ओह। वे बड़े ही मले आदमी हैं, तब हाँ...”

“तब क्या?”

अवनीश बाबू की भौंहों पर बल पड़ गए।

“कई दिनों से... किसी कारणवश वे कुछ और ही तरह के दीख रहे हैं।”

“कब से?”

“दो-तीन दिनों से। कल मैंने उनसे इस स्टैम्प के बारे में कहा था।

फैलूदा ने कहा, “आप डाक-टिकटों के बड़े ही शौकीन मालूम होते हैं।”

अवनीश बाबू की आंखों में एक चमक तैरने लगी। “जी हा, मुझे बस इसी का नशा है। कह सकते हैं, यही मेरा ध्यान-योग-तप है।”

“आप किमी खास देश को लेकर स्पेशलाइज कर रहे हैं या तमाम दुनियां की टिकटें जमा करते हैं !”

“पहले तमाम दुनिया की टिकटें जमा किया करता था, मगर कुछ दिनों से हिन्दुस्तान की टिकटों पर स्पेशलाइज कर रहा हू। हमारे इस मकान के दफ्तर में इतनी आश्चर्यजनक और पुगती टिकटें हैं कि कट नहीं सकता। इतना जरूर है कि ज्यादातर हिन्दुस्तान की हैं। पिछले दो महीनों से हजारों पुरानी चिट्ठियों के बडलो की छानबीनकर मैंने टिकटें जमा की हैं।”

“कुछ अच्छी चीजें मिली हैं ?”

“अच्छी ?” वे फुरसती छोड़कर खड़े हो गए। “आपको बताऊतो बात आपकी समझ में आएंगी ? आपको इस चीज में दिलचस्पी है ?”

फैलूदा ने मुस्कराकर कहा, “किमी खास उम्र में सभी का उधर झुकाव रहता है। केप आफ गुड होप की एक पेनी, मॉरीशस की दो पेनी और ब्रिटिश गायना की सन् 1856 की विध्यात टिकटों को पाने का सपना मैं भी देख चुका हू। दस वर्ष पहले उन चीजों की कीमत लगभग लाख रुपये थी। अब और भी ज्यादा हो गई है।”

अवनीश बाबू उत्तेजित होकर करीब-करीब उछल पड़े।

“फिर साहब, आपकी समझ में बात आ जाएगी। आपको दिशात हूँ। देंगिए।”

उन्होंने अपने हाथ के नीचे से एक छोटा-सा रंगीन कामूठ निरालकर फैलूदा को दिया। देखा, निफाफों से अलग की गई हुई एक टिकट है, जिसका रंग करीब-करीब उड़ चूरा है।

“आपने क्या देगा ?” अवनीश बाबू ने पूछा।

“फैलूदा ने कहा, “एकमात्र गी सात पुरानी हिन्दुस्तानी टिकट है। दम पर विकटोरिया की तस्वीर है। दम टिकट को पढ़ने ही देग चूरा हू।”

“देग चूके हैं न ? अब दम ग्नाम में देंगिए।”

फैलूदा ने मैगनिफाइंग ग्लास को अपनी आंखों से लगाया।

“अब क्या दीग रहा है ?” उनकी आंखों में दबी उत्तेजना का भाव था।

“दम में छलाई की गमती है।”

“इजैकटली !”

“अंग्रेजी से जो पोस्टेज शब्द लिखा है, उसमें जी की जगह सी छप गया है।”

अवनीश बाबू ने अपनी टिकट वापस लेते हुए कहा, “इसके परिणाम स्वरूप इसकी कीमत कितनी ठहरती है, जानते हैं ?”

“कितनी ?”

“बीस हजार रुपया।”

“क्या कह रहे हैं आप !”

“मैंने विलायत से पत्राचार कर पता लगाया है। स्टैम्प के कैंटलॉग में इस गलती का उल्लेख नहीं है। मैंने ही पहले-पहल इसे ढूँढकर निकाला है।”

फेलूदाने कहा, “बधाइयाँ ! मगर आपसे टिकट से अलावा दूसरे मुद्दे पर भी बातचीत करना चाहता था।”

“कहिए।”

“आपके मामा जी—कैलास बाबू—के पास एक कीमती पत्यर है, यह बात आप जानते हैं ?”

अवनीश बाबू कुछ सेकेंडों तक जैसे सोचते रहे। उसके बाद बोले, “ओह, हां-हा। सुना था। कीमती है या नहीं, यह नहीं जानता—तब हां, एक बार उन्होंने कहा था कि ‘लकी’ पत्यर है। आप अन्याय न लें। मेरे दिमाग में अभी डाक की टिकटों के अलावा और कुछ नहीं है।”

“आप इस मकान में कितने दिनों से रह रहे हैं ?”

“जब से मेरे पिताजी का देहान्त हुआ है, तभी से। लगभग पाच बरसों से।”

“मामा से आपका मतमुटाव तो नहीं है ?”

“आप किस मामाजी की बात कह रहे हैं ? मेरे एक मामाजी तो विदेश में हैं।”

“मैं कैलास बाबू की बात कह रहा था।”

“ओह। वे बड़े ही भले आदमी हैं, तब हां...”

“तब क्या ?”

अवनीश बाबू की भौंहों पर बल पड़ गए।

“कई दिनों से... किसी कारणवश वे कुछ और ही तरह के दीख रहे हैं।”

“कब से ?”

“दो-तीन दिनों से। कल मैंने उनसे इस स्टैम्प के बारे में कहा था।

उन्होंने सुनकर भी जैसे नहीं सुना। हालांकि उन्हें इसमें यों भी दिलचस्पी नहीं है। इसके अलावा उनकी बहुत सारी आदतें बदलती जा रही हैं।”

“मिसाल के तौर पर?”

“जैसे, आमतौर पर वे सवेरे जगकर बगीचे में घूमा-फिरा करते हैं। पिछले दो दिन ऐसा नहीं किया। देर से सोकर उठे। शायद रात में देर तक जगते रहे।”

“इसके कारण का पता चला है?”

“हां। मैं तो एक मजिले में ही सोया करता हूँ। मेरे कमरे के ऊपर जो कमरा है, वह मामाजी का है। आधी रात के समय पहल-फदमी करने की आवाज सुनी थी। उनके गले की आवाज भी सुनाई पड़ी थी। बहुत ही जोर से बोल रहे थे। लगा, झगड़ रहे हैं।”

“किससे?”

“शायद नानाजी से। नानाजी के अलावा और हो ही कौन सकता है। सीढिया उतरने-चढ़ने की आवाज भी सुनी थी। एक दिन सदेह हुआ तो मैं जीने तक गया। देखा, मामाजी छत से दोमजिले पर उतरे। उनके हाथ में बंदूक थी।”

“तब कितना बज रहा होगा।”

“रात के दो बज रहे होंगे।”

“छत पर क्या है?”

“कुछ भी नहीं। सिर्फ एक कमरा है। उसमें कुछ पुरानी चिट्ठियां थी जिन्हें मैंने एकाध महीने पहले निकाल लिया है।”

फेनुदा उठकर खड़ा हो गया। समझ गया, अब उसे कुछ भी न पूछना है।

अवनीश बाबू ने पूछा, “आपने यह सब मुझमें क्यों पूछा?”

फेनुदा ने मुगनराकर कहा, “आपके मामाजी किसी कारणवत् थोड़ा-बहुत बेधेन हैं। मगर आप उनके बारे में चिन्ता मत करें। आप अपने स्टाम्प का धन्या लेकर ही व्यस्त रहा करें। घर की भूमटें पुरु जाए तो एक दिन आकर आपने स्टैंडों का मद्रह देना जाऊंगा।”

कंताग बाबू ने मिसाल फेनुदा ने कहा, “आपको पूरा-पूरा भरोसा नहीं दे पा रहा हूँ, फिर भी इतना अवयव करना चाहता हूँ कि अपनी पिन्ना मुझ पर छोड़ दें। रात में सोने की बोनित करें, उभरी हो तो नींद की दवा भी ले सकते हैं। कृपया छत पर मत जाया करें। हम गहने में तमाम महान आपस में इनने गटे-गटे हैं कि अगर आपका दुग्मन किसी निशट के महान में आकर डेरा-डवा बन दे तो आर पर मुगीदन आ



सकती है।”

कैलास बाबू ने कहा, “मैं छत पर गया था ज़रूर, पर मेरे पास बन्दूक थी। आवाज़ सुनाई पड़ी थी, मगर जाने पर कुछ मिला नहीं।”

“बन्दूक आप हमेशा अपने साथ रखे रहते हैं न ?”

“हां। तब हां, आदमी के दिन की बेचैनी कभी-कभी उसके हाथों की उगलियों में संचारित होती रहती है। क्यादा दिनों तक इस तरह की स्थिति रहेगी तो पता नहीं, मेरे निशाने का क्या नतीजा होगा।”

दूमरे दिन रविवार था। दिन-भर फेलूदा अपने कमरे में चहलकदमी करता रहा। तीमरे पहर चार बजे उसे पेट उतारकर जब पाजामा पहनते देखा तो मैंने पूछा, “तुम बाहर निकल रहे हो ?”

फेलूदा ने कहा, “सोच रहा हूं विक्टोरिया मेमोरियल चलकर एक बार लिलि के पीछों को देख आऊ। तू चलना चाहता है तो चल।”

हम ट्राम से खाना होकर लोअर सर्कुलर रोड पर उतरे और वहां से पैदल चलकर पाच बजे विक्टोरिया मेमोरियल के दक्षिणी फाटक पर पहुंचे। इस ओर लोगो का आना-जाना कम ही रहा करता है। खासतौर पर शाम के वक्त जो भी आदमी आते हैं, वे सामने की ओर ही आया करते हैं—यानी उत्तर की ओर— किले के मैदान की ओर।

हम फाटक से घुसकर जब अन्दाज़ से बीस कदम बढ़े होंगे कि बाईं ओर सचमुच लिलि के पीछों की कतारें देखीं। उसकी पहली कतार के पहले पीछे के नीचे पत्थर रखने को कहा गया था।

लिलि के पीछे जैसी खूबसूरत वस्तु देखकर भी मेरा कलेजा कांपने लगा। फेलूदा ने कहा, “वाचाजी के पास एक दूरबीन थी न ? वही जिसे वे उस बार अपने साथ लेकर दार्जिलिंग गए थे ?”

मैंने कहा, “है।”

हम पन्द्रह मिनटों तक विक्टोरिया मेमोरियल में चहल-कदमी करते रहे। उसके बाद एक टैक्सी से हम सीधे लाइटहाउस के पास पहुंचे। फेलूदा क्या सिनेमा देखना चाहता है ? लेकिन अन्ततः सिनेमा न जाकर वह विपरीत दिशा की एक किताब की दुकान के भीतर घुसा। बहुत सारी पुस्तकों को उलटने-पलटने के बाद फेलूदा ने एक मोटी जिल्द के स्टैम्प-कॉलैंग को उठामा और उसके पन्नों की पलटना शुरू कर दिया। मैं बगल से बुढ़बुढ़ाया, “तुम्हें अवनीश बाबू पर सदेह हो रहा है ?”

फेलूदा ने कहा, “जो आदमी स्टैम्प का इतना शौकीन हो, ...”

कुछ बाहरी पैसा मिल जाए तो उसके लिए यह बात सुविधाजनक होती है।”

मैंने कहा, “मगर हम जब दोमजिले से उतरकर एक मजिले पर आए थे, उस समय जो टेलीफोन आया, निश्चय ही अविनाश बाबू ने नहीं किया था।”

“नहीं। मुसलन्दपुर के आदित्यनारायण सिंह ने उस वक्त टेलीफोन किया था।”

मैं समझ गया कि अभी फेलूदा मज्जाक के मूठ में है, उससे अब इस मुद्दे पर बातचीत नहीं की जा सकती है।

जब हम घर वापस आए, रात के आठ बज चुके थे। फेलूदा ने कोट उतारकर बिस्तरे पर फेंक दिया और बोला, “मैं तब तक हांप-मुह धो रहा हूँ, तू इस बीच कालाम बाबू का टेलीफोन नम्बर खोजकर निकाल ले।”

मैं डायरेक्टरी हाथ में थामे ज्यो ही टेलीफोन के सामने जाकर बैठा, फोन ‘त्रिंग-त्रिंग’ आवाज कर उठा और मैं चिहूंक उठा। फोन मुझे ही उठाना पड़ेगा। मैंने रिसीवर उठाया।

“हैलो !”

“आप कौन हैं ?”

“यह किस तरह की आवाज है ! मैं इस आवाज से परिचित नहीं हूँ। मैंने कहा, “आप किससे बातचीत करना चाहते हैं ?”

कॉन्स और गंभीर स्वर में उत्तर मिला, “बासक होकर भी जामूस के साथ चक्कर क्यों लगाया करते हो ? तुम्हें प्राणों का भय नहीं है ?”

मैं फेलूदा का नाम पुकारकर उसे पुकारना चाहता था, परन्तु मेरे गले से आवाज नहीं निकली। कांपते-कांपते मैं जब टेलीफोन का रिसीवर रखने जा रहा था तो गुनाई पड़ा, “चेतावनी दे रहा हूँ—तुम्हें और तुम्हारे भंडा को भी। नतीजा अच्छा नहीं होगा।”

मैं जटयत् करमी पर बैठा रह गया। फेलूदा ने बायरूम से निकलकर कहा, “यह क्या ? इस तरह चेहरे पर हवाइयां क्यों उड़ रही हैं ? किसका फोन आया था ?”

मैंने शिगी तरह फेलूदा को उग घटना से अवगत कराया। देखा, वह भी गंभीर हो गया। उसके बाद मेरी पीठ पर एक छोन जमाते हुए कहा, “पबरा मत। हम सोगो के साथ पुनिग रहेगी। बिपति में फगने का कोई भय नहीं है। बस एक बार विक्टोरिया मेंमोरियल बनना ही पड़ेगा।”

उग रात अच्छी तरह से नींद नहीं आई। उगचा कारण गिरकें टेलीफोन ही नहीं था; कालाम बाबू के मजान की बहुत सी चीजें बार-बार भांशों के सामने सरनी रहीं—सोहे की रेनिगसगी हुई छन मक जाने वाली गीड़ियां,

दोमंजिले पर का संगमरमर का अंधेरा और लंबा बरामदा और कमरे की फांक में बाहर भाकता हुआ कैलास बाबू के पिता का चेहरा। उन्हें किसी चीज की आवाज सुनाई पड़ी थी ?

सोने के लिए जाने के पहले फेलूदा ने मुझसे एक बात कही थी—  
“जानता है तोपमा, जो लोग चिट्ठियों और टेलीफोन से घमड़ियाँ दिया करते हैं वे अकसर डरपोक हुआ करते हैं।” संभवत उसकी इन बातों की वजह से ही मेरी धाखों में नींद उतर आई।

दूमरे दिन मवेरे फेलूदा ने कैलास बाबू को फोन करके कहा कि वे अपने घर पर निश्चिन्तता के साथ रहें; करने को जो कुछ है, वह फेनुबा ही करेगा।

“क्विटोरिया मेमोरियल कब चलोगे ?” मैंने पूछा।

“कल जिस वकन गया था, ठीक उसी वकत,” फेलूदा ने कहा, “ड्राइंग कॉपी और पेंटिल तेरे पास है न ?”

मैं थोड़ा घबरा गया।

“कसो, उन्हें लेकर क्या करना है ?”

“है या नहीं, यही बता।”

“है।”

“अपने माप से लेना। लिलि के पीछे की विपरीत दिशा में तू तसवीर बनाना—पेड़-पीछे, मेमोरियल की बिल्डिंग या किसी चीज की। मैं तेरा शिक्षक रहूँगा।”

फेलूदा तसवीर बनाने से कहता है : ..... आदमी का वह

..... । इसलिए उसके

जाह कं दिन छोटे हुआ करते हैं। यही वजह है कि हम चार बजने के कुछ पहले ही क्विटोरिया मेमोरियल पहुंच गए। सोमवार को भीड़ बहुत ही कम रहा करती है। तीन अदद पेरामबुलेटर में साहबों के बच्चे हैं, जिन्हें लेकर नेपाली आयाए घूम-फिर रही हैं। वहां सड़ा एक परिवार मारवाड़ी जैसा लगा। इसके अलावा दो-चार बूढ़े हैं। इस तरफ और कोई दूसरा आदमी नहीं है। कम्पाउंड के अन्दर ही, मगर गेट से थोड़े फासले पर, चौरंगी की ओर एक विशाल पेड़ के तले दो पट पहने व्यक्ति दीख पड़े। उनकी ओर इशारा करते फेलूदा ने मुझे अपनी कुहनी से आहिस्ता से धक्का लगाया। मैं समझ गया कि वे ही पुलिस के आदमी हैं। उत लीमें

कुछ बाहरी पैसा मिल जाए तो उसके लिए यह बात सुविधाजनक होती है।”

मैंने कहा, “मगर हम जब दोमजिले से उतरकर एक मजिले पर आए थे, उस समय जो टेलीफोन आया, निश्चय ही अविनाश बाबू ने नहीं किया था।”

“नहीं। मुसलन्दपुर के आदित्यनारायण सिंह ने उस वक्त टेलीफोन किया था।”

मैं समझ गया कि अभी फेलूदा मजाक के मूढ में है, उससे अब इस मुद्दे पर बातचीत नहीं की जा सकती है।

जब हम घर वापस आए, रात के आठ बज चुके थे। फेलूदा ने कोट उतारकर बिस्तरे पर फेंक दिया और बोला, “मैं तब तक हाथ-भूह धो रहा हूँ, तू इस बीच कैलाश बाबू का टेलीफोन नम्बर खोजकर निकाल ले।”

मैं डायरेक्टरी हाथ में धामे ज्यों ही टेलीफोन के सामने जाकर बैठा, फोन ‘त्रिंग-त्रिंग’ आवाज कर उठा और मैं चिढ़क उठा। फोन मुझे ही उठाना पड़ेगा। मैंने रिसीवर उठाया।

“हैलो !”

“आप कौन हैं ?”

“यह किस तरह की आवाज है ! मैं इस आवाज से परिचित नहीं हूँ ! मैंने कहा, “आप किससे बातचीत करना चाहते हैं ?”

कर्कश और गंभीर स्वर में उत्तर मिला, “बालक होकर भी जासूस के साथ चक्कर बयो लगाया करते हो ? तुम्हें प्राणों का भय नहीं है ?”

मैं फेलूदा का नाम पुकारकर उसे पुकारना चाहता था, परन्तु मेरे गले से आवाज नहीं निकली। कांपते-कांपते मैं जब टेलीफोन का रिसीवर रखने जा रहा था तो सुनाई पड़ा, “चेतावनी दे रहा हूँ—तुम्हें और तुम्हारे भैया को भी। नतीजा अच्छा नहीं होगा।”

मैं जड़वत् कुरसी पर बैठा रह गया। फेलूदा ने बाथरूम से निकलकर कहा, “यह क्या ? इस तरह चेहरे पर हवाइया क्यों उड़ रही हैं ? किसका फोन आया था ?”

मैंने किसी तरह फेलूदा को उस घटना से अवगत कराया। देखा, वह भी गंभीर हो गया। उसके बाद मेरी पीठ पर एक धील जमाते हुए कहा, “घबरा मत। हम लोगो के साथ पुलिस रहेगी। विपत्ति में फसने का कोई भय नहीं है। कल एक बार विकटोरिया मेमोरियल चलना ही पड़ेगा।”

उस रात अच्छी तरह से नींद नहीं आई। उसका कारण सिर्फ टेलीफोन ही नहीं था; कैलाश बाबू के मकान की बहुत सी चीजें बार-बार आँसों के सामने तैरती रहीं—लोहे की रेलिंग लगी हुई छत तक जाने वाली सीढ़ियाँ,

दोमंजिले पर का संगमरमर का अंधेरा और लंबा बरामदा और कमरे की फांक में बाहर झांकता हुआ कैलास बाबू के पिता का चेहरा। उन्हें किसी चीज की आवाज सुनाई पड़ी थी ?

सोने के लिए जाने के पहले फेलूदा ने मुझमें एक बात कही थी—  
“जानता है तोपसा, जो लोग बिट्टियों और टेलीफोन से घमकियां दिया करते हैं वे अकसर डरपोक हुआ करते हैं।” समवत उसकी इन बातों की वजह से ही मेरी आंखों में नींद उतर आई।

दूमरे दिन मदेरे फेलूदा ने कैलास बाबू को फोन करके कहा कि वे अपने घर पर निश्चिन्तता के साथ रहें; करने को जो कुछ है, वह फेलूदा ही करेगा।

“विक्टोरिया मेमोरियल कब चलोगे ?” मैंने पूछा।

“कल जिस वक्त गया था, ठीक उसी वक्त,” फेलूदा ने कहा, “ड्राइंग कौंपी और पेंसिल तेरे पास है न ?”

मैं थोड़ा घबरा गया।

“क्यों, उन्हें लेकर क्या करना है ?”

“है या नहीं, यही बता।”

“है।”

“अपने साथ ले लेना। लिनिक के पीछे की विपरीत दिशा में तू तसवीर बनाना—पेड-पीछे, मेमोरियल की बिट्टिंग या किसी चीज की। मैं तेरा शिक्षक रहूंगा।”

फेलूदा तसवीर बनाने में कुशल है। खासतौर पर उस आदमी का वह एक ही क्षण में पोट्रेट बना सकता है, जिसे वह देख चुका है। इसलिए उसके लिए ड्राइंग मास्टर का काम बेनामी जैसा नहीं लगेगा।

जाड़े के दिन छोटे हुआ करते हैं। यही वजह है कि हम चार वजने के कुछ पहले ही विक्टोरिया मेमोरियल पहुंच गए। सोमवार को भीड़ बहुत ही कम रहा करती है। तीन अदद पेरामबुलेटर में साहबों के बच्चे हैं, जिन्हें लेकर नेपाली आयाए धूम-फिर रही हैं। वहां खड़ा एक परिवार मारवाड़ी जैसा लगा। इसके अलावा दो-चार बूढ़े हैं। इस तरफ और कोई दूसरा आदमी नहीं है। कम्पाउंड के अन्दर ही, मगर गेट से थोड़े फासले पर, चौरंगी की ओर एक विशाल पेड के तले दो पट पहने व्यक्ति दीख पड़े। उनकी ओर इशारा करते फेलूदा ने मुझे अपनी कुहनी से आहिस्ता से धक्का लगाया। मैं समझ गया कि वे ही पुलिस के आदमी हैं। उन लोगों

के पास निरचय ही रिवाँलवर होंगे। फेलूदा से पुलिस के कुछ आदमियों की काफी जान-पहचान है, यह बात मुझे पहले से ही मालूम है।

मैंने लिलि के पौधों की कतारों की विपरीत दिशा में, थोड़े फासले पर बैठकर पेंसिल से तसवीर बनाना शुरू कर दिया। इस हालत में कहीं तसवीर बनाने में मन लग सकता है? आँसू और मन कहीं और ही भटकने लगते हैं। फेलूदा बीच-बीच में आकर डाँटता है और पेंसिल से जल्दी-जल्दी कुछ बना देता है। मुझसे दूर हट जाने के बाद ही फेलूदा दूरबीन को अपनी आँखों से लगाकर इधर-उधर ताकता है।

सूर्य अस्त होने को है। पास ही गिरजाघर की घड़ी डिगढांग कर पाँच बजने की सूचना देती है। लोगों की भीड़ कम होती जा रही है क्योंकि थोड़ी देर बाद ही ठंड पड़ने लगेगी। मारवाड़ी परिवार एक बड़ी गाड़ी पर सवार होकर चला जा रहा है। लोअर सरकूलर रोड की तरफ से दफतर लौटने वाली गाड़ियों की भीड़ की शुरुआत हो गई है। बार-बार हानों की आवाज कानों में आ रही है। फेलूदा मेरे पास आता है और घास पर बैठना चाहता है। मगर वह बैठता नहीं है। उसकी आँखें विक्टोरिया मेमोरियल की ओर हैं। मैं भी उस ओर देखता हूँ। मगर फाटक के बाहर सड़क के किनारे भूरे रंग की चादर ओढ़े एक व्यक्ति के असावा और कोई नहीं देखता है। फेलूदा अपनी आँखों में दूरबीन लगाकर कुछ देर तक इधर-उधर देखता है, उसके बाद दूरबीन मेरे हाथ में धमाकर कहता है, "देख।"

"उस चादरधारी व्यक्ति को?"

"हूँ।"

आँखों में दूरबीन लगाते ही वह आदमी जैसे दस हाथ की दूरी पर चला आता है। मैं चौंककर कहता हूँ, "यह क्या, कैलास बाबू खुद आकर सड़े हैं!"

"हां। पल। वह जरूर ही हम लोगों को खोजने के लिए आए हैं। मगर हम खाना छोड़ें कि इसके पहले ही उन्होंने चलना शुरू कर दिया। फाटक के बाहर आने पर कैलास बाबू नहीं देख पड़े।"

फेलूदा ने कहा, "चल, श्यामपुंजुर चल। लगता है कैलास बाबू की गजर हम लोगों पर नहीं पड़ी। हमें न पाकर ये जरूर ही चिन्ता में पड़ गए होंगे।"

अगर टैक्सी मिल जाती तो हम टैक्सी पर ही चलते, किन्तु ऑफिस-टाइम में इसकी सम्भावना नहीं रहती है। इसलिए हम ट्राम पकड़ने के लिए घोरंगी की ओर खाना हुए। सड़कों पर एक-एक कर गाड़ियों की

कई कतारें चल रही हैं। जब हम कैलास बलब के निकट पहुँचे, अचानक एक कांड हो गया, जिसके बारे में सोचने पर अब भी मेरा पसीना छूटने लगता है। बिना कुछ कहे-मुने फेलूदा ने मुझे एक धक्का मारकर सड़क के किनारे फेंक दिया और साथ ही साथ वह खुद भी उछल पड़ा। दूसरे ही क्षण तीव्र गति में जाती हुई एक गाड़ी, तीखी आवाज करती हुई हम लोगों को छूती हुई निकल गई।

“ह्लाट द डेविल !” फेलूदा ने कहा। “गाड़ी का नम्बर...”

किन्तु अब उसका उपाय नहीं था। शाम के अंधेरे में ओर-ओर गाड़ियों की भीड़ में वह गाड़ी खो चुकी है। मेरे हाथ की कॉपी और पेंसिल कहा फिक गई है, इसका कोई पता नहीं। हमने उन चीजों की तलाश में बहत नहीं गंवाया। मैं यह अच्छी तरह समझ रहा था कि यदि ठीक समय पर फेलूदा की समझ में यह बात न आ जाती तो हम निश्चय ही उन गाड़ी के पहियों से कुचल जाते।

ट्राम में फेलूदा रास्ते भर गभीर बैठा रहा। जब हम कैलास बाबू के घर पहुँचे, सीधे उनकी बैठक में चले गए और फेलूदा ने सोफे पर बैठे कैलास बाबू से पहला सवाल किया, “आपकी नजर हम लोगों पर नहीं पड़ी थी ?”

वे सकपका जैसे गए। बोले, “आप लोगों को किस जगह नहीं देख सका था ? आप क्या कह रहे हैं ?”

“आप ब्रिक्टोरिया में मोरियल नहीं गए थे ?”

“मैं ? यह क्या ? मैं तो अब तक अपने शयन-कक्ष में विस्तर पर पड़ा चिन्ता से छटपटा रहा था। अभी-अभी नीचे आया हूँ।”

“फिर क्या आपके कोई जुड़वां भाई है ?”

कैलास बाबू अवाक् जैसे हो गए। उसके बाद बोले, “आपको यह बात मैंने उस दिन नहीं बताई थी ?”

“कौन-सी बात ?”

“केदार के बारे में ? केदार मेरा जुड़वां भाई है।”

फेलूदा सोफे पर बैठ गया। कैलास बाबू का चेहरा उतरा हुआ था। वे थरथराती आवाज में बोले, “आपकी नजर केदार पर पड़ी थी ? वह वहाँ था ?”

“सिवा उनके और कोई हो ही नहीं सकता।”

“सर्वनाश !”

“क्यों ? केदार बाबू का क्या उस पत्थर पर कोई अधिकार था ?”

कैलास बाबू का चेहरा एकाएक बुझ गया। सोफे के हृत्पे पर अपना

सिर टिकाकर उन्होंने लम्बी सांस ली और बोले, "या...या!" केदार की ही नजर पहले-पहल पत्थर पर पड़ी थी। मैंने मंदिर को देखा था, मगर देव-मूर्ति के कपाल पर पत्थर की पहले-पहले केदार ने ही देखा था।"

"उमके बाद?"

"उसके बाद और क्या! एक तरह से डरा-धमकाकर ही पत्थर मैंने ले लिया था। इतना खरूर ही मुझे मालूम था, वह पत्थर अगर मेरे पास रहेगा तो बचा रहेगा, केदार लेगा तो उसे बेच डालेगा और पसे फूट डालेगा। और वह इतना कीमती है यह बात भले ही मुझे मालूम हो गई है, पर केदार नहीं जानता है। सच कहने में हर्ज ही क्या, केदार जब विदेश चला गया तो मेरे मन में निश्चिन्तता का भाव पैदा हो गया था। मगर वहां रहकर हो सकता है उसे कोई खास सुविधा नहीं हुई और यही वजह है कि लौट आया है। हो सकता है वह पत्थर को बेचकर कुछ नया कारोबार करना चाहता हो।"

फेलूदा कुछ देर चुप रहा, उसके बाद बोला, "अब वे क्या कर सकते हैं, यह आप बता सकते हैं?"

कैलास बाबू ने कहा, "पता नहीं। तब हां, उसे एक बार मेरे सामने आना ही है। मैं चूंकि घर से निकला नहीं हूँ और न ही लिलि के पीछे के तले पत्थर रख आया हूँ। ऐसी हालत में वह आएगा ही।"

"नहीं। उमकी कोई जरूरत नहीं पड़ेगी। वह मुझे बगैर बातचीत करने का मौका दिए कुछ करेगा, ऐसा नहीं लगता। और अगर वह बातचीत करने आएगा ही तो सोचता हूँ, पत्थर उसे दे दूँ। मैं सचमुच आपका कृतज्ञ हूँ। आप बिल भोज दीजिएगा, मैं चेक दे दूंगा।"

"आप क्या चाहते हैं कि मैं यहाँ रहकर कोई इन्तजाम करूँ?"

फेलूदा ने कहा, "जीवन खतरे के लिए ही हुआ करता है। पीछे से एक गाड़ी आकर एक तरह से हमें खत्म ही कर गई थी।"

मेरी कुहनी खरा छिल गई थी, मैं अब तक उसे हाथ से ढंककर रखने की कोशिश कर रहा था, लेकिन मैं जब कुरसी से उठने लगा, फेलूदा की नजर उस पर पड़ गई।

"यह क्या है जी, तेरे हाथ में खून देख रहा हूँ।" उसके बाद वह कैलास बाबू की ओर मुड़कर बोला, "आपके घर में डिटॉल या आयोडिन है? इस तरह के जख्म जल्दी सेप्टिक में बदल जाते हैं।"

कैलास बाबू ने धबराकर कहा, "इस्स! कलकत्ते की सड़को की बुरी हालत हो गई है। अबनीश से दरियापत करता हूँ।"



अवनीश बाबू के कमरे के पास जाकर उनसे डिटॉल के बारे में पूछते ही वे अवाक् जैसे हो गए और बोले, "आप तो सातक दिन पहले ही लाए थे। वह क्या खत्म हो गया?"

कैलास बाबू ने सकपकाते हुए कहा, "ओह, बात तो सही है। लो, मुझे याद ही नहीं था। मेरा दिमाग काम नहीं करता है।"

डिटॉल लगाकर जब मैं कैलास बाबू के मकान के बाहर आया तो देखा, फेलूदा कर्नवालिस स्ट्रीट के ट्राम की ओर जाने के बजाय विपरीत दिशा की ओर जा रहा है। मैं कुछ पूछूँ कि इसके पहले ही वह बोल पड़ा, "गणपतिदा से एक बार टेस्ट मैच की टिकट के बारे में कह आऊँ। जब इतना नज़दीक पहुंच चुका हूँ..."

कैलास बाबू के मकान के दो मकान बाद ही गणपति चटर्जी का मकान है। मैंने उसका नाम फेलूदा से सुना है, पर उन्हें देखने का सौभाग्य अब तक मुझे प्राप्त नहीं हुआ था। सड़क के किनारे ही मकान है। दरवाजे को खटखटाते ही बनियाइन के ऊपर पुल ओवर पहने एक मोटे-सोटे सज्जन ने दरवाजा खोला।

"अरे, फेलू मास्टर!" क्या खबर है?

"एक खबर आपको मालूम ही है।"

"वह तो समझ रहा हूँ। मगर तुम अगर सशरीर आकर तकाजे न करते तो भी तुम्हारा काम बन जाता। तुम्हारा अनुरोध कहीं भूल सकता हूँ? जब मैंने कह दिया है कि दूंगा, तो दूंगा ही।"

"आने का अवश्य ही एक दूसरा कारण है। सुनने में आया है, तुम्हारी छत के ऊपर से उत्तरी कलकत्ता का एक बहुत ही अच्छा परिदृश्य दीखता है। एक फिल्म कंपनी के लिए उसे देखना चाहता हूँ।"

"वेभिन्नक सीढ़ी से ऊपर चले जाओ। मैं यहाँ चाम का इन्तजाम करता हूँ।"

चार मजिले की छत पर चढ़कर पूरब की ओर देखते ही कैलास बाबू का मकान दीख पड़ा। एक मजिले के बगीचे से छन तक साफ-साफ दीख रहा है। दो मजिले के एक कमरे में रोगनी जल रही है और उसके अन्दर एक आदमी खट-खट आवाज़ करता हुआ इधर-उधर चहलकदमी कर रहा है। मैं समझ गया कि वे कैलास बाबू के पिताजी हैं। छत के ऊपर छोटा-सा वही कमरा है। कमरे की खिड़की वाली दीवार दीख रही है। दरवाजा संभवतः विपरीत दिशा में है।

दोमंजिले पर एक बत्ती जल उठी। समझ गया कि जीने की बत्ती है। फेलूदा ने अपनी आंखों में दूरबीन लगाई। एक आदमी सीढ़ियाँ चढ़ रहा

है। कौन है ? कैलाश बाबू ! वे कुछ देर तक सड़े रहते हैं, फिर फर्श पर बैठ जाते हैं।

कुछ देर बाद कैलाश बाबू कमरे की बत्ती बुझा देते हैं और नीचे की ओर चले जाते हैं।

फेलूदा ने इतना ही कहा, “गड़बड़ है—गड़बड़।”

फेलूदा जब ऐसी स्थिति में रहते हैं तो मुझे हिम्मत नहीं होती कि उनसे ज्यादा बातचीत करूँ। और-और वक्त चिन्ता में रहने पर वह घबल-कदमी करते रहते हैं, लेकिन आज उन्हें विस्तर पर लेटे छत की ओर ताकते हुए पाया। रात साढ़े नौ बजे वह अपने नोटबुक में कुछ लिखता रहा। वह यह सब अंग्रेजी में लिख रहा था, परन्तु उसके अक्षर ग्रीक के होने के कारण मैं कुछ समझ नहीं पाया। मेरी समझ में इतनी ही बात आई कि कैलाश बाबू के मना करने के बावजूद वह पत्थर के सम्बन्ध में अपना काम चालू रखे हुए है।

सोने में देर हो गई थी, अतः सुबह मेरी आँखें नहीं खुली। जब फेलूदा ने ठेल-ठेलकर जगाया तो मेरी नींद दूर हुई।

‘ए तोपसा, उठ, उठ, श्याम पुकुर चलना है।’

“क्यों ?”

“मैंने फोन किया था। किसी ने उठाया नहीं। लगता है, कोई गड़बड़ी हुई है।”

दस मिनटों के अन्दर ही तैयार होकर हम टैक्सी से श्याम पुकुर की ओर रवाना हो गए। गाड़ी में फेलूदा ने इतना ही कहा, “कितना विचित्र आदमी है ! यदि थोड़ी देर पहले बात समझ में आ जाती तो गड़बड़ी की कोई संभावना नहीं थी।”

कैलाश बाबू के घर पहुँचने के बाद फेलूदा बिना घटी बजाए अन्दर चला गया। यह हमारा सौभाग्य ही था कि दरवाजे खुले हुए थे। सीढ़ियाँ चढ़कर जब हम अवनीश बाबू के कमरे के सामने पहुँचे तो हमारी आँखें पथरा गईं। मेज के सामने एक कुरसी उलटी हुई है और उसकी बगल में अवनीश बाबू पड़े हैं। उनके दोनों हाथ पीछे की ओर बंधे हैं और मुह में रुमाल ठुसा हुआ है। फेलूदा ने घुटने के बल बैठकर आधे मिनट के अन्दर ही हाथ की रस्सी खोल दी और उनके मुँह में ठुसे हुए रुमाल को बाहर निकाल लिया। अवनीश बाबू बोले, “उफ...यैक गॉड !”

फेलूदा ने पूछा, “आपकी यह हालत किसने की है ?”

अवनीश बाबू हांफते-हांफते उठकर बंठ गए और बोले, "मामा ने ! कैलास मामा ने ! मामा का दिमाग गड़बड़ा गया है। उस दिन यह बात आपसे मैंने नहीं कही थी ? सबेरे मैं कमरे में बत्ती जलाकर काम कर रहा था। मामा ने कमरे के अन्दर आते ही बत्ती बुझा दी। उसके बाद माथे पर चोट की। फिर क्या हुआ, मालूम नहीं। कुछ देर पहले मैं होश में आया हूँ। मगर हिल-डुल नहीं पा रहा था। मुंह से आवाज नहीं निकल रही थी। उफ !"

"और कैलास बाबू ?" फेलूदा करीब-करीब विह्ला उठे।

"मैं नहीं जानता।"

फेलूदा एक ही छलांग में कमरे के बाहर चला आया। मैं भी उसके पीछे-पीछे भागा।

बंठक में किसी को न पाकर, तीन-तीन सीढ़ियों को एक-एक कदम में तय करता हुआ फेलूदा दो मजिले पर पहुंचा और हड़बड़ाता हुआ कैलास बाबू के कमरे के अन्दर चला गया। पलंग पर नज़र पड़ते ही यह समझ में आ गया कि यहां को, लेटा हुआ था। मगर अब कमरा खाली था। अलमारी के दरवाजे खुले हुए थे। फेलूदा ने दौड़कर, दरवाजे खोलकर जो चीज बाहर निकाली, वह था मलमल का बही बक्सा। खोलकर देखने पर पता चला, पत्थर ज्यों का त्यों रखा हुआ है।

अब अवनीश बाबू भी यहां आकर उपस्थित हो गए। उनके चेहरे की हालत दयनीय थी। उन पर निगाह पड़ते ही फेलूदा ने पूछा, "छत के कमरे की चाबी किसके पास है ?"

अवनीश बाबू ने सकपकाकर कहा, "वह—वह तो मामाजी के पास है।"

"फिर छत पर चलिए।" इतना कहकर फेलूदा उन्हें धीचता हुआ अपने साथ ले चला।

अंधेरी सीढ़ियां चढ़कर जब हम तीनों छत पर पहुंचे तो देखा, छत का कमरा बाहर से बन्द है। अब फेलूदा की देह की ताकत का मुझे पता चला। दरवाजे से तीन हाथ पीछे हटकर उसने शेर की तरह छलांग लगा कर चार बार अपने कंधे से दरवाजे पर धक्का लगाया और चौथे धक्के में कड़ियां काटियों में साथ उखड़ गईं। दरवाजे खुल चुके थे।

अन्दर अंधेरा रेंग रहा था। हम तीनों कमरे के अन्दर गए। जब धीरे-धीरे आंखें अम्प्यस्त हो गईं तो देखा, एक व्यक्ति अविनाश बाबू की तरह ही बंधी हुई हालत में पड़ा है। यह कौन है ?—कैलास चौधरी या केदार चौधरी ?

फेलूदा ने रस्सी की गाठ खोली और उन्हे अपनी गोद में लेकर वह सीढ़िया उतरने लगा। उसके बाद उन्हें कैलास बाबू के कमरे में लाकर बिस्तर पर लिटाया। वह आदमी फेलूदा की ओर फटी-फटी आंखों से ताकता हुआ बोला, “आपने ही क्या...?”

फेलूदा ने कहा, “जी हाँ! मेरा ही नाम है प्रदोष मित्तिर। शायद आपने ही मुझे चिट्ठी लिखी थी मगर आपसे न तो भेंट हो सकी और न जान-पहचान ही।...अवनीश बाबू, इनके लिए दूध का प्रबन्ध कीजिए।”

मैं अवाक् होकर उस व्यक्ति की ओर ताक रहा था। फिर यही सज्जन कैलास बाबू हैं! वे तकिए से टिककर सीधे बैठ गए और बोले, “देह में ताकत थी, इसीलिए जिन्दा बच गया। दूसरा कोई होता...इन चार दिनों के दरमियान...”

फेलूदा ने कहा, “आप उत्तेजना में मत आएं।”

कैलास बाबू ने कहा, “कुछ बताना ही होगा! नहीं तो मामला साफ-साफ आपकी समझ में नहीं आएगा। आपसे मुलाकात हो तो कैम! जिस दिन आपको मैंने चिट्ठी भेजी, उसी दिन उसने कैद कर लिया। सो भी चाय में दवा मिलाकर मुझे बेहोश करके। वरना देह की ताकत से वह मुझे अपने वश में नहीं कर सकता था।”

“और उसी दिन से वे कैलास बाबू बनकर बैठ गए थे!”

कैलास बाबू ने दुःख के साथ माथा हिलाते हुए कहा, “गलती मेरी ही है। लबा-चोड़ा हाकना जैसे हम लोगोंके रक्त में समा गया है। मैंने जबलपुर के मार्केट में पचास रुपए में एक पत्थर खरीदा था। पता नहीं क्या दुर्बद्धि आई कि चांदा के जंगल के देव मंदिर की कहानी बुनकर केदार को मैंने हैरत में डाल दिया। उसी दिन से उसने पत्थर के प्रति लोभ पैदा हो गया। वह मेरे सौभाग्य को बरदाश्त नहीं कर पाता था। मेरा बहन-कुछ बरदाश्त नहीं कर पाता था। शायद वह सोचता था—हम दोनों जुड़वा भाई हैं, आँखों से देखने पर दोनों में कोई अन्तर नहीं है, फिर भी मेरा गुण, मेरा उपाजंन और मेरा भाग्य उसके गुण, उपाजंन और भाग्य में पीछे क्यों रहे? वह खुद बेपरवाह और रेकलेस था। एक बार जाली नोट बनाने के मुकदमे में फस चुका था। मैंने ही उसे किसी तरह बचाया था। मुझसे ही कर्ज लेकर वह विलायत गया था। मैंने सोचा, विपत्ति टली। यही सात दिन पहले—पिछले मंगलवार को—घर लौटने पर मैंने पत्थर का गुम पाया। उसके बारे में याद ही नहीं था। नौकरो को मैंने मारा-पीटा, परन्तु कोई नतीजा नहीं निकला। बृहस्पतिवार की सुबह आपके पास पत्र भेजा। उसी दिन रात में वह आया। बाजार में पूछताछ करने पर उसे

पता चला था कि उस पत्थर की कीमत कुछ भी नहीं है, हालांकि उसने लाख रुपये का सपना देखा था। गुस्से से वह पागल हो गया। उसे रुपये की जरूरत थी—कम-से कम बीस हजार रुपये की। उसने मुझे मांगा। मैं सहमत नहीं हुआ। इस पर उसने मुझे बेहोश कर कंदी बना लिया। कहा, जब तक मैं रुपया नहीं दूंगा तब तक वह मुझे छोड़ेगा नहीं। इस बीच वह कैलास चौधरी बनकर बंठा रहेगा और अदालत नहीं जाएगा। छुट्टी लेकर बैठ रहेगा।”

फेलूदा ने कहा, “जब मैं आपको चिट्ठी पाकर यहाँ आया, तब से कठिनाई महसूस करने लगे। यही वजह है कि हमें दस भिन्ट तक बिठाकर रखा और उस बीच उन्होंने एक घमकी भरी चिट्ठी और काल्पनिक शत्रु की कल्पना की। अगर वे ऐसा न करते तो हम सन्देह होता। मेरे रहने से विपत्ति की आशंका थी। यही वजह है कि टेलीफोन पर घमकी देकर और हमें गाड़ी से दबाने की कोशिश कर उन्होंने हमें अपने रास्ते से हटाना चाहा।”

कैलास बाबू की भौंहों पर बल पड़ गए। वे बोले, मैं सोच रहा हूँ कि केदार अचानक मुझे इस तरह छोड़कर कैसे चला गया। कल रात तक मैं उसे रुपया देने के लिए राजी नहीं हुआ था। वह क्या खाली हाथ ही चला गया?”

अवनीश बाबू कब दूध लेकर आ चुके थे, यह बात हमारे ध्यान में आई ही नहीं थी। अचानक उनकी चिल्लाहट सुनकर हम चिट्ठक उठे।

“वे खाली हाथ क्यों जाने लगे? मेरी टिकट—मेरी कीमती विक्टोरिया की टिकट लेकर वे चलते बने हैं।”

फेलूदा ने फटी-फटी आंखों से अवनीश बाबू का ओर ताकते हुए कहा, “यह क्या लेकर चलते बने?”

“हा ले गए हैं। केदार मामा मुझे कंगाल बनाकर चल दिए।”

“आपने उस टिकट की कीमत कितनी बताई थी?”

“बीस हजार।”

“मगर”... फेलूदा ने अवनीश बाबू की ओर झुककर धीमे स्वर में कहा,

“कंटलॉग जो बताता है, उसके अनुमार कीमत पचास रुपये से अधिक नहीं है।”

“अवनीश बाबू का चेहरा एकाएक लटक गया।

फेलूदा ने कहा, “आपमे भी चौधरी वंश का रक्त है। है न? आप भी शायद बात को चढ़ा-बढ़ाकर कहना पसन्द करते हैं।”

अवनीश बाबू का चेहरा बच्चे के चेहरे जैसा रुआसा हो गया वे बोले, "कहिए क्या करू! तीन बरसो तक चार हजार गदं से भरी चिट्ठियों को उलटने-पलटने के बाद भी एक अच्छी टिकट नहीं मिली। इसीलिए न, झूठ कहकर लोगो को हैरत में डालने से थोडा-बहुत आनन्द मिलता है।"

फेलूदा ने ठहाका लगाते हुए अवनीश बाबू की पीठ पर एक धौल जमाया और कहा, "परवा नही। अपने केदार मामा को जो छुआया है, उस पर सोचते ही आपको आनन्द मिलेगा।... खैर, अब दमदम हवाई अड्डे पर जरा फोन करके देख। यह अन्दाज करके कि केदार बाबू भागेगे एयर इण्डिया को जब मैंने फोन किया तो पता चला, आज ही के लिए उन्होने, बुकिंग कराई है। चूकि वहा पुलिस रहेगी, अत भागने का कोई उपाय नही है। सौभाग्य कहिए कि तपेश की कुहनी छिल गई थी। डिटॉल में संबंधित बातो के कारण ही उन पर मुझे पहल-पहल सदेह हुआ था।

केदार बाबू की गिरफ्तारी में कोई परेशानी नही हुई थी। अवनीश बाबू को भी उनकी पचास रुपये की टिकट वापस मिल गई थी। फेलूदा को जितना पंसा मिला उससे हम लोगो ने तीन दिन तक रेस्तरा में खाना-खाया और दो सिनेमा देखे। फिर भी उनकी जेब में कुछ रुपए रह ही गए।

आज तीहरे पहर घर-पर हम चाय पीने बैठे तो मैंने फेलूदा से कहा, "मैंने सोचकर एक चीज दूढ निकाली है। वह ठीक है या नही, बतालोगे?"

.'तूने क्या सोचा है?'

"मुझे लगता है, कैलास बाबू के पिताजी की समझ में यह बात आ गई थी कि केदार बाबू कैलास बाबू बनकर बैठ गए हैं। और यही वजह है कि वे उनकी ओर इम तरह घूर रहे थे। पिता निश्चय ही अपने जुडवे लडके के बीच के अन्तर को समझ जाता है। है न यह बात?"

"इस मामले में अगर ऐसी बात न भी हो तो कोई बात नही, मगर तुम्हारा और मेरा विचार ठीक ही है। इस वजह से मैं तुम्हें सम्मानित करने जा रहा हू।" यह कहकर फेलूदा ने मेरे प्लेट में से एक जलेबी उठाकर अपने मुह के अन्दर डाल ली।







राजपाल एण्ड सन्ज, द्वारा संचालित  
साहित्य परिषार  
के सदस्य बनकर रियायती मूल्य  
पर मनपसन्द पुस्तकें मंगाइए और अपनी  
निजी लायब्रेरी बनाइए  
विशेष छूट तथा फ्री डाक-व्यय की सुविधा  
नियमावली के लिए लिखें :



साहित्य परिषार

राजपाल एण्ड सन्ज,  
1590, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट,  
दिल्ली-110006